सेठिया जैनग्रन्थालय पुस्तक न. ३२



श्री वीतरागाय नमः

श्रीसामायिकसूत्र.

(शब्दार्थ और भावार्थ समेत)

संशोधक —

लिंबडी सम्प्रदायके सुप्रसिद्ध शतावधानी
पंडित मुनिश्री रत्नचन्द्जी स्वामीजी.

अनुवादक:—

धर्मचन्द्रजी तत्पुत्र भैरोदानजी
तत्पुत्र जेठमल सेठिया.
(बीकानेर-निवासी.)

प्रथमावृत्ति
५००० प्रत
मूल्य दो आना.



वीर सं. २४५०.
विक्रम स १९८०
ई. स. १९२४.

सूचना.

सर्व जैनबंधुओंको विदित हो कि सेठियाजैनग्रन्थालय तरफसे छपती हुई सब पुस्तकें विना मूल्य दी जातीथीं, जिससे हरकोईके पास एकसे अधिक एकही विषयकी पुस्तक पहूंच जाया करतीथी, इससे कइएक आसातना भी होतीथी और पीछेसे जरुरीआतवालें जनोंको नहीं मिलती थी, इस वारेमें हमको वहुत जनोंने पत्रद्वारा सूचना की है और रुवरुभी कहा है। जिससे आगामी छपनेवाले सब पुस्तकोंकी किमत लागतमात्रसेभी कम रखनेका नियम रखा गया है और उसका जो दाम आवेगा वह इस ज्ञानवृद्धिमें ही लगा दिया जायगा.



छप रही है.

प्रकरण (थोकडा संग्रह) भा. २-(लींबडीसमदायके पं. मुनिश्री उत्तमचंदजी स्वामीजी कृत)

कर्त्तव्यकौमुदी मूल श्लोकवद्ध-(शतावधानी पं. मुनिश्री रत्नचंदजी स्वामीजी कृत)

प्रस्तार रत्नावली-इसमें गगिया अणगारका भांगा, श्रावकव्रतका भांगा, और आनुपूर्वीका भागा इत्यादि विषयको शतावधानी पं. मुनिश्री रत्नचदजी स्वामीजीने विस्तारपूर्वक वनाया है

जैन बालोपदेश-(पं. मुनिश्री ज्ञानचन्द्रजी पंजाबी विनिर्मित)

प्रस्तावना.

प्रत्येक जीवमात्र अविच्छिन्न सुख और परमशान्तिकी अभिलाषा करते है, इसलिये ही दरेक मनुष्य पृथक् पृथक् मार्गको स्वीकार कर सुखका ही खोज कर रहे है, असह्य दुःखोंसे अत्यन्त परीश्रम करते हुए क्षणिक भी सुख प्राप्त हुआ या न हुआ कि पुनः दुःखका प्रादुर्भाव हो जाता है, परंतु शुद्ध और सच्चा परिश्रम किये विना अविच्छिन्न सुख प्राप्त होता नहीं है। सुखका समुद्र अपनी पास होने परभी ज्ञानरूपी दीपकके अभावसे ही सव परिश्रम निष्फल होता है, यही कारणसे ज्ञानी पुरुषोंने अखंड सुख क्रमशः प्राप्त होनेका सुगम और सरल रास्ता सामायिक व्रत द्वारा ही वंधा हुआ है, इससे चंचल और अव्यवस्थित मनोव्यापार शान्त होकर आत्मा कुच्छ अपूर्व आनन्दका भोक्ता वनता है।

आर्त्त और रौद्रध्यानका त्याग कर सम्पूर्ण सावद्य (पापमय) कार्योंसे निवृत्त होना और एक मुहूर्त्त पर्यन्त [illegible] त्तिको समभावमें रखना, इसका नाम सामायिक व्रत [illegible] वश्यकनि[illegible] क्तिमें भी कहा है कि राग और द्वेषके [illegible] र [illegible] यस्थभाव में रहना अर्थात् सवके [illegible] ल्य [illegible] ना सामायिकव्रत है।

के [illegible] —१ सम्यक्त्वसामायिक—

शुद्ध समकित याने सद्देव सद्गुरु और सद्धर्मको पहीचान कर मिथ्यात्वका त्याग करना। २ श्रुतसामायिक–समभाव प्राप्त हो ऐसे ज्ञानका अभ्यास एक स्थान पर करना। ३ चारित्रसामायिक–इसके दो भेद है, देशविरति और सर्वविरति। अंतरमुहूर्त्तसे लेकर इच्छा मुजब समभावमें काल व्यतीत करना यह देशविरति सामायिक है, यह गृहस्थोंके लिये है। आगार रहित सब प्रकारका और जिंदगी तकका महाव्रत लेना यह सर्वविरति सामायिक है, यह व्रत साधु मुनिराजके लिये है।

सामायिक यह मनको स्थिर रखनेकी अपूर्व क्रिया है, आत्मिक अपूर्व शान्ति प्राप्त करनेका संकल्प है, परमपद पानेका सरल और सुखद रास्ता है, पापरूप कचरेको भस्मीभूत करनेका यंत्र है, अखडानन्द प्राप्त करनेका गुप्तमंत्र है, दुःखसमुद्रको तीरनेका श्रेष्ठ जहाज है और अनेक कर्मोंसे मलिन हुआ आत्माको परमात्मा वनानेका सामर्थ्य योगिक क्रिया (सामायिकक्रिया) ही है। यह क्रिया करनेसे आत्मामें रहा हुआ दुर्गुणों नाश हो कर सद्गुणों प्राप्त होते है और परमशान्तिका अनुभव होता है। शास्त्रकारने भी कहा है कि—

दिवसे दिवसे लक्खं देइ सुवन्नस्स खंडियं एगो।
एगो पुण सामाइयं करेइ न पहुप्पए तस्स ॥ १ ॥

अर्थ—कोई मनुष्य प्रत्येक दिन एक एक लाख खंडी सुवर्णका दान दे और कोई एक सामायिक ही करे। इन दोनों मेंसे एक सामायिक करनेवालाकी बराबर हमेशा बहुत सुवर्णका दान देनेवाला होता नहीं है ॥१॥ पुण्यकुलक ग्रन्थमें कहा है कि—

बाणवइ कोडीओ लक्खा गुणसट्ठी सहस्स पणवीस।
नवसयपणवीसजुया सतिहाअडभाग पलियस्स ॥२॥

अर्थ—शुद्ध सामायिक करनेवाला ९२५९२५९२५⅜ इतने पल्योपमवाला देवगतिका आयुष बांधता है ॥ २ ॥ फिर भी कहा है कि—

सामाइयं कुणंतो समभावं सावओअ घडियदुगं।
आउ सुरेसु बंधइ इत्तिअमित्ताइं पलिआइ ॥३॥

अर्थ—दो घडी सामायिक को करनेवाला श्रावक पल्योपमवाला देवगतिका आयुष्य बांधता है ॥ ३ ॥ अन्य तपश्चर्या आदिसे समता भाववाला सामायिक शास्त्रकारने श्रेष्ठ कहा है—

तिव्वतवं तवमाणो जं न विणिट्ठवइ जम्मकोडीहिं।
तं समभाविअ चित्तो खरेइ कम्मं खणद्धेण ॥४॥

अर्थ—जो मनुष्य करोडों जन्म पर्यन्त तीव्रतप करते हुए भी कर्मोंका क्षय नहीं करता है, वह यदि एक समभावसे सामायिकव्रत करे तो अर्द्ध क्षणमें ही नाश करता है ॥ ४ ॥ पुनः कहा है कि—

जे केचि गया मोक्खं जेविय गच्छंति जे गमिस्संति।
ते सव्वे सामाइअप्पभावेणं मुणेयव्वं ॥ ५ ॥

अर्थ—जो कोई मोक्षमें गये, जा रहे हैं और जायगें वे सब सामायिकका ही माहात्म्य जानना ॥ ५ ॥ फिर भी कहा है कि—

किं तिव्वेण तवेणं किं च जवेणं किं चरित्तेणं ।
समयाइविण मुक्खो नहु हुओ कहवि नहु होइ॥६॥

अर्थ—चाहे जैसे तीव्र तप करे, जाप जपे या द्रव्य चारित्रका ग्रहण कर परंतु समभाव विना मोक्ष किसीका हुआ नहीं, होता नही और होगा भी नहीं ॥ ६ ॥

ऐसा सामायिक का उत्कृष्ट माहात्म्य है, वस्तुतः सामायिक यह मोक्षका अंग है । इस तरहका सामायिक उदय आना महादुर्लभ है, शास्त्रकारने भी कहा है कि देवता भी अपने अन्तःकरणमें समभाव प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं कि एक मुहूर्त्तमात्र सामायिकव्रत जो उदय आ जावे तो मेरा देवपन सफल हो । यदि मानव भव पाकर भी सामायिक न उदय आवे तो उनका मानवभव भी निष्फल समझना चाहिये। सामायिकव्रत लेकर वैराग्य और शान्तरसकी वृद्धि करने वाले पुस्तकें वांचना या सुनना, धार्मिक पुस्तकें पढना या विचारना, कायोत्सर्ग करना या मनकी एकाग्रता के लिये आनुपूर्वी गुणना, इत्यादि निरवद्य कार्य करना श्रेयः है ।

मनको समभावमें रखना यही एकाग्रता या स्थिरता है, इसकी उन्नतिके लिये मन वचन और काय ये तीनों योगों की विशेष शुद्धि करना बहुत जरुरी है।

मनःशुद्धि—पवित्र क्रियारूप क्यारीमें ज्ञानरूपी जलका सिंचन करनेसे उत्पन्न हुआ जो समभावरूपी कल्पवृक्ष, उसको शुद्ध (पवित्र) भूमि की जरुरत है और वही भूमि एक मन ही है, अशुद्ध और चंचलमन पौद्गलिक विलासमें भ्रमण कर कर्मका बंध करता है, इसलिये ही मनको बंध और मोक्षका कारण कहा है, इसलिये प्रथम मानसिक चंचलता को दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये, तबही मनकी स्थिरता होकर आत्मिक आनंदका अनुभव होता है और अपनी पास ही रहा हुआ आत्मिक सद्गुणरूप सूर्यका प्रकाश होता है, जिससे राग द्वेप भय शोक मोह माया आदि अंधकार अपने आप दूर हो जाते हैं, रागादि मनोविकार शान्त हो जानेसे मानसिक भूमिका शुद्ध हो जाती है।

वचनशुद्धि—सामायिक में वचन को गुप्त रखना या वचनसमिति रखकर बोलना चाहिये, कोई भी तरहसे सांसारिक कार्यमें आदेश या उपदेश न हो ऐसा ख्याल अवश्य रखना चाहिये, यदि वचन बोलना हो तो सत्य, पथ्य, प्रिय, मधुर, किसीको नुकसान न पहुंचे ऐसा और हितकारक निरवद्य ही बोलना। परंतु मायावाला—कपटयुक्त, सत्या-

सत्यसे मिश्र, न्यूनाधिक, कर्कश, कठोर, हानिकारक और सावद्य वचन नहीं बोलना।

कायशुद्धि—शरीर और इंद्रियों द्वारा पूर्वोक्त विचारों को क्रियामें (आचारमें) रख सकते है, शास्त्रोंमें आचारशुद्धि के लिये कहा है कि बाह्य आचारसे अंतरशुद्धिका स्मरण रहता है। शरीर शुद्धि के साथ वस्त्रोंकी उपकरणोंकी और स्थान की शुद्धिका संबंध होनेसे ये हरेक पदार्थों पवित्र याने शुद्ध होना चाहिये। गृहस्थी मनुष्योंको बाह्य शुद्धिसें आंतरिक शुद्धिका आधार माना है, यही बात लक्षमें रखकर शास्त्रमें जो जो क्रियाएं कही है वे यथा विधिसे पालन करना।

आत्मसिद्धि की अभिलाषावाले पुरुषोंको प्रथम तो गीतार्थी तत्त्वज्ञानी और बहुसूत्री मुनि महात्मा के वचनामृतोंका श्रवण करना जिससे सद्ज्ञान की प्राप्ति होती है। उसके बाद त्याग करने योग्य पदार्थोंका त्याग (पच्चक्खाण) करना और स्वीकार करने योग्य का स्वीकार करना। त्याग करने योग्य का त्याग करनेसें संयम होता है, इस संयमसें नया पाप आता रूक जाता है और पूर्वके पापोंको तपश्चर्या आदिसे क्षय करना। जब पूर्वके कर्मों तपसे क्षय हो जाते है तब कर्म रहित अक्रिय हो कर आत्मा सिद्धिपदको पाता है। इस लिये सामायिक करनेवाले सद्गुरु समीपे श्रवण कर या शास्त्रद्वारा उसका स्वरूप वांचकर यथा विधिसे यह व्रत स्वीकार करना। यह व्रत लेने बाद पीछेसे

अपना मनुष्य या बालक विक्षेप करे, या कोई ऐसा कार्य छोडकर आवे कि जिससे मन व्यग्र रहा करे, ऐसा न होना चाहिये। सामायिक में मूल्यवाली चीज वस्तु पासमें नहीं रखना, या अलग मन खिंचाय ऐसे स्थान पर भी नहीं रखना। जैसे कि-सोने का बट्टन, घडीयाल, छडी, छत्री, चूद, कपडा आदि मूल्यवाली चीजें ऐसे स्थान पर नहीं रखना कि जिससे मन उस स्थान पर खिंचाया करे, ऐसे प्रकारकी स्थितिवाले पुरुषों को और सगर्भा (पूर्णमासवाली) छोटा बालकवाली और रजःस्वला होनेका संभव हो ऐसी स्त्रीको भी सामायिक में विवेक रखना। सब धर्म क्रियाओं मानसिक शुद्धि और आत्मिक उन्नति करनेके लिये ही है, जैन धर्मकी सब क्रियाओं में मुख्य क्रिया सामायिक है।

इस पुस्तकमें परमानन्दस्तोत्र हिन्दीसानुवाद लिखकर पीछेसे सामायिकसूत्रका प्रारंभ होता है. सामायिकके ८ सूत्रोंका शब्दार्थ और भावार्थ सरल हिन्दी भाषामें लिख दिया है। इसके बाद सामायिकके बत्तीसदोष, काउस्सग के १९ दोष, सामायिक लेनेकी और पारनेकी विधि, श्रीमहावीरप्रभुकी स्तुति आदि विषय देकर पीछेसे सामायिक सूत्रका शब्दकोष हिन्दी और गुजराती भाषामें लिखदिया है जिससे यह सामायिक पढनेवालेको विशेष उपयोगी है।

यह पुस्तक शुद्ध करनेके लिये लींबडी सम्प्रदायके प्रसिद्ध व्याख्यानदाता शतावधानी पंडित मुनिश्री रत्नचंद्रजी

स्वामीने परिश्रम लिया है, जिससे मैं उनका बड़ा आभार मानता हूं।

यह लघु पुस्तक आप सज्जनोंके सामने उपस्थित करनेका मुझे शुभावसर प्राप्त हुआ है। आप लोग इनका लाभ उठाकर मेरा परिश्रमको सफल करेंगें। और प्रुफ सुधारनेमें कहीं दृष्टिदोषसे भूलचूक रहगई हो तो सुधारकर वांच लेवे और मेरेको सूचना करे कि जिससे दूसरी आवृत्तिमें सुधार दी जाय। ॐ शान्तिः!

सेठिया जैनग्रंथालय
बीकानेर (राजपूताना)

भैरोदान जेठमल सेठिया.



परमानन्दस्तोत्र.

परमानन्दसंयुक्तं, निर्विकारं निरामयम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम् ॥१॥

अर्थ—परमानन्द युक्त, रागादि विकारोंसे रहित, ज्वरादिक रोगोंसे मुक्त और निश्चय नयसे अपने शरीर में ही विराजमान परमात्मा को ध्यान हीन पुरुष नहीं देख सक्ते है ॥ १ ॥

अनन्तसुखसम्पन्नं, ज्ञानामृतपयोधरम् ।
अनन्तवीर्यसंपन्न, दर्शनं परमात्मनः ॥ २ ॥

अर्थ—अनन्त सुखविशिष्ट, ज्ञानरूपी अमृतसे भरे हुए समुद्रके समान और अनन्तवल युक्त परमात्मा का स्वरूप समझना चाहिये ॥ २ ॥

निर्विकारं निराबाधं, सर्वसंगविवर्जितम् ।
परमानन्दसम्पन्नं, शुद्धचैतन्यलक्षणम् ॥ ३ ॥

अर्थ—रागादिक विकारों से रहित, अनेक प्रकार की सासारिक बाधाओंसे मुक्त, सम्पूर्ण परिग्रहों से शून्य, परमानन्द विशिष्ट, शुद्ध केवलज्ञान रूप चैतन्य ही परमात्मा का लक्षण मानना चाहिये ॥ ३ ॥

उत्तमा स्वात्मचिन्ता स्यान्मोहचिन्ता च मध्यमा ।
अधमा कामचिन्ता स्यात् परचिन्ताऽधमाऽधमा॥४॥

अर्थ—अपनी आत्मा के उद्धार की चिंता करना उत्तम चिंता है, प्रकृष्टमोह अर्थात् शुभरागवश दूसरे जीवों के भले करने की चिन्ता करना मध्यम चिन्ता है। कामभोग की चिन्ता करना अधम चिंता है, और दूसरों के अहित करने का विचार करना अधमसे भी अधम चिन्ता है ॥४॥

निर्विकल्पसमुत्पन्नं, ज्ञानमेव सुधारसम् ।
विवेकमंजलिं कृत्वा, तत्पिबन्ति तपस्विनः ॥५॥

अर्थ—आत्मा के असली स्वरूप को बिगाडने वाले अनेक प्रकार के संकल्पविकल्पों को नाश करने से जो ज्ञानरूपी अमृत उत्पन्न होता है उसको तपस्वी महात्मा ही विवेकरूपी अञ्जुलि से पीते है ॥ ५ ॥

सदानन्दमयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः ।
स सेवते निजात्मानं, परमानन्दकारणम् ॥ ६ ॥

अर्थ—जो पुरुष निश्चयनयसे सदा ही आत्मा में रहने वाली परमानन्द दशा को जानता है वही वास्तव में पण्डित है. और वही पुरुष अपनी आत्मा को परमानन्द का कारण समझकर वास्तव में उसकी सेवा करनी जानता है ॥६॥

नलिन्यां च यथा नीरं भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।
अयमात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति निर्मलः ॥७॥

अर्थ—जैसे कमल के पत्ते के ऊपर पानी की बूंद कमलसे हमेशा भिन्न रहती है, उसी प्रकार यह निर्मल

आत्मा शरीर के भीतर रहकर भी स्वभाव की अपेक्षा शरीर से सदा भिन्न ही रहता है अथवा कार्मणशरीर के भीतर रहकर भी कार्मणशरीरजन्य रागादि मलों से सदा अलिप्त रहता है ॥७॥

द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं, भावकर्मविवर्जितम् ।
नोकर्मरहितं विद्धि, निश्चयेन चिदात्मनः ॥८॥

अर्थ—इस चैतन्य आत्मा का स्वरूप निश्चय करके ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्मों से शून्य, रागादिरूप भावकर्मों से रहित व औदारिक वैक्रियिक आदि शरीररूप नोकर्मों से रहित जानना चाहिये ॥ ८ ॥

आनन्दं ब्रह्मणोरूपं निजदेहे व्यवस्थितम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति जात्यन्धा इव भास्करम्॥९॥

अर्थ—इस परम ब्रह्ममय परमात्मा के आनन्दमय स्वरूपको शरीर के भीतर ही मोजूद होते हुए भी ध्यानहीन पुरुष नहीं जानते है, जैसे जन्मांध पुरुष सूर्य को नहीं जानता है ॥ ९ ॥

तद्ध्यानं क्रियते भव्यैर्मनो येन विलीयते ।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं चिचमत्कारलक्षणम् ॥१०॥

अर्थ—मोक्ष के इच्छुक भव्य जीवों को वही ध्यान करना चाहिये जिसके द्वारा यह चंचल मन स्थिर होकर परमात्मस्वरूप में विशेष रूप से लीन होजावे, क्योंकि जिस

समय इस प्रकार का ध्यान होता है उसी समय चैतन्य चमत्कारस्वरूप परमात्मा का साक्षात् दर्शन होता है ॥१०॥

ये ध्यानशीला मुनयः प्रधाना–
स्ते दुःखहीना नियमाद्भवन्ति ।
सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्त्वं,
व्रजान्ति मोक्षं क्षणमेकमेव ॥११॥

अर्थ—जिन मुनियों का उत्तम ध्यान करना ही स्वभाव पड़गया है, वे मुनिपुंगव कुछ काल में ही नियम से सर्व दुःखों से छूटकर अर्हंत स्वरूप परमात्मपद को प्राप्त हो जाते हैं और बाद में अयोग केवली होकर क्षणमात्र में अष्ट कर्म रहित अविनश्वर मोक्षधाम में सदा के लिये जा विराजमान हो जाते हैं ॥ ११ ॥

आनन्दरूपं परमात्मतत्त्वं,
समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तम् ।
स्वभावलीना निवसन्ति नित्यं,
जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम् ॥१२॥

अर्थ—निज स्वभाव में लीन हुए मुनि ही परमात्मा के समस्त संकल्पो से रहित परमानन्दमय स्वरूप में निरन्तर तन्मय रहते हैं। और इस प्रकार के योगी महात्मा ही आगे कहे जाने वाले परमात्मस्वरूपको स्वयं जानते हैं ॥१२॥

चिदानन्दमयं शुद्धं, निराकारं निरामयम् ।
अनन्तसुखसम्पन्नं, सर्वसङ्गविवार्जितम् ॥१३॥

लोकमात्रप्रमाणोऽयं, निश्चये न हि संशयः।
व्यवहारे तनूमात्रः, कथितः परमेश्वरैः ॥१४॥

अर्थ—श्री सर्वज्ञदेव ने परमात्मा का स्वरूप चिदानन्दमय शुद्ध-रूप रस गंध स्पर्शमय आकार से रहित, अनेक प्रकार के रोगों से सर्वथा शून्य, अनन्त सुखविशिष्ट व सर्व परिग्रह रहित बताया है। और निश्चय नय से आत्मा व परमात्मा का आकार लोकाकाश के समान असंख्यात प्रदेशी, तथा व्यवहारनय से कर्मोदय से प्राप्त छोटे व बड़े शरीर के समान बताया है ॥१३॥१४॥

यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गतविभ्रमः।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्वा, निर्विकल्पसमाधिना ॥१५॥

अर्थ—इस प्रकार उपर कहे हुए परमात्मा के स्वरूप को योगी पुरुष जिस समय निर्विकल्पसमाधि के द्वारा (ध्याता-ध्येय-ध्यान की अभिन्नरूप एक अवस्था होजाने से) जान लेता है, उस समय उस योगी का चित्त रागादिजन्य आकुलता से रहित स्थिर होता है और उसकी आत्मा को अनादि काल से भ्रम में डालने वाले अज्ञानरूपी पिशाच का नाश होजाता है। उस समय वह निश्चल योगी ही आगे कहे जाने वाले विशेषणों से विशिष्ट होजाता है ॥ १५ ॥

स एव परमं ब्रह्म, स एव जिनपुंगवः।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः ॥ १६ ॥

स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मनः ॥ १७ ॥

स एव सर्वकल्याणं, स एव सुखभाजनम् ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमः शिवः ॥ १८ ॥

स एव परमानन्दः, स एव सुखदायकः ।
स एव परचैतन्यं, स एव गुणसागरः ॥ १९ ॥

अर्थ—अर्थात् वह परमध्यानी योगी मुनि ही परब्रह्म, तथा घातिकर्मों को जितने से जिन, शुद्धरूप होजाने से परम आत्मतत्व, जगतमात्र के हित का उपदेशक होजानेसे परमगुरु, समस्त पदार्थों के प्रकाश करने वाले ज्ञानसे युक्त होजाने से परमज्योति, ध्यान ध्याता के अभेदरूप होजाने से शुक्लध्यान रूप परमध्यान, व परमतप रूप परमात्मा के वास्तविक स्वरूपमय होजाता है तथा वही परमध्यानी मुनि ही सर्वप्रकार के कल्याणों से युक्त, परम सुख का पात्र, शुद्धचिद्रूप, परमशिव कहलाता है और वही परमानन्दमय, सर्वसुख दायक, परमचैतन्य आदि अनन्तगुणों का समुद्र होजाता है ॥१६–१७–१८–१९॥

परमाह्लादसम्पन्नं, रागद्वेषविवर्जितम् ।
अर्हन्तं देहमध्ये तु, यो जानाति स पण्डितः ॥२०॥

अर्थ—इस प्रकार उपर कहे हुए परम आनंदयुक्त, रागद्वेष शून्य, अर्हन्त देव को जो ज्ञानी पुरुष अपने देहरूपी

मन्दिर में विराजमान देखता व जानता है, वही पुरुष वास्तव में पण्डित कहा जा सक्ता है ॥ २० ॥

आकाररहितं शुद्धं, स्वस्वरूपव्यवस्थितम् ।
सिद्धमष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनम् ॥ २१ ॥

अर्थ—इसी प्रकार अर्हन्त भगवान के स्वरूप की तरह सिद्ध परमेष्ठी के स्वरूप को रूपरसादिमय आकार से रहित, शुद्ध, निज स्वरूप में विराजमान, रागादिविकारों से शून्य कर्ममल से रहित, क्षायिकसम्यग्दर्शन, केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनन्तवीर्य, सूक्ष्मत्व, अव्यावाध, अगुरुलघुत्व और अवगाहना रुप अष्टगुणों से सहित चिंतवन करे ।

तत्सदृशं निजात्मानं, प्रकाशाय महीयसे ।
सहजानन्दचैतन्यं, यो जानाति स पण्डितः ॥२२॥

अर्थ—सिद्ध परमेष्ठी के समान तीनलोक व तीनों कालवर्ती समस्त अनंत पदार्थों का एक साथ प्रकाश करने वाले केवलज्ञान आदि गुणों की प्राप्ति के लिये जो पुरुष अपनी आत्मा को भी परमानन्दमय, चैतन्य चमत्कार युक्त जानता है, वही वास्तव में पण्डित है ॥ २२ ॥

पांपाणेपु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथा घृतं ।
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये तथा शिवः ॥२३॥
काष्टमध्ये यथा वह्निः, शक्तिरूपेण तिष्ठति ।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः ॥२४॥

अर्थ—जिस प्रकार सुवर्ण–पाषाण में सोना गुप्तरीति से छिपा रहता है, तथा दुग्ध में जैसे घृत व्याप्त रहता है, तिलमें जैसे तैल व्याप्त रहता है, उसी प्रकार शरीर में परमात्मा को विराजमान समझना चाहिए। अथवा जैसे काष्ट के भीतर अग्नि शक्ति रूप से रहती है, उसी प्रकार शरीर के भीतर शुद्ध आत्मा को जो पुरुष शक्ति रूपसे विराजमान देखता है, वही वास्तव में पण्डित है॥२३--२४॥

॥ शुभं भूयात् ॥



॥ ॐ श्रीवीतरागाय नमः ॥

॥ सामायिक सूत्र ॥

(अर्थ-सहित)

॥ मंगलाचरण ॥

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिता ।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुल वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्रीधृतिकीर्तिकान्तिनिचयः श्रीवीर ! भद्रं दिश ॥१॥
अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता ।
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ॥
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः ।
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मङ्गलम् ॥ ॥२॥

१—नमस्कार सूत्र ।

णमो अरिहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो आयरियाणं । णमो उवज्झायाणं । णमो लोए सव्वसाहूणं । एसो पंच णमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥१॥

शब्दार्थ—

णमो—नमस्कार

अरिहंताणं—अरिहंतोंको,
णमो—नमस्कार
सिद्धाणं—सिद्धोंको,
णमो—नमस्कार
आयरियाणं—आचार्योंको,
णमो—नमस्कार
उवज्झायाणं—उपाध्यायोंको,
णमो—नमस्कार
लोए—लोकमें (ढाई द्वीपमें वर्त्तमान)
सव्वसाहूणं—सब साधुओंको,
एसो—यह
पंच—पांच परमेष्ठियोंको किया हुवा
णमुकारो—नमस्कार
सव्व—सब
पाव—पापोंका
पणासणो—नाश करने वाला है,
च—और
सव्वेसिं—सब
मंगलाणं—मंगलोंमें
पढमं—पहला (मुख्य)
मंगलं—मंगल
हवइ—है

भावार्थ—श्रीअरिहंत भगवान्, श्रीसिद्धभगवान्, श्रीआचार्य महाराज, श्रीउपाध्यायजी महाराज और ढाई द्वीपमें वर्त्तमान सामान्य सब साधु मुनिराज—इन पाच परमेष्ठियोंको मेरा नमस्कार हो। उक्त पांच परमेष्ठियोंको जो नमस्कार किया जाता है वह सम्पूर्ण पापोंको नाश करने वाला है और सब प्रकारके लौकिक लोकोत्तर-मंगलोंमें प्रधान मंगल है ॥

२ गुरुवन्दणा—तिक्खुत्तोका पाठ

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं(करेमि) वन्दामि नमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि ॥ १ ॥

शब्दार्थः—

तिक्खुत्तो—तीनवार
आयाहिणं—दक्षिण तरफसे
पयाहिणं—प्रदक्षिणा
करेमि—करता हूँ
वन्दामि—गुणग्राम (स्तुति) करता हूँ
नमंसामि—नमस्कार करता हूँ
सक्कारेमि—सत्कार देता हूं
सम्माणेमि—सन्मान देता हूँ
कल्लाणं—कल्याणरूप है
मंगल—मंगलरूप है

देवयं—धर्मदेवरूप है
चेइयं—ज्ञानवंत है, ऐसे आपकी
पज्जुवासामि—सेवा करता हूँ

भावार्थ—तीनवार दोनों हाथ जोडकर जीमने कानसे बाँए कान तक प्रदाक्षिणा करके अर्थात् तीन दफे मुखके चारों ओर जुड़े हाथोंको घुमा करके गुणग्राम (स्तुति) करता हूँ, पंचांग—दो हाथ, दो गोडे और एक मस्तक ये पांच अंग नमा कर नमस्कार करता हूँ, हे पूज्य ! आपका सत्कार करता हूँ, सन्मान देता हूँ, आप कल्याण रूप है और मंगल रूप हैं, आप धर्मदेव स्वरूप हैं ज्ञानवंत है, छकाय जीवोंके रक्षक हैं, ऐसे आप गुरु महाराजकी मन वचन और कायासे सेवा करता हूँ और मस्तक नमाकर वंदना करता हूँ ॥

॥ ३–इरियावहियं सूत्रम् ॥

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि, इच्छं । इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडासंताणा संकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं

संकामिया, जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ॥१॥

शब्दार्थ—

इच्छाकारेण—आपकी इच्छा पूर्वक,
संदिसह—आज्ञा दीजिये
भगवन्—हे गुरु महाराज !
इरियावहियं—ईर्यापथिकी क्रियाका
(मार्गमें चलने से होनेवाली क्रियाका)
पडिक्कमामि—प्रतिक्रमण (निवर्त्तन) करुं।
'पडिक्कमह'—निवृत्त हो,
इच्छं—प्रमाण है.
इच्छामि—मै चाहता हूँ
पडिक्कमिउ—निवृत होना
इरियावहियाए—मार्गमें चलने से होनेवाली
विराहणाए—विराधना से
गमणागमणे—जाने आनेमें
पाणक्कमणे—किसी प्राणीको दवाया हो.
वीयक्कमणे—बीज को दवाया हो.
हरियक्कमणे—वनस्पतिको दवाया हो.
ओसा—ओस
उत्तिंग—कीडीनगरा
पणग—पांच रंगकी काई

दग—कच्चा पानी
मट्टी—सचित्त मिट्टी
मक्कडासंताणा—मकड़ीके जालोंको
संक्रमणे—कचरा हो, चांप्या हो.
जे—जो कोई
मे—मैंने
जीवा—जीवोंको
विराहिया—पीडित किया हो,
एगिंदिया—एक इन्द्रियवाले
बेइन्दिया—दो इन्द्रियवाले,
तेइंदिया—तीन इन्द्रियवाले
चउरिंदिया—चार इन्द्रियवाले
पंचिंदिया—पांच इंद्रियवाले
अभिहया—सन्मुख आए हुए जीवों को
हणा (मारा) हो
वत्तिया—धूल आदि से ढांका हो
लेसिया—आपसमें अथवा जमीनपर मसला हो
संघाइया—इकट्ठा किया हो
संघट्टिया—छुआ हो.
परियाविया—परिताप (कष्ट) पहुँचाया हो,
किलामिया—मृत्युतुल्य किया हो.
उद्दविया—हैरान किया हो, भयभीत किया हो.

ठाणाओ—एक जगहसे
ठाणं—दूसरी जगह
संकामिया—रक्खा हो
जीवियाओ—जीवनसे
ववरोविया—छुडाया हो
तस्स—उनका
मिच्छा—मिथ्या (निष्फल) हो
मि—मेरे लिये
दुक्कडं—पाप

भावार्थ—हे गुरु महाराज ! आपकी इच्छा पूर्वक आज्ञा दीजिये मै रास्ते पर चलने फिरने आदिसे जो विराधना होती है उससे या उससे लगने वाले अतिचार से निवृत्त होना चाहता हूँ अर्थात् आयंदा ऐसी विराधना न हो इस विषयमें सावधानी रखकर उससे बचना चाहता हूँ " तब गुरु महाराज कहे हे शिष्य ! सावद्य क्रियासे शीघ्रही निवृत्त हो तब शिष्य कहे आपकी आज्ञा प्रमाण है और मेरी भी यही इच्छा है " मार्गमें जाते आते मैंने भूतकालमें किसी के इन्द्रिय आदि प्राणों को दबाकर, सचित्त बीज तथा हरी वनस्पतिको कचर कर, ओस, चींटीके बिल, पाचो वर्णकी काई, सचित जल, सचित मिट्टी और मकड़ीके जालोंको रौंद (कुचलकर) किसी जीव की हिंसा की जैसे–एक इंद्रियवाले (पृथ्वी पाणी अग्नि वायु और वनस्पति), दो

इंद्रियवाले-शंख, छीप, गंडोला आदि, तीन इंद्रियवाले-कुंथुआ, जूं, लिख किडी, खटमल, चींचडआदि, चार इंद्रियवाले-मक्खी, भँवरा, वीच्छु, टीडी, पतंगिया आदि पांच इंद्रियवाले जीव-मनुष्य, तिर्यंच, जलचर, थलचर और खेचर आदि जीवोंको मैंने चोट पहूँचाई, उन्हें धूल आदिसे ढांका, जमीनपर या आपसमें रगडा इकट्ठा करके उनका ढेर किया, उन्हें क्लेश जनक रीतिसे छुआ, क्लेश पहूंचाया, थकाया हैरान किया, एक जगहसे दूसरी जगह उन्हें बूरी तरह रक्खा, इस प्रकार किसी भी तरहसे उनका जीवन नष्ट किया उसका पाप मेरे लिये निष्फल हो अर्थात् जानते अनजानते विराधना आदिसे कषायद्वारा मैंने जो पापकर्म बांधा उसके लिये मै हृदयसे पछताता हूँ, जिससे कि कोमल परीणाम द्वारा पापकर्म निरस हो जावे और मुझको उसका फल भोगना न पड़े ॥१॥

४-तस्स उत्तरीसूत्रम् ॥

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं, अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं

अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमुक्कारेणं न पारेमि ताव-कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि॥१॥

शब्दार्थः—

तस्स—उसको
उत्तरीकरणेणं—श्रेष्ठ उत्कृष्ट बनाने के लिये.
पायच्छित्तकरणेण—प्रायश्चित्त करनेके लिये.
विसोहीकरणेणं—विशेष शुद्धि करनेके लिये.
विसल्लीकरणेणं—शल्यका त्यागकरनेके लिये
पावाणं—पापरूप अशुभ
कम्माणं—कर्मोंका
निग्घायणट्ठाए—नाश करनेके लिये
ठामि—करता हूँ।
काउस्सग्गं—कायोत्सर्ग—शरीरके व्यापारका त्याग
अन्नत्थ—नीचे लिखे हुए आगारोंके सिवाय
ऊससिएणं—उच्छ्वास (ऊंचोश्वास)लेनेसे
नीससिएणं—निःश्वास (नीचोश्वास) छोडनेसे
खासिएणं—खाँसी आनेसे
छीएणं—छींक आनेसे
जंभाइएणं—उवासी आनेसे
उड्डुएणं—डकार आनेसे
वायनिसग्गेण—अधो वायु नीसरनेसे

भमलीए—चक्कर (फेर) आनेसे
पित्तमुच्छाए—पित्त विकारकी मूर्च्छासे
सुहुमेहिं—सूक्ष्म (थोडा)
अंगसंचालेहिं—अंगसंचार (हलने) से
सुहुमेहिं—थोडासा
खेलसंचालेहिं—कफ संचारसे
सुहुमेहिं—थोडीसी
दिट्ठिसंचालेहिं—दृष्टि चलानेसे
एवमाइएहिं—इत्यादि
आगारेहिं—आगारोंसे
अभग्गो—भागे नहीं (अभंग)
अविराहिओ—अखण्डित
हुज्ज—हो।
मे—मेरा
काउस्सग्गो—कायोत्सर्ग
जाव—जब तक
अरिहंताणं—अरिहंत
भगवंताणं—भगवान् को
णमुक्कारेणं—नमस्कार करके
न पारेमि—न पारूं
ताव—तब तक
कायं—काया (शरीर) को

ठाणेणं—स्थिर रहकर
मोणेणं—मौन रहकर
झाणेणं—ध्यान धर कर एकाग्रचित्तसे,
अप्पाणं—आत्माको (कषायादिसे)
वोसिरामि—अलग (त्याग) करता हूँ

भावार्थ—ईर्यापथिक क्रियासे पाप-मल लगनेके कारण मलिन हुआ, इसकी शुद्धि मैंने "मिच्छा-मि दुक्कडं" द्वारा की है, तथापि परिणाम पूर्ण शुद्ध न होनेसे, वह अधिक निर्मल न हुआ हो तो उसको अधिक निर्मल बनाने के निमित्त, उस पर वार वार अच्छे संस्कार डालने चाहिये। इसके लिये प्रायाश्चित्त करना आवश्यक है। प्रायश्चित्त भी परिणामकी विशुद्धिके सिवाय नहीं हो सकता, इसलिये परिणाम विशुद्धि आवश्यक है। परिणामकी विशुद्धताके लिये शल्य-माया, निदान (निआण) और मिथ्यात्व इन शल्योंका त्याग करना जरुरी है। शल्योंका त्याग और अन्य सब पाप कर्मोंका नाश काउस्सग्गसे ही हो सकता है, इसलिये मैं काउस्सग्ग करता हूँ।

कुछ आगारों का कथन तथा काउस्सग्ग के अखण्डितपने की चाह—श्वास का लेना तथा निकालना, खांसना, छींकना, जंभाई लेना, डकारना, अपानवायु का सरना, शिर आदि का घूमना, पित्त विगड़ने से मूर्च्छा का होना, अंग का सूक्ष्म हलन-चलन, कफ-थूक आदिका

सूक्ष्म झरना, दृष्टि का सूक्ष्म संचलन– ये तथा इनके सदृश अन्य क्रियाएँ जो स्वयमेव हुआ करती हैं और जिनके रोकने से अशान्ति का सम्भव है उनके होते रहने पर भी काउस्सग्ग अभङ्ग ही है। परन्तु इनके सिवाय अन्य क्रियाएँ जो आप ही आप नहीं होती–जिनका रोकना इच्छा के आधीन है–उन क्रियाओं से मेरा कायोत्सर्ग अखण्डित रहे. अर्थात् [1]अपवाद भूत क्रियाओं के सिवाय अन्य कोई भी क्रिया मुझसे न हो. और इससे मेरा काउस्सग्ग सर्वथा अभंग रहे यही मेरी अभिलाषा है।

---

१ नोट·—आदिशब्द से नीचे लिखे हुए चार आगार और समझने चाहियेः–(१) आग के उपद्रव से दूसरी जगह जाना, (२) बिल्ली चूहे आदि का उपद्रव या किसी पचेन्द्रिय जीव के छेदन भेदन होने के कारण अन्य स्थानमें जाना (३) यकायक डकैती पड़ने या राजा आदि के सताने से स्थान बदलना (४) शेर आदि के भयसे, सांप आदि विषैले जन्तु के डकसे या दिवाल आदि गिर पड़ने की शंका से दूसरे स्थान को जाना।

कायोत्सर्ग करने के समय ये आगार इसलिये रक्खे जाते हैं कि सब की शक्ति एकसी नहीं होती। जो कम ताकात वा डरपोक हैं वे ऐसे मोके पर इतने घबरा जाते हैं कि धर्मध्यान के बदले आर्तध्यान करने लगते हैं, इसलिए उन अधिकारियों के निमित्त ऐसे आगारों का रक्खा जाना आवश्यक है। आगार रखने में अधिकारि-भेद ही मुख्य कारण है।

(काउस्सग्ग का कालपरिमाण तथा उसकी प्रतिज्ञा)।
मैं अरिहंत भगवान को 'नमो अरिहंताणं' शब्द द्वारा नमस्कार करके काउस्सग्ग को पूर्ण न करूं तब तक शरीर से निश्चल बन कर, वचन से मौन रहकर और मन से शुभ ध्यान धर कर पापकारी सब कामों से हट जाता हूं—कायोत्सर्ग करता हूं।

५–लोगस्स सूत्रम्।

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे। अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली ॥१॥ उसभमजिअं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च। पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥२॥ सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंस वासुपुज्जं च। विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥३॥ कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च। वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥४॥ एवं मए अभिथुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा। चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥५॥ कित्तियवंदियमहिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा। आरुग्गबोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु ॥६॥ चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा। सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥७॥

शब्दार्थः—

लोगस्स—लोकमें
उज्जोअगरे—उद्योत (प्रकाश) करनेवाले
धम्मातित्थयरे—धर्मरूप तीर्थको स्थापन करनेवाले
जिणे—राग द्वेषको जीतने वाले
अरिहंते—कर्मरूपशत्रुका नाश करने वाले तीर्थंकरोंकी
कीत्तइस्सं—मैं स्तुति करता हूं।
चउवीसंपि—चोवीसों
केवली—केवलज्ञानी
उसभं—श्री ऋषभदेव स्वामीको
अजितं—श्रीअजितनाथको
च—और
वंदे—वन्दन करता हूँ
संभवं—श्री संभवनाथ स्वामीको
अभिणंदणं च—और श्री अभिनन्दन स्वामीको
सुमई—श्री सुमतिनाथ प्रभुको
च—और
पउमप्पहं—श्री पद्मप्रभस्वामीको
सुपासं—श्री सुपार्श्वनाथ प्रभुको
जिणं च चंदप्पहं—और जिनेश्वर चन्द्रप्रभुको
वंदे—वन्दन करता हूँ।
सुविहिं—सुविधिनाथको

च—और

पुप्फदंतं—सुविधिनाथजीका दूसरा नाम पुष्फदंत भगवानको

सीअल—श्रीशीतलनाथ को

सिज्जंस—श्रीश्रेयांसनाथ को

वासुपुज्ज—श्रीवासुपूज्य स्वामीको

च—और

विमल—श्रीविमलनाथको

अणंत च जिण—श्रीअनन्तनाथजिनको और

धम्मं—धर्मनाथको

संतिं—श्रीशान्तिनाथजिनको

च—और

वंदामि—वन्दन करता हूँ

कुंथुं—श्रीकुंथुनाथको

अर—श्रीअरनाथको

च—और

मल्लिं—श्रीमल्लिनाथको

वंदे—वंदन करता हूँ

मुणिसुव्वय—श्रीमुनिसुव्रत को

नमिजिण—श्रीनमिनाथ जिनेश्वर को

च—और

श्रीसुपार्श्वनाथ, श्रीचन्द्रप्रभ, श्रीसुविधिनाथ, ँ ी
श्रीश्रेयासनाथ, श्रीवासुपूज्य, श्रीविमलनाथ, श्रीअनंत""
श्रीधर्मनाथ, श्रीशान्तिनाथ, श्रीकुंथुनाथ श्रीअरनाथ, श्रीम
ल्लिनाथ, श्रीमुनिसुव्रत, श्रीनमिनाथ, श्रीअरिष्ठनेमि (नेमनाथ),
श्रीपार्श्वनाथ और श्रीमहावीरस्वामी–इन चौवीस जिनेश्वरों
की मैं स्तुति-वंदना करता हूँ। भगवान् से प्रार्थना–जिनकी
मैंने स्तुति की है, जो कर्ममलसे रहित हैं, जो जरा मरण
दोनोंसे मुक्त हैं और जो तीर्थके प्रवर्त्तक है वे चौवीसों जि
नेश्वर मेरे पर प्रसन्न हों–उनके आलंबनसे मुझमें प्रसन्नता
हो। जिनका कीर्तन, वंदन और पूजन नरेन्द्रों, नागेन्द्रों
तथा देवेन्द्रों तकने किया है, जो सम्पूर्णलोकमें उत्तम हैं
और जो सिद्धि (मोक्ष) को प्राप्त हुए है वे भगवान् मुझको
आरोग्य, सम्यक्त्व तथा समाधिका श्रेष्ठवर देवें–उनके आ-
लंबनसे बल पाकर मैं आरोग्य आदिका लाभ करूँ। सिद्ध
भगवान् जो सब चन्द्रोंसे विशेष निर्मल हैं, सब सूर्यों से
विशेष प्रकाशमान है और स्वयंभूरमण नामक महासमुद्रके
समान गंभीर है, उनके आलम्बनसे मुझको सिद्धि–मोक्ष
प्राप्त हो॥

६—करेमि भंते।।

करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि,
जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न करेमि
न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भंते!

पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

शब्दार्थः—

करेमि—मैं ग्रहण करता हूँ
भंते—हे भगवन् !
सामाइयं—सामायिक व्रत को
सावज्जं—(सावद्य) पापसहित
जोगं—व्यापारका
पच्चक्खामि—प्रत्याख्यान (त्याग) करता हूँ
जाव—जब तक
नियमं—इस नियमका
पज्जुवासामि—सेवन करता रहूँ तब तक
दुविहं—दो प्रकारके करणसे
तिविहेणं—तीन प्रकारके योगसे
न करेमि—सावद्ययोगको न करूँगा
न कारवेमि—न दूसरेसे कराऊगा
मणसा वयसा कायसा—मन वचन और कायामे
तस्स—उससे-प्रथमके पापसे
भंते—हे भगवन् !
पडिक्कमामि—मै निवृत्त होता हूँ
निंदामि—उस पापकी आत्मसाक्षीसे निन्दा करता हूं
गरिहामि—विशेष गर्हा-निंदा करता हूँ

भावार्थ—अरिहंतों को मेरा नमस्कार हो, जो अरिहंत भगवान् धर्म की आदि करनेवाले हैं, साधु साध्वी श्रावक श्राविका रूप चतुर्विध तीर्थकी स्थापना करने वाले हैं, दूसरे के उपदेश के विना ही बोधको प्राप्त हुए हैं, सब पुरुषोंमें उत्तम हैं, पुरुषोंमें सिंह के समान निडर हैं, पुरुषोंमें कमलके समान अलिप्तहैं, पुरुषोंमें प्रधान गन्धहस्तिके समान सहनशील हैं, लोगोंमें उत्तम हैं, लोगोंके नाथ हैं, लोगोंके हितकारक हैं, लोकमें प्रदीप के समान प्रकाश करने वाले हैं, लोकमें अज्ञानरूप अंधकारका नाश करने वाले हैं, दुःखियोंको अभयदान देनेवाले हैं, अज्ञानसे अंध ऐसे लोगोंको ज्ञानरूप नेत्र देने वाले हैं, मार्गभ्रष्टको मार्ग दिखाने वाले हैं, शरणागतको शरण देनेवाले हैं, सम्यक्त्व प्रदान करने वाले हैं, धर्महीनको धर्मदान करनेवाले हैं, जिज्ञासुओंको धर्मका उपदेश करनेवाले हैं, धर्मके नायक हैं, धर्मके सारथि (संचालक) हैं, धर्ममें श्रेष्ठ हैं तथा चक्रवर्तीके समान चतुरन्त हैं अर्थात् जैसे चार दिशाओंकी विजय करनेके कारण चक्रवर्ती चतुरन्त कहलाता है वैसे अरिहंत भी चार गतियोंका अंत करनेके कारण चतुरंत कहलाते है, सर्व पदार्थोंके स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले ऐसे श्रेष्ठ ज्ञान दर्शन को अर्थात् केवलज्ञान-केवलदर्शन को धारण करने वाले है, चार घाति-कर्मरूप आवरण से मुक्त हैं, स्वयं राग द्वेष को जीतने वाले और दूसरों को

भी जीताने वाले हैं, स्वयं संसार को पार पहुँच चुके हैं और दूसरों को भी उसके पार पहुँचाने वाले है, स्वय ज्ञानको पाये हुएहैं और दूसरों को भी ज्ञान प्राप्त कराने वाले है, स्वयं मुक्त हैं और दूसरोंको भी मुक्ति प्राप्त कराने वाले है, आप सर्वज्ञ है, सर्वदर्शी हैं, तथा उपद्रव रहित, अचल (स्थिर), रोग रहित, अनन्त, अक्षय, व्याकुलता रहित, और पुनरागमन (जन्म मरण) रहित ऐसे मोक्ष स्थानको प्राप्त हैं। या ऐसे मोक्ष स्थानको प्राप्त होने वाले है।

सब प्रकार के भयों को जीते हुए जिनेश्वरों को नमस्कार हो।

८—सामायिक पारनेकी पाटी।

एयस्स नवमस्स सामाइयवयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समायारियव्वा तंजहा ते आलोउं, मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणआए, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणआए, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं। सामाइयंसम्मंकाएणं,(न)फासिअं,(न)पालिअं, (न)तीरिअं,(न)कीट्टिअं,(न)सोहियं, नआराहियं, आणाए अणुपालिअं न भवइ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं॥

सामायिक में दस मनके, दस वचनके, बारह कायाके ए कुल बत्तीस दोषोंमें से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिकमें [१]स्त्रीकथा, भत्तकथा, देशकथा, राजकथा इन चार कथाओमें से कोई कथा की हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक में आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा इन चार संज्ञाओं में से कोई संज्ञाका सेवन किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिकमें अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अणाचार, जानते अजानते मन वचन कायासे कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक व्रत विधि से लिया, विधि से पूर्ण किया, विधिमें कोई अविधि हुइ हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक का पाठ बोलने में काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, न्युनाधिक विपरीत पढनेमें आया हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान्‌की साक्षीसे तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थः—

एयस्स—ऐसा

नोट—१ श्राविकाओंको स्त्रीकथाके स्थान पर पुरुष कथा ऐसा बोलना.

नवमस्स—नववाँ
सामाइयवयस्स—सामायिकव्रतका
पंच—पांच
अइयारा—अतिचार
जाणियव्वा—जानना
न—नहीं
समायारियव्वा—आदरना
तंजहा—(तद्यथा) वह इस तरह
आलोउं—आलोचना करता हूँ
मणदुप्पणिहाणे—मन खोटे मार्गमें प्रवृत्त हुआ हो
वयदुप्पणिहाणे—वचन खोटे मार्गमें प्रवृत्त हुआ हो
कायदुप्पणिहाणे—काया खोटे मार्गमें प्रवृत्त हुई हो
सामाइयस्स सइ अकरणआए—सामायिक लेकर अधूरा पारा हो या सामायिककी स्मृति (ख्याल) न रक्खी हो
सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणआए—सामायिक अव्यवास्थितपनसे याने चंचलपनसे किया हो
तस्स—उसका
मिच्छा—मिथ्या (निष्फल) हो
मि—मेरा
दुक्कडं—पाप

सामाइयं सम्मंकाएणं—सामायिकको सम्यक् प्रकार शरीरसे
न फासिअं—स्पर्शा नहीं
न पालिअं—पाला नहीं
न तीरिअं—समाप्त किया नहीं
न कीट्टिअं—कीर्त्तन किया नहीं
न सोहिअं—शुद्ध किया नहीं
न आराहिअं—आराधना की नहीं
आणाए—वीतरागकी आज्ञानुसार
अणुपालिअं—पालन
न भवइ—न हुआ हो
तस्स—उसका
मिच्छा—मिथ्या (निष्फल)
मि—मेरे लिये
दुक्कडं—पाप

भावार्थ—श्रावकके बारह व्रतोंमेंसे नववाँ सामायिक व्रतके पांच अतिचार हैं वे जानने योग्य हैं परंतु ग्रहण करने योग्य नहीं है उन अतिचारों की आलोचना करता हूँ जैसे कि—मनमें बुरा चिंतवन किया हो अर्थात् मनके दश दोष लगायें हो, दूसरा वचनका दुरुपयोग किया हो अर्थात् वचन के दश दोष लगायें हो, तीसरा काया (शरीर) खोटे मार्गमें प्रवृत हुई हो अर्थात् काया के बारह दोष लगाये हो,

सामायिक लेकर अधूरा पारा हो या शक्ति होने पर सामायिक न किया हो, सामायिक अनवस्थितपनसे याने शास्त्रकी मर्यादा रहित किया हो, इन पांचो अतिचारोंका पाप मेरे लिये मिथ्या हो। सामायिक कायासे सम्यक् प्रकार किया नहीं, पाला नहीं, समाप्त नहीं किया, कीर्त्तन नहीं किया, शुद्ध नहीं किया, आराधन नहीं किया और वीतराग भगवान्की आज्ञानुसार पालन नहीं हुआ हो तो उसका पाप मेरे लिये मिथ्या हो।

सामायिक के बतीसदोष.

(ग्रन्थानुसार यहां लिखते है)

मनके दशदोष.

अविवेक जसो कित्ती, लाभत्थी गव्वभय नियाणत्थी।
संसयरोसअविणउ, अबहुमाण ए दोसा भाणियव्वा॥

१ विवेक विना सामायिक करे तो अविवेक दोष

२ यशकीर्ति के लिए सामायिक करे तो यशोवाञ्छा दोष.

३ धनादिक के लाभकी इच्छा से करे तो लाभवांच्छा दोष.

४ घमण्ड (अहंकार) सहित करे तो गर्वदोष,

५ राज्यादिकका अपराधके भयसे करे तो भय दोष.

६ सामायिक में नियाणो करे तो निदानदोष.

७ फल प्रते सन्देह रखकर सामायिक करे तो संशयदोष.

८ सामायिकमे क्रोध, मान, माया, लोभ करे तो रोषदोष.

९ विनयपूर्वक सामायिक न करे, तथा सामायिक में देव, गुरु, धर्मकी अविनय असातना करे तो अविनयदोष.

१० बहुमान भक्तिभावपूर्वक सामायिक न करके वेगारी की तरह सामायिक करे तो अवहुमानदोष.

वचनके दश दोष.

गाथा—कुवयणसहसाकारे, सछंदसंखेव कलहं च।
विगहा वि हासोऽसुद्धं, निरवेक्खो मुणमुणा
दोसा दस ॥

१ कुवचन—कुत्सित वचन वोले तो कुवचनदोष.

२ विनाविचारे वोले तो सहसाकारदोष.

३ सामायिकमें गीत,ख्यालादि राग उत्पन्न करनेवाले संसार सम्बन्धी गाने गावे तो स्वच्छंददोष.

४ सामायिक के पाठ और वाक्यको टुका करके वोले तो सक्षेपदोष.

५ सामायिक में क्लेशका वचन वोले तो कलहदोष.

६ राजकथा, देशकथा, स्त्रीकथा, भोजनकथा इन चार कथाओंमेंसे कोई कथा करे तो विकथादोष.

७ सामायिक में हंसी मसकरी ठट्ठारौल करे तो हास्यदोष.

८ सामायकमे गडबड करके उतावळो २ बोले, विना उपयोग और अशुद्ध पढे बोले तो अशुद्धदोष *

९ सामायिक उपयोग विना बोले तो निरपेक्षादोष.

१० स्पष्ट उच्चारण न करके जो गुण २ बोले तो मुम्मणदोष

कायके १२ दोष–

[1]कुआसणं [2]चलासणं [3]चलादिट्ठी
[4]सावज्जकिरिया–[5]लंबणा [6]कुंचण पसारणं ।
[7]आलस्स [8]मोडणमल [9] [10]विमासणं,
[11]निद्दा [12]वेयावच्चत्ति बारस कायदोसा ॥१॥

१ सामायिकमें अयोग्य आसनसे बैठे. जैसेकि ठासणी मारके बैठे, पावपर पांव रखकर बैठे, पग पसार कर बैठे, ऊंचा आसन पलाठी मारकर बैठे, इत्यादि अभिमानके आसनसे बैठे तो कुआसण दोष.

२ सामायिकमें स्थिर आसन न राखे (एक और एकही जगह आसन न राखे, आसन बदले, चपलाई करे तो चलासन दोष.

नोट —*कोइ २ ऐसा भी बोलते है कि सामायिकमें अव्रतीको सत्कार सम्मान देवे (आवो पधारो कहे तथा अव्रतीने जाणे आणेका कहे.)

३ सामायिकमें दृष्टिको स्थिर न करे, इधर उधर दृष्टि फेरे तो चलदृष्टिदोष.

४ सामायिकमें कुछ शरीरसे सावद्य क्रिया करे घरकी रखवाली करे, शरीरसे इशारा करे तो सावद्यक्रियादोष.

५ सामायिकमें भीतादिकका टेका (आधार) लेवे तो आलंबनदोष

६ सामायिकमें विना प्रयोजनके हाथ–पगको संकोचे पसारे तो आकुंचन प्रसारण दोष

७ सामायिकमें अंगमोड़े तो आलस दोष.

८ सामायिकमें हाथ पैरका कडका काढे तो मोटन दोष.

९ सामायिकमें मैल उतारे तो मलदोष.

१० गलेमें तथा गाल (कपोल) में हाथ लगाकर शोकासन से बैठे तो विमासण दोष.[१]

११ सामायिक में निद्रा लेवे तो निद्रादोष.

१२ सामायिक में विना कारण दूसरे के पास वैयावच करावे तो वैयावृत्यदोष.

नोट—१ सामायिकमें विना पूंज्या खाज खुणे, या विना पूंज्या हाले चाले तो विमासण दोष।

१२ बारहवाँ कंपनदोष वह स्वाध्याय करतां हलतां जाय तथा शीतउष्ण की प्रबलतासे कंपे और सर्व शरीर को वस्त्रादिक से ढंक ले, या सर्वथा उघाड दे।

कायोत्सर्ग के १९ दोष.

घोडग[1] लया[2] य खंभे[3] कुड्डे मालेय[4] सबरि[5] वहु[6] निअलिए[7]॥
लंबुत्तर[8] थण[9] उद्धि[10] संजइ[11], खलिणे[12] य वायस[13] कविट्ठे[14] ॥१॥
सीसोकंपिअ[15] मूइ[16] अंगुलिभमुहाइ[17] वारुणी[18] पेहा[19] ।

भावार्थ—घोटक,[1] लता,[2] स्तम्भ,[3] माल,[4] शवरी,[5] वधू,[6] निगडित,[7] लंबोत्तर,[8] स्तन,[9] शकटोर्द्धि,[10] संयति,[11] खलिन,[12] वायस,[13] कोठ,[14] शीर्षोत्कम्पित,[15] मूक,[16] अंगुलभमुहा,[17] वारुणी,[18] और प्रेष्य[19] ये कायोत्सर्गके १९ दोष हैं। प्रत्येक का अर्थ गाथा सहित आगे बताते हैं—

असोव्व विसमपायं, आउंटा वित्तुट्ठाइ उस्सग्गो।
कंपइ काउस्सग्गे, लयव्व खर पवणसंगेण ॥

भावार्थ—घोडेकी तरह एक पाव थोडा टेढा करके कायोत्सर्ग करनेसे पहिला घोटक नामका दोष होता है। अधिक वायुके लगने से जैसे लता (बेल) कांपती है, इसी तरह कायोत्सर्ग करते समय कांपने से दूसरा लता दोष होता है ॥

खंभे वा कुड्डे वा, आवट्ठंभीअ कुणइ उस्सग्गंतु।
माले अ उत्तमंगं, अवट्ठम्भिय कुणइ उस्सग्गं ॥

भावार्थ—थंभा अथवा भीत के सहारे खडे रहकर कायोत्सर्ग करनेसे तीसरा स्तभ दोष होता है, । छत अथवा

चंद्वासे शिर लगाकर कायोत्सर्ग करना, चौथा माल दोष है।

सबरी वसणविरहिया, करेइ सागारिअं जहट्टवेइ।
ठविऊण गुज्झदेसं, करोहि इअ कुणइ उस्सग्गं ॥

भावार्थ—जैसे वस्त्रहीन भीलनी अपने गुह्य अंगको हाथसे ढंकती है वैसे ही अपने दोनों हाथ गुह्य स्थानपर रखकर कायोत्सर्ग करने से पांचवां शबरी दोष होता है।

उवणामि उत्तमंगं काउस्सग्गं जहा कुलवहुव्व।
निअलिअउं विवचरणे, वित्थारिय अहव मेलविउं॥

भावार्थ--जैसे उत्तम कुल की वधू (वहु) नीचाशिर किये रहती है वैसे नीचाशिर करके कायोत्सर्ग करने से छट्ठा वधू नामका दोष होता है। जैसे किसी पुरुष के पैरों में वेडी पहिराने से उसके पैर इकट्ठे या चौड़े रहते हैं-उस तरह पात्र रखकर कायोत्सर्ग करने से सातवां निगाडत दोष होता है।

काऊण चोलपट्टं अविहीए नाहिमण्डलस्सुवरिं।
हेट्ठाय जाणुमित्तं, चिट्ठइ लंबुत्तुरुस्सग्ग ॥

भावार्थ—चोलपट को नाभि के ऊपर बाधने से घुटने और जंघा उघाडे रहते है इस प्रकार अमर्यादास कायोत्सर्ग करना आठवा लवोत्तर दोप है।

पत्थाऊणय थणणे चोलगपट्टेण ठाइ उस्सग्गं।
दंसाइ रक्खणट्ठा, अहवाणाभोगदोसेण ॥

भावार्थ—कायोत्सर्ग करते समय डांस मच्छर आदि के भय से अथवा अनाभोग से अपने चोलपट के द्वारा स्तन को ढांकना, नववां स्तन दोष कहा जाता है।

मेलित्तु पण्हियाओ चरणे वित्थारिऊण बाहिरउं।
काउस्सग्गं एसो बाहिरउद्धी मुणेयव्वो ॥
अंगुट्ठे मेलविउं वित्थारिय पण्हियाउ बाहिंतु।
काउस्सग्गं एसो भीणओ अब्भितरुद्धित्ति ॥

भावार्थ—पैर की दोनों एड़ियों को मिला कर तथा पाव के आगले भाग को चौडा करके कायोत्सर्ग करने से बाह्यशकटोद्धि दोष होता है। और पाव के अगले भाग को मिलाकर तथा एड़ियों को चौड़ी करके कायोत्सर्ग करने से दशवा अभ्यन्तरशकटोद्धि दोष होता है.

कप्पं वा पट्टं वा, पाउणियं संजइव्व उस्सग्गं।
ठायइ खलिण च, जहा रयहरणं अग्गओकाउं ॥

भावार्थ—कपड़ा अर्थात् पिछोड़ी तथा चोलपट पहिनकर महासती की तरह कायोत्सर्ग करना ग्यारहवां संयति दोष है। जैसे घोडे की लगाम थाभने से घोड़ा स्थिर रहता है, इसी तरह जो मुनि रजोहरण तथा ओघे को काख में दबा कर कायोत्सर्ग करते हैं, वह बारहवां खलिन दोष होता है, अथवा जैसे अधिक दौड़ाने से घोड़ा लगाम से पीडित होकर वारंवार शिर ऊंचा नीचा किया

करता है इसी तरह कायोत्सर्ग के समय वारंवार शिर को ऊंचा नीचा करने से वारहवां खलिन दोष होता है।

भामेइ तहादिट्ठि, चलचित्तो वायसोव्व उस्सग्गे।
छप्पइ आण भएणं, कुणइ अ पट्टं कविट्ठंव ॥

भावार्थ—जैसा कौवा चंचलदृष्टि से दशों दिशाओं को देखता है तैसे ही कायोत्सर्ग करते समय दृष्टि को इधर उधर घुमाने से तेरहवां वायस दोष होता है। कायोत्सर्ग करते समय जूं आदि लगने के भय से चोलपट को समेट कर रखना कोठ नामका चौदहवां दोष होता है।

सीसं पकंपमाणो, जक्खाइट्ठोव कुणइ उस्सग्गं।
'मूउव्व हूहु अंतो, तहेव थिज्जत माएसु ॥

भावार्थ—जैसे कोई भूत लगने से शिर घुमाता है इसी प्रकार कायोत्सर्ग करते समय शिर घुमानेसे पंद्रहवां शीर्षोत्कंपित दोष लगता है। मूक (गूंगे)की तरह कायोत्सर्ग करते समय हु हुं शब्द करने से सोलहवा मूक दोष होता है॥

अंगुलि भमुहाओविअ,चालंतो कुणइ तहय उस्सग्गं
आलावगणणट्ठाए, संठवणत्थं च जोगाणं॥

भावार्थ—कायोत्सर्ग के आलावा गिनने के लिये अंगुलियां चलाना, तथा योग अर्थात् व्यापारान्तर निरूपण करने (वताने) के लिये भृकुटि (भौंए) चलाना सत्रहवां अंगुलीभमुहा नामका दोष होता है।

काउस्सगम्मि ठिअं, सुरा जहा बुडबुडेइ अव्वत्तं।
अणुपेहंतो तहवा नरोव चालेइ उट्ठपुडं ॥

भावार्थ—जैसे मदिरा (शराब) में बुडबुड शब्द होता है तैसे ही कायोत्सर्ग में नमस्कारादि का चिन्तवन करते समय बुडबुड अव्यक्त शब्द करने से अठारहवां वारुणी दोष होता है । तथा नमस्कारादि का चिन्तवन करते समय वारवार होठको हिलाने से उन्नीसवां प्रेष्य दोष होता है ।

सामायिक लेनेकी विधि ॥

प्रथम स्थानक (जगह), आसन, पूंजणी, मुहपत्ति आदि देख लेना, पीछे जगह जयणा पूर्वक पूंज कर आसन बिछाना, पीछे आसन छोड़ कर पूर्व तथा उत्तर दिशा के तरफ मुख करके, दोनों हाथ जोड़ कर, पचांग नमा कर, तीन वार विधि युक्त तिक्खुत्ता के पाठसे वंदना (नमस्कार) करके श्रीसीमंधरस्वामी भगवान् की या अपने धर्माचार्य (गुरुदेव) की आज्ञा ले कर 'इरियावहिया'की पाटी खड़े हो कर बोलनी, पीछे 'तस्स उत्तरी'की पाटी बोलकर काउस्सग्ग करना, काउस्सग्ग में इरियावहिया की पाटी "जीवियाओ ववरोविया" तक मन में कहना, बादमें 'नमो अरिहंताणं' मनमें और प्रकट कहकर काउस्सग्ग पारना, पीछे लोगस्स की पाटी प्रकट कहे, पीछे 'करेमि भंते' की पाटी 'जाव नि-

यमं' तक कह कर जितना अधिक मुहूर्त्त रखना हो इतना रख कर पज्जुवासामिसे ले कर अप्पाणं वोसिरामि तक पूर्ण पाठ कहना। । पीछे नीचे बैठ कर बायॉ गोडा (घुटना)खडा कर, दोनों हाथ जोड़ कर नमुत्थुणं का पाठ दो वार कहना। दूसरा नमुत्थुणं के अंतमें जहॉ 'ठाणं संपत्ताणं' आता है वहॉ 'ठाणं संपाविउ कामाणं' वोलना। पीछे आसनपर बैठ कर सामायिक का काल पूरा नहीं हो तब तक ज्ञान-ध्यान करना या पढा हुआ ज्ञान याद करना, नया वोलचाल-थोकड़ा पढना या विचारना इत्यादि धर्म संबंधी ज्ञान-ध्यानसे सामायिक का काल पूरा करना। गुरु महाराज विराजमान हो तो उनके संमुख बैठे पीठ न दे, सज्झाय व्याख्यान आदिका उपदेश दे रहे हो तो उसमें उपयोग रखे। सामायिक का भण्ड उपगरण विकार जनक न रखे। स्त्री आदि के चित्र रहित स्थानमें सामायिक करें। सामायिकमें सामायिक के दोष छोडे।+

सामायिक पारने की विधि।

सामायिक पारने के समय 'इरियावाहिया' 'तस्स उत्तरी' का पाठ कहकर काउस्सग्ग करना। काउस्सग्गमें १ या २ लोगस्सका पाठ मनमें कहना बाद काउस्सग्ग 'नमो अ-

+नोट—सामायिकका काल १ मुहूर्त्त याने ४८ मिनिट का होता है॥

रिहंताणं' मनमें और प्रकट कहकर पारना। पीछे लोगस्स का पाठ प्रकट कहना। पीछे वायाँ गोडा खड़ा रखकर दोनों हाथ जोड कर नमुत्थुणं का पाठ दो वार बोल कर 'नवमा सामाइयव्रयस्स' इत्यादि सामायिक पारने का पाठ पूरा कहना। पीछे तीन वार नवकार मत्र पढकर सामायिक ठिकाने करना।।

व्याख्यान की आदि में श्रीमहावीरप्रभु की स्तुति।

इस काल में अपने निकट और निःस्वार्थ उपदेशक श्री महावीरस्वामी है, वे देवों के भी देव, परमतारक, सर्वोत्तम, दयानिधि, करुणासागर, भानुभास्कर, जीवदयाप्रतिपाल, कर्मशत्रुओं के काल, महामाहण, महागोपाल, परमसारथि, परमवैद्य, परमगारुडी, परमसनातन, अनाथनाथ, अशरण-शरण, अबन्धु के बन्धु, भयभीत के सहारे, सज्जनों के उद्धारक, शिवसुखकारन, राजराजेश्वर, हंसपुरुष सुपात्र-पुरुष, निर्मलपुरुष. निष्कलंकीपुरुष, निर्मोहीपुरुष, निर्विकारीपुरुष, इच्छानिरोधतपस्वी, चौंतीस ३४ अतिशयों से विराजमान, सत्यवचन के पैतीस ३५ गुणोंसे युक्त, एक-हजारआठ १००८ शुभ लक्षणों से शोभायमान, श्री सिद्धार्थ-नन्दन, त्रिलोकवन्दन, अघमलभजन, भवभयभजन, अरि-दलगंजन, पापदुःखनिकंदन, क्षमा और दया के लिए शीतलचंदन, दीनदयाल, परममयाल. परमकृपाल,परमपवित्र, परमसज्जन, परममित्र, परमवालेश्वरी, परमहितकांक्षी, परम-

आधार, जहाजसफरीसमान, जगतत्राता जगतमाता, जगत्भ्राता जगतजीवन, जगतमोहन, जगतसोहन, जगतपावन, जगतभावन, जगदीश्वर, जगतवीर, जगतधीर, जगतगंभीर, जगत्इष्ट, जगत्अभीष्ट, जगत्शिष्ट, जगत्मित्र, जगत्विभु, जगतप्रभु, जगत्मुकुट, जगत्प्रगट, जगतनन्दन, जगतवन्दन, चौदहराज ऊंचे लोकमें चूडामणि मुकुटकेसमान, भव्य प्राणियों के हृदय के नवशरहार, शीतलपुंज, जगतशिरोमणि, त्रिभुवनतिलक, समवशरण के शिरताज, सरस्वती के वाज, गणधरों के गुरुराज, छः काय के छत्र, गरीबों के निर्वाहक, मोह के घरट्ट, वाणीरूपी पद्म के लिए सरोवर, साधुओं के सेहरा, लोक के अग्रेश्वर, अलोक के साधक, दुःखियों के सहारे, मोक्षको देनहारे, भव्यजीवों के नयनतारे, संतोपके मेरु, सुयश के कमल, सुख के समुद्र, गुणों के लिये हंस, शब्दोंके लिये सिंह, जन्म पर विजय प्राप्त करने वाले, कालको भक्षण करजाने वाले, मनको अंकुश, प्राणियों के कल्पवृक्ष, सम्यग्दृष्टियों के माता-पिता, चतुर्विधसंघके गोपाल (रक्षक), पृथ्वीमण्डल के इन्द्रध्वज, आकाश के स्तम्भ, मुक्ति के उत्तम नरेन्द्र, केवलज्ञान के दाता, चौसठ इन्द्रों द्वारा पूजनीय, वंदनीय, स्मरणीय, दीनोद्धारक, दीनबन्धु, दीनाधार, सब देवोंके देव, सर्वमुनियोंके नाथ, समस्त योगियोंके ठाकुर, तरणतारण सर्वदुःखनिवारण, अधम-उद्धारण, भवदुखभंजन, समता के सिंधु, दया के सागर, गुणोंके आगर, चिन्तामणिरत्न समान, पार्श्वमणि

समान, कामधेनु समान, चित्रावेल समान, मोहन वेल समान, अमृतरसकुंभ समान, सुखको करने वाले, दुःखको हरने वाले, पापपटलरूप अन्धकारको नाश करने वाले, चन्द्रमा के समान शीतलता के धनी, सूर्य के समान प्रकाश करने वाले, समुद्र तुल्य गम्भीर, मेरुपर्वत की नाईं अचल, वायु के जैसे ये अप्रतिबद्ध विहारी, गगन के समान निरालंबी, मारवाडी वृषभ धोरी समान, पचायणकेसरिसिंह समान, लोकोत्तरपुरुष, अभयदाता, चक्षुदाता, मार्गदाता, ऐहिकचरम-जिनेश्वर जगधनी, और जिनशासन शृंगार, हैं। उन्हें भक्तिभाव से स्मरण करने वाले संसार पार होजाते हैं।

तथा--तत्त्वानन्दी, तत्त्वविश्रामी, अनन्तगुणों के स्वामी, अलक्षगुणों के धनी, अनन्तबल के धनी, अनन्त तेज के धनी, अबाधित-अनन्त आत्मीय सुख के धारण करने वाले, सफलनाम और सफलगोत्र के धारण करने वाले, आपने उत्तम २ शब्दों द्वारा इस भांति प्रकाश किया कि-" हे भव्यजीवो! जो कोई भी जीवजन्तुओं को मारेगा, उसे खुद भी मरना होगा, जो छेदेगा उसे छिदना होगा, जो भेदेगा उसे भिदना होगा, यदि कर्म बांधोगे तो फल अवश्य भोगना पडेगा।" इत्यादि शब्दों से शिक्षा देने वाले हे महावीरप्रभो! प्रगट हुए ज्ञान और दर्शन के धारक, अर्हन्, जिन, केवलि, अनाश्रवीपुरुष, तुम्हारे गुण वर्णन करने, विचारने और कहने में नहीं आते। आविनश्वरज्ञान

मय हे जिनेश्वरदेव ! प्रभो आपने साढ़े बारह वर्ष और एक पक्ष भयङ्कर तपस्या करके कर्मों को टाला, गाला, जलाया, दूरकिया, अथवा कर्मों का देना अदा किया और ऋण मुक्त होकर केवलज्ञानरूप लक्ष्मी का पाणिग्रहण किया, हे जिनेश्वरदेव ! हे वीतराग ! आपकी आत्मदशा प्रगट हुई और आप मोक्ष नगर में पधारे। किन्तु सांसारिक जीवों के उपकार, शान्ति और कल्याण के निमित्त, भव्य जीवों के दुःख मिटाने तथा चारगति, चौवीसदंडक, चौरासीलाख योनियों और १९७५०००० करोड कुलों में जीव सदा भ्रमण करता हुआ संयोगजन्य शारीरिक, और मानसिक वेदनाओंको सहन करता है, इसके मिटाने के वाले हे परमात्मन् ! आपने पदार्थों का रहस्य समझा देने वाली वाणीलाणी को विस्तारपूर्वक वर्णन किया॥

॥ इतिशुभम्. ॥



सामायिकसूत्र में आये हुए शब्दोंका अकारादिक्रम.

प्राकृत	संस्कृत	हिन्दी	गुजराती
अइयार	अतिचार	अतिचार (व्रतमें लगा-हुआ दोष)	अतिचार (व्रतमां ला-गेला दोष)
अकरणआ	अकरणता	नहीं करना	नहीं करवुं
अक्खय	अक्षत	अक्षय	अक्षय
अंगसंचाल	अङ्गसञ्चाल	शरीरका स्फुरण	शरीरनुं स्फुरण
अजिअ	अजित	अजितनाथ (दूसरा तीर्थंकर)	अजितनाथ (बीजा तीर्थंकर)
अणवट्ठिय	अनवस्थित	अव्यवस्थितपन	अव्यवस्थित, व्यवस्थित न [करेल
अणुपालिअ	अनुपालित	पालन किया	पाळेल
अणत	अनन्त	अनन्तनाथ (चौदहवाँ तीर्थंकर)	अनन्तनाथ (चौदमा तीर्थंकर)
अणत	अनन्त	अन्त—नाश रहित	अविनाशी, नाश रहित
अन्नत्थ	अन्यत्र	दूसरी जगह	बीजे ठेकाणे
अपुणरावित्ति	अपुनरावृत्ति	पुनरागमन रहित	पुनरागमन विनानुं
अप्पडिहयवर-	अप्रतिहतवर	कहां ही भी न रूके	क्यांई पण न अटके

नाणदं- सणधर	ज्ञानदर्श- नधर	ऐसे श्रेष्ठ ज्ञान दर्शनके धारक	तेवा श्रेष्ठ ज्ञान अने दर्शनवाळा
अप्पा	आत्मन्–आत्मा	आत्मा–जीव	आत्मा–जीव
अभग्ग	अभग्न	अभंग	अभग्न–भांगेल नहीं
अभयदय	अभयदय	अभयदान देनेवाले	अभय देनार
अभिथुअ	अभिष्टुत	स्तुति कि गई	स्तुति करेल
अभिनदण	अभिनन्दन	अभिनन्दन (चौथा तीर्थंकर)	अभिनन्दन (चौथा तीर्थंकर)
अभिहय	अभिहत	चोट पहुंचाया हुआ	सामा आवताने हणेल
अयल	अचल	स्थिर	स्थिर
अर	अर	अरनाथ (अठारहवाँ तीर्थंकर)	अरनाथ (अढारमा तीर्थंकर)
अरिहंत	अर्हत्	तीर्थंकर और केवली	तीर्थंकर अने केवली
अरूअ	अरूज	रोग रहित	रोग विनाना
अव्वाबाह	अव्याबाध	बाधा रहित	बाधा–पीडा रहित
अविराहिअ	अविराधित	अखण्डित	अखंडित
अहिय	अधिक	अधिक–विशेष	[illegible]

आ

आइगर	आदिकर	धर्मकी शुरुआतकरनेवाले.	धर्मनी आदि करनार
आइच्च	आदित्य	सूर्य	सूर्य
आगार	आकार	आगार-छूटछांट	आगार-छुटछाट
आणा	आज्ञा	आज्ञा-हुक्म	आज्ञा-समति
आयरिय	आचार्य	साधुसंघ का नायक -आचार्य महाराज	साधुसंघनो ऊपरी, जिनागम सूत्र अने अर्थना जाणकार
आयाहिण	आदाक्षिण	दक्षिणसे, जमणी तरफसे.	दक्षिणथी, जमणी तरफथी.
आराहिय	आराधित	आराधन किया-हुआ	आराधना करेल
आरोग्ग	आरोग्य	आरोग्य-निरोगीपन	आरोग्य-निरोगीपणुं

इ

इच्छाकार	इच्छाकार	इच्छापूर्वक	गुरुनी इच्छानुसार दरेक कार्य करवुं
इच्छामि	इच्छामि	मैं चाहता हूं	हु इच्छुं छु
इरियावहिया	इर्यापथिका	रास्ते पर चलनेसे जो क्रिया होता है वह	रस्ते चालतांक्रिया लागे ते.

उ

उज्जोअगर	उद्योतकर	प्रकाश करने वाले	प्रकाशना करनार
उड्डुअ	उद्‍गारित	डकार	ओडकार
उत्तम	उत्तम	उत्तम-श्रेष्ठ	उत्तम (श्रेष्ठ)
उत्तरीकरण	उत्तरीकरण	उत्कृष्टशुद्धि	विशेष शुद्धि करवीते
उत्तिंग	उत्तिङ्ग	चींटि आदि के बिल	कीडी विगेरे जीवना दर
उद्दविय	उद्द्रावित	हैरान किया हुआ	उपद्रव (त्रास) पमाडेल
उवज्झाय	उपाध्याय	पढाने वाले मुनि	भणावनार मुनि, उपाध्यायमहाराज
उसभ	ऋषभ	श्री ऋषभदेव (आदि-नाथजिन)	ऋषभदेव (आदिनाथ जिन)
उसासिअ	उच्छ्वसित	उच्छ्वास	उच्छ्वास

ए.

एगिंदिय	एकेन्द्रिय	एकइन्द्रियवाले	एकइन्द्रियवाळा
एवमाइ	एवमादि	इत्यादि	इत्यादि
एवं	एवं	इस प्रकार	ए प्रकार
एस	एष	यह	आ (ए)

कुंथु	कुन्थु	कुन्थुनाथ (सत्रहवाँ जिनवर)	कुंथुनाथ (सत्तरमा तिर्थंकर)
केवलि	केवलिन्	केवलज्ञानी	केवली
		ख.	
खासिअ	कासित	खांसी	खांसी, उधरस
खेलसचाल	श्लेष्मसंचाल	कफ का संचार	कफनो सचार
		ग.	
गमणागमण	गमनागमन	जाना आना	जवुं आववुं
गरिहामि	गर्हे	विशेष निन्दा करता हूं	धिकारूं छुं
		च.	
च	च	और (समुच्चय वाचक अव्यय)	अने (समुच्चय वाचक अव्यय)
चउरिंदिय	चतुरिन्द्रिय	चार इन्द्रियवाला	चार इंद्रियवाला
चउविस	चतुर्विंशति	चौवीस	चौवीश
चक्कवट्टि	चक्रवर्ति	चक्रवर्ति (छःखंड राज्य का भोक्ता)	चक्रवर्ति (छःखंड राज्यना भोगवनार)
चक्खुदय	चक्षुर्दय	नेत्र देनेवाला	ज्ञानरूप नेत्र देनारा

चंद	चन्द्र	चन्द्रमा	चन्द्रमा
चंदप्पह	चन्द्रप्रभ	चन्द्रप्रभ (आठवा जिनवर)	चन्द्रप्रभ (आठमा जिनवर)
चाउरन्त	चतुरन्त	चार गतिका अन्त करनेवाले	चार गतिने जीतनार
चेइय	चैत्य	ज्ञान स्वरूप	ज्ञान स्वरूप

छ.

छीअ	छिक्का, क्षुत	छींक	छींक

ज.

जभाइअ	जृम्भित	उवासी	बगासुं
जाणियव्व	ज्ञातव्य	जानना	जाणवुं
जाव	यावत्	जबतक	ज्यासुधी
जावय	जापक	जिताने वाले	जितावनार
जिअभय	जितभय	भयको जीतनेवाले	भयने जितनार
जिण	जिन	रागद्वेष को जीतनेवाले	रागद्वेषने जितनार
जिणवर	जिनवर	,,	,,
जीव	जीव	जीव (प्राणी)	जीव (प्राणी)

जीवदय	जीवदय	जीवन को देनेवाले	जीवनने देनार
जीविय	जीवित	जीवन	जिंदगी
जोग	योग	योग—व्यापार	योग—व्यापार
		झ.	
झाण	ध्यान	ध्यान (एकाग्रमन)	ध्यान (एकाग्रमन)
		ठ.	
ठाण	स्थान	स्थान (जगह)	स्थान
ठामि	तिष्ठामि	करता हूं (स्थिर रहता हूं)	करुं छुं (स्थिर रहुं छु)
		ण.	
णमुक्कार	नमस्कार	नमस्कार	नमस्कार (प्रणाम)
णमो	नमः	”	” ”
		त.	
तंजहा	तद्यथा	इस तरह	ते-जेम छे तेम
तस्स	तस्य	उसका	तेनु

तह	तथा	तथा	[illegible]
तारय	तारक	तारने वाले	तारनार
ताव	तावत्	तवतक	त्यां सुधी
तिक्खुत्तो	त्रिकृत्वः	तीन बार	त्रण वार
तित्थयर	तीर्थंकर	तीर्थंकर (धर्मतीर्थकी स्थापना करने वाले)	तीर्थंकर (साधु साध्वी श्रावक श्राविकानी स्थापना करनार)
तिन्न	तीर्ण	(संसारसे) तिरेहुए	भवरूपी समुद्रने तरेल
तिविह	त्रिविध	तीन प्रकार	त्रण प्रकार
तीरिय	तीरित	पार (समाप्त) किया	पार उतारेल
तेइंदिय	त्रीन्द्रिय	तीन इन्द्रिय वाला	त्रण इंद्रिय वाळा

द.

दग	उदक	पानी	पाणी
दिट्ठिसंचाल	दृष्टिसञ्चाल	दृष्टिका सचलन	दृष्टिनुं चलन
दिंतु	ददन्तु	देवें	आपो
दिसंतु	दिशन्तु	देवें	आपो

दीवोत्ताण	द्वीपत्राण	द्वीपसमान प्राण वचाने वाले	वेटसमान प्राण वचावनार
दुक्कड	दुष्कृत	पाप	पाप
दुप्पणिहाण	दुष्पणिधान	खोटेमार्गमें प्रवृत होना	खराबमार्गे जवुं
दुविह	द्विविध	दोप्रकार	वेप्रकार
देवय	दैवत	देवस्वरूप	देवस्वरूप
		ध.	
धम्म	धर्म	धर्मनाथ (पन्द्रहवां जिनवर)	धर्मनाथ (पंदरमा जिनवर)
धम्मातित्थयर	धर्मतीर्थकर	धर्मरूप तीर्थको स्थापन करनेवाले	धर्मरूपतीर्थना करनार
धम्मदय	धर्मदय	धर्मके दाता	धर्मना देवा वाला
धम्मदेसय	धर्मदेशक	धर्मके उपदेशक	धर्मना उपदेश देवावाला
धम्मनायग	धर्मनायक	धर्मके नायक	धर्मना नायक
धम्मसारहि	धर्मसारथि	धर्मके सारथि	धर्मना सारथि
धम्मवर			

न	न	नहीं	नहि
नमिजिण	नमिजिन	नमिनाथजी (२१ वा जिनवर)	नमिनाथजी (२१ मा जिनवर)
नमुत्थु	नमोस्तु	नमस्कार हो	नमस्कार थाओ
नमसामि	नमस्यामि	मैं नमस्कार करता हूं	हुं नमु छु
नवम	नवम	नववाँ	नवमा
निग्घायणट्ठ	निर्घातनार्थ	नाश करने के लिये	नाश करवाने माटे
निन्दामि	निन्दामि	मे निन्दा करता हू	हुं निंदु छुं
निम्मलयर	निर्मलतर	विशेष निर्मल	विशेष निर्मल
नियम	नियम	नियम-मर्यादा	नियम-मर्यादा
नीससिअ	निःश्वसित	निःश्वास	निःश्वास

प.

पउमप्पह	पद्मप्रभ	पद्मप्रभ (छट्ठा जिनवर	पद्मप्रभ (छट्ठा जिनवर)
पच्चक्खामि	प्रत्याख्यामि	त्याग करता हूं	त्यजुं छुं

पंच	पञ्च	पांच	पांच
पंचिंदिय	पञ्चेन्द्रिय	पांच इन्द्रियवाला	पांच इन्द्रियवाला
पज्जुवासामि	पर्युपासे	मैं सेवा करता हू	हुं सेवा करुं छुं
पडिक्कमामि	प्रतिक्रमामि	मैं प्रतिक्रमण करता हूं	हुं-प्रतिक्रमु छुं आलोचुं छुं
पडिक्कमिउं	प्रतिक्रामितुं	निवृत्त होने के लिये	निवर्तवाने
पढ़म	प्रथम	पहिला (मुख्य)	पहेलुं
पणग	पनक	पांच रंगकी सेवा- छ (काई)	पांचरंगी सेवाल- लील फूल
पणासय	प्रणाशन	नाश करने वाला	नाश करवा वाला
पयासयर	प्रकाशकर	प्रकाश करनेवाले	प्रकाश करनार
पयाहिणा	प्रदक्षिणा	प्रदक्षिणा	प्रदक्षिणा
परियाविय	परितापित	कष्ट पहुँचाया	दुःख दीधुं होय
पसीयंतु	प्रसीदन्तु	प्रसन्न हों	प्रसन्न थाओ
पहीणजरमरण	प्रहीणजरमरण	बुढापे तथा मरणसे मुक्त	वृद्धावस्था तथा मर-

पाणक्कमण	प्राणाक्रमण	प्राणोंको दाबना	प्राणी (जीव)ने कचरवा
पायच्छित्त	प्रायश्चित्त	आलोचना	प्रायाछित्त
पारेमि	पारयामि	पारूं (समाप्तकरूं)	पारुं (समाप्तकरूं)
पालिअ	पालित	पाला	पाल्युं
पाव	पाप	पाप (दुष्कृत)	पाप
पास	पार्श्व	पार्श्वनाथजी (२३ वें तीर्थंकर)	पार्श्वनाथजी
पित्तमुच्छा	पित्तमूर्च्छा	पित्तविकार की मूर्च्छा	पितना विकारनी मूर्च्छा
पुप्फदंत	पुष्पदन्त	पुष्पदंत (सुविधिनाथजी का दूसरा नाम)	पुष्पदंत (सुविधिनाथनुं बीजुं नाम)
पुरिसवरपुंडरीय	पुरुषवर—पुण्डरीक	पुरुषों में श्रेष्ठ—कमल के समान	पुरुषोमां श्रेष्ठ कमळनी समान
पुरिसवरगन्ध-हत्थि	पुरुषवर गन्ध-हस्ति	पुरुषों में श्रेष्ठ गन्धहस्ति के समान	पुरुषोमां श्रेष्ठ गन्धहस्ति समान
पुरिसुत्तम	पुरुषोत्तम	पुरुषों में श्रेष्ठ	पुरुषोमा उत्तम

रेससीह	पुरुषसिंह	पुरुषों में सिंहके समान	पुरुषोमां सिंह समान
		फ.	
फासिय	स्पृष्ट	अंगीकार किया	फरसेलुं, कायाथी पालन करेल
		ब.	
वीयक्कमण	वीजाक्रमण	वीजको दावना	वीजने कचरवुं
वुद्ध	वुद्ध	तत्व को जानने वाले	तत्वने जाणनार
वेइंदिय	द्वीन्द्रिय	दो इन्द्रियवाला	वे इन्द्रियवाला
वोहय	वोधक	तत्ववोध देनेवाले	तत्वने जणावनार
वोहिदय	वोधिदय	सम्यक्त्व देनेवाले	सम्यक्त्व देवावाला
वोहिलाभ	वोधिलाभ	सम्यक्त्व का लाभ	सम्यक्त्वनी प्राप्ति
		भ.	
भगवं	भगवन्	हे गुरु महाराज !	हे गुरु महाराज !
भंते	भगवन्,भदन्त !	हे भगवन् !	हे भगवन् !
भमली	भ्रमरी	चक्कर	चक्कर (फेर)
	भवति	हो	थाय छे

		म	
मक्कडासंताण	मर्कटसन्तान	मकड़ी के जाल	करोंलियानी जाल
मग्गदय	मार्गदय	(धर्म) मार्ग के दाता	धर्म मार्गना दायक
मगल	मङ्गल	मंगल (शुभ)	मंगळ (शुभ)
मट्टी	मृत्तिका	मिट्टी	माटी
मण	मनस्	मन	मन
मम	माम्	मुझको	मने
मल्लि	मल्लि	मल्लिनाथ (१९ वां जिन)	मल्लिनाथ (१९मा जिन)
माहिय	माहित	पूजनको मास	पूजायेल, महिमा करेल
मिच्छा	मिथ्या	निष्फल	निष्फल
मुणिसुव्वय	मुनिसुव्रत	मुनिसुव्रतनाथ (२०वाजिन)	मुनिसुव्रत
मुत्त	मुक्त	छुटे हुए	छुटेल
मोअग	मोचक	छुड़ाने वाले	छोड़ावनार
मोण	मौन	मौन (चुप)	मौन

र.

रिट्ठनेमि	अरिष्टनेमि	अरिष्टनेमि (२२ वां जिनवर)	अरिष्टनेमि

ल.

लेसिय	श्लेषित	आपस में या जमीन पर मसला हुआ	परस्पर अथवा जमीन साथे घसेल.
लोअ	लोक	लोक (जगत्)	लोक
लोग	लोक	लोक	लोक
लोगनाह	लोकनाथ	लोगों के नाथ	लोकना नाथ
लोगपईव	लोकप्रदीप	लोगों के लिये दीपक के समान	लोकने माटे दीपक समान
लोगपज्जोअगर	लोकप्रद्योतकर	लोगो में उद्योत करने वाले	लोकमां उद्योत करनार
लोगाहिअ	लोकाहित	लोगों का हित करने वाले	लोकना हितकारक
लोगुत्तम	लोकोतम	लोगों में उत्तम	लोकमा उत्तम

व.

वत्तिय	वर्तित	धूल आदिसे ढांका हुआ	धूल आदिथी ढांकेल
वंदामि	वन्दे	मैं स्तुति करता हूं	हु स्तुति करु छुं
वंदिय	वन्दित	वन्दन को प्राप्त	वंदायेल
वद्धमाण	वर्द्धमान	वर्द्धमान स्वामी (२४ वां जिनवर)	महावीर स्वामी २४मा जिनवर
वय	वचस्	वचन	वचन
वय	व्रत	व्रत (धार्मिक नियम)	व्रत
ववरोविय	व्यवरोपित	छुड़ाया हो	जुदा कर्या होय
वायनिसग्ग	वातनिसर्ग	वायुका सरना	वायुनु निकलवुं
वासुपुज्ज	वासुपूज्य	वासुपूज्य (१२ वांजिन)	वासुपूज्य (बारमा जिनवर)
विमल	विमल	विमलनाथ (१३ वां जिनवर)	विमलनाथ (१३ मा जिनवर)
वियट्टछउम	विवृत्तछद्मस्थ	घाति कर्मसे रहित	घाति कर्मथी रहित

विराहणा	विराधना	विराधना (जीव-का विनाश)	विराधना (जीवनो विनाश)
विराहिय	विराधित	पीडित किया हुआ	दुःखी करेल
विसल्ल	विशल्य	(तीन) शल्यरहित	शल्यरहित
विसोहि	विशोधि	विशेष शुद्ध	विशेष शुद्ध
विहुयरयमल	विधूतरजोमल	पापरज के मलसे रहित	पापरजना मेलथी रहित
वोसिरामि	व्युत्सृजामि	अलग करता हूं, हटाता हूं, त्यजुं छुं	

स.

सक्कारेमि	सत्करोमि	मै सत्कार करता हूं	हुं सत्कार करुं छुं
संकमण	संक्रमण	खूंदना	कचरवुं
संकामिय	संक्रामित	रखा हो	राख्या होय
संघाइय	संघातित	इकट्ठा किया हुआ	एकठुं करेल
संघट्टिय	संघट्टित	छुआ हुआ	अड़केल, स्पर्श करेल
संति	शान्ति	शान्तिनाथ (१६ वां जिनवर)	शान्तिनाथ (१६ मा जिनवर)

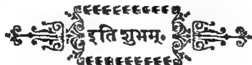
सदिसह	सन्दिशथ	आज्ञा दीजिये	आज्ञा आपो
समायरियव्व	समाचारितव्य	आदरना	आचरवुं
समाहिवर	समाधिवर	श्रेष्ठ समाधि	श्रेष्ठ समाधि
संपत्त	संप्राप्त	प्राप्त करने वाले	पामेल
संपाविउं	संप्राप्तुं	पाने को	पामवाने
संबुद्ध	संबुद्ध	वोध को पाये हुए	वोध पामेल
संभव	संभव	संभवनाथ (तीसरा जिनवर)	संभवनाथ (त्रीजा जिनवर)
सम्माणेमि	सन्मानयामि	मैं सन्मान देता हू	हु सन्मान करुं छु
सयं	स्वय	स्वयं-अपने आप	स्वय पोतानी मेळे
सरणगइपइट्ठ	शरणगतिप्रविष्ट	चारगति में पडने वाले जीवों के शरण	चार गतिमां पडता जीवोंने आधारभूत
सरणदय	शरणदय	शरण देनेवाले	शरण देवावाला
सव्व	सर्व	सव	सर्व (वधा)
सव्वदरिसि	सर्वदर्शिन्	सर्वदर्शी	सर्व वस्तुने देखनार

सव्वन्नु	सर्वज्ञ	सम्पूर्ण ज्ञानवाला	सर्व वस्तुने जाणनार
सागरवर गंभीर	सागरवर गम्भीर	महासमुद्र के समान गम्भीर	मोटा सागरनी पेठे गंभीर
सामाइय	सामायिक	सामायिकव्रत	सामायिक व्रत
सावज्ज	सावद्य	पाप सहित	पाप सहित
साहु	साधु	साधु (मुनि)	साधु (मुनि)
सिज्जंस	श्रेयास	श्रेयांसनाथ (११ वां जिनवर)	श्रेयांसनाथ (११ मा जिनवर)
सिद्ध	सिद्ध	सिद्ध भगवान्	सिद्ध भगवान्
सिद्धि	सिद्धि	सिद्धि-मुक्ति	सिद्धि-मुक्ति
सिद्धिगइनामधेय	सिद्धि गति नामधेय	सिद्धि गति नामक	सिद्धिगति छे नाम जेनुं
सिव	शिव	उपद्रव रहित	उपद्रव रहित
सीअल	शीतल	शीतलनाथ (१० वां जिन)	शीतलनाथ (१० मा जिन)

सुपास	सुपार्श्व	सुपार्श्वनाथ (सातवा जिन)	सुपार्श्वनाथ (सातमा जिन)
सुमइ	सुमति	सुमतिनाथ (पांचवां जिनवर)	सुमतिनाथ (पांचमा जिनवर)
सुविहि	सुविधि	सुविधिनाथ (नववा जिनवर)	सुविधिनाथ (नवमा जिनवर)
सुहुम	सूक्ष्म	सूक्ष्म	सूक्ष्म
सोहिय	शोधित	शुद्ध किया हो	शुद्ध कर्युं होय

ह.

हरियक्कमण	हरिताक्रमण	हरि वनस्पति को दावना	लीली वनस्पतिने कचरवी
हवइ	भवति	है	छे
हुज्ज	भवतु	हो	होजो



॥ अन्तिम-मङ्गलम् ॥

शिवमस्तु सर्वजगतः
परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः ।
दोषाः प्रयान्तु नाशं
सर्वत्र सुखीभवतु लोकः ॥ १ ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं,
सर्वकल्याणकारणम् ।
प्रधानं सर्वधर्माणां,
जैनं जयति शासनम् ॥ २ ॥



॥ श्री जय जिनद्राय नम ॥

श्रीजैन

स्तवन सभ्झाय संग्रह

॥ प्रसिद्ध कर्ता ॥

भैरोदान सेठिया

उदैकरण स्मरणार्थ प्रकाशितं ।

वीर सम्वत् २४४८ विक्रम सम्वत् १९७८

मुल्य प्रेम से वाँचना ।

कलकत्ता
२०१, हरिसन रोड के नरसिंह प्रेससे
बाबू अमिचन्द गोलछा
द्वारा मुद्रित ।


॥ अनुक्रमणिका ॥

॥ श्री वीतरागायनम ॥

॥ शुद्धि-पत्र ॥

हेडिंग छोडकर पक्ति (ओली) गिणीजे।

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
३	१३	स्याद	स्याद्
३	१६	अरवींद	अरविंद
४	१	स्याद	स्याद्
४	१३	मथएण	मत्थेण
५	६	ठाणाउ ठाण	ठाणाउठाण
६	१०	तित्थयरे जिणे	तित्थय रे जिणे
६	५	मस्त्य	मक्त्यय
१३	५ तथा १३	केत है	कहत है
१३	१६	मारत	मारत
१४	५ तथा १३	केत है	कहत है
१५	२	यभाइ	धुभाइ
१५	५ तथा १३	केतह	कहत है
१७	१८	प्रतिवूभव्या	प्रतिबूमया
१६	१६	सदरी	सुदरी
२१	१	जाणी	जाणे

२१	५	वाघो	वाघी
२४	४	अद्द्	अद्द्
२४	६	विष्ण	विष्णु
२५	१	जिन	गेन
२५	८	पनात	पसात
२७	१३	कोजे	कीजे
२६	१६	कोढ	कोढ
३१	७	वाधे	वधे
३२	४	पाश्य	पार्श्व
३२	१८	पारर्श्व	पार्श्व
३३	४	धरणंद्र	धर्णेंद्र
३६	५	सिद्ध तीर्थ	तीर्थ सिद्धा
४४	३	विसलपुर	विम्मालापुर
४५	२	जाणो	जाणु
४५	२	मेरे	मेरो
४६	८	उतभ	उतम
६७	२	रुच्यो	रच्यो
७६	१	पराण्या	परण्या
७८	८	डरियामाणी	डरियामणी
८५	६-१०	भाओ तक रहा सुरज विच डवके लेसी चमकाणारे	भाया तक रहा है जीव चिढे परकाल सींचाणा रे
८५	१२	अनभव	अनुभव

८६	१	भवक	भविक
८६	१	प्रीति	प्रति
८८	१३	लासी	विलासी
६०	१६	एवाता	आ माता
६०	१६	दीजो	दाजी

नोट—इनके अतिरिक्त और भी अशुद्धियाँ हैं, ह्रस्व दीर्घ अनुस्वार वगैरह जो तुरन्त समझ में आ जावे वैसी अशुद्धियाँ नहीं निकाली हैं, सो सुज्जन शुद्ध करके पढ़ें, और अशुद्ध लिपा देख कर क्षमा करें।



॥ श्रीगौतमाय नमः ॥



यह पुस्तक यत्न से रक्खे
जयणा से वॉचे

कानो मत अनुस्वार ह्रस्व दीर्घ अशुद्ध टुटी भाषा में लिख्यो हुयो विद्वान कृपा कर सुधार लेवे प्रशिद्ध कर्त्ता की यही नम्र विनंती है ।



* श्रीवीतरागाय नमः *

श्रीजैन अमृत स्तवन संग्रह।

॥ अथ श्रीनवकार मन्त्र प्रारम्भः ॥

॥ णमो अरिहंताणं ॥ णमो सिद्धाणं
॥ णमो आयरियाणं ॥ णमो उवज्झायाणं ॥
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ एसो पंच णमुक्कारो ॥
सव्व पाव प्पणासणो ॥ मंगलाणं च सव्वेसिं ॥
पढमं हवइ मंगलं ॥ इति नमस्कारः ॥ १ ॥
(पद ९ संपदा ८ गुरु अक्षर ७ लघु अक्षर ६१ सर्व अक्षर ६८)

॥ दोहा ॥

शासनपति श्री वीर जिन त्रिभुवन दीपक जाण।
भवउदधी तारण तरण वाहण सम भगवान ॥१॥
चरण कमल युग तेहना, वंदे इन्दनरेन्द ।
चन्द्र नरेन्द्र फनीन्द तसु सेवे सुरनर वृन्द ॥२॥
तासु कृपा से उद्धरया जीव असंख्य सुज्ञान ।
लहीशिवपदभवउदधितरिअजरअमरसुखथान॥३
तसु मुखथी वाणी खरि जिम श्रावण बरसात ।
अनन्त नयात्मकज्ञानथी भविजन दुःखमिटात ॥४
ते वाणी सद्गुरु मुखे जे भवि हृदय धरन्त ।
स्वपर भेद विज्ञान रस अनुभव ज्ञान लहंत ॥५॥
उत्तम नर भव पायकर शुद्ध सामग्री पाय ।
जो न सुणे जिन वचन रस अफल जमारो जाय॥६
ते माटे भवि जीवकूं अवश्य उचित एकाज ।
जिनवाणीप्रथमहीश्रवणअनुक्रमज्ञानसमाज॥७॥
जिनवाणी के श्रवण विन शुद्ध सम्यक् न होय।
सम्यक्विनआत्मानंदरसचारित्रगुणनहिंजोय॥८॥
शुद्धसम्यक् साधन विना करणी फल शुभ बंद ।

सम्यक्रत्न साधनथकी मिटे तिमिर सविदन्ड ॥६॥
समकित भेद जिन वचनमे भेद पर्याय विशेष ।
पिणमुख्य दोय प्रकार है ताको भेद अलेख ॥१०॥
निश्चय अरु व्यवहार नय ए दोनुं परिमाण ।
दधि मथने घृत काढ़वा ते तो न्याय पिछाण ॥११॥
देव धर्म गुरु आस्ता तजे कुदेव कुधर्म ।
ए व्यवहार सम्यक्त कही बाह्य धर्मनो मर्म ॥१२॥
निश्चय सम्यक्त नो सही कारणछे व्यवहार ।
ए समकित अराधता निश्चय पण अवधार ॥१३॥
निश्चय सम्यक् जीवने पर परिणति रस त्याग ।
निज स्वभावमें रमणता शिवसुखनो ए भाग ॥१४॥
चेहुं सम्यक्तदलहे समझे नव तत्त्व ज्ञान ।
नय निक्षेप परिमाण सुं स्याद वाद परिमाण ॥१५॥
द्रव्य क्षेत्र इणही तणा काल भाव विज्ञान ।
सामान्य विशेष समझते होय नयात्मकज्ञान ॥१६॥
चर्म जिन चौवीसमा प्रणमु पद अरविंद ।
वर्ते पंचम काल मे शासन जस सुख कद ॥१७॥
जिन वाणीना भेदनो मत करजो कोई हांस ।

स्याद् वाद् नय शुद्ध करो ये म्हारी अरदास ॥१८॥

शब्दार्थ—वाहण (जहाज) चरणकमल (पग) युग (दोय) नरेन्द (राजा) फनीन्द (नागकुमार देव) वृन्द (वहुत) उद्धारया (निस्तार किया) शिवपद (मुक्ति) भव उदधि (संसार समुद्र) नयात्मक (सातनययुक्त आत्म ज्ञानसे भरी हुई) विज्ञान (जानपना) लहंत (लिया) दरश (देखना) तिमिर (अन्धकार) सवि दन्द (सव दुःख) मर्म (सार) आराधता (साधता) अवधार (जानना) परपरिणति (परस्वभाव) तदलहे (याने जवपावें)

॥ अथ तिक्खुत्तोरी पाटी लिख्यते ॥

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेमि वंदामि णमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं ॥ पज्जुवासामि मथएण वंदामि ॥ १ ॥

॥ अथ इरियावहीयाकी पाटी लिख्यते ॥



❋ इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं पड़िक्कमामि, इच्छं इच्छामि, पड़िक्कमिउं इरियावहियाए, विराहणाए, गमणागमणे पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे ओसाउत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कड़ा संताणा संकमणे जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, ते इंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाउ ठाण संकामिया, जीवियाउ, ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ १ ॥ ॥इति॥



॥ अथ तस्सउत्तरीनी पाटी लिख्यते ॥



तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं-विसोही करणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं

कम्माणं णिग्घायणट्ठाए. ठामि काउस्सग्गं, ❋
+अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहि खेल संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, णमुक्कारेणं, नपारेमि, ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं, वोसिरामि+ ॥१॥ ॥ इति ॥



॥ अथ लोगस्सकी पाटी लिख्यते ॥



लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म तित्थयरे जिणे ॥
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥ १ ॥

❋ नोट —उपरके दोनो सूत्रोंके पद ३२ सपदा ८ गुरु अक्षर २४ लघु अक्षर १७५ सर्व अक्षर १९९।

+ नोट —पद २८ सपदा ५ गुरु १३ लघु १२७ सर्व अक्षर १४०।

उसभमजियं च वंदे, संभव मभिणंदणं च सुमइं च ॥ पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ २ ॥ सुविहिं च पुप्फदंत, सीअल सिज्जंस वासुपुज्जं च ॥ विमल मणंत च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथुं अरं च मल्लिं वंदे मुणिसुव्वय नमि जिणं च ॥ वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह, वद्धमाणं च ॥४॥ एवं मए अभिथुआ, विहुयरयमला, पहीण जरमरणा ॥ चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥५॥ कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ॥ आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवर मुत्तमं दिंतु ॥६॥ चदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयास-यरा ॥ सागर वर गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥ इति ॥

(पद २८ सपदा २८ गुरू २७ लघु २३१ सर्व अक्षर - २५८)

—०॥०—

॥ अथ सामायिक लेवणकी पाटी लिख्यते ॥

करेमि भंते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जावनियमं मुहूर्त* पज्जुवासामि, दुविहं, तिविहेणं, नकरेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तस्सभंते, पड़िक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥ १ ॥

॥ अथ श्री नमुत्थुणंकी पाटी लिख्यते ॥

नमुत्थुणं अरिहंताणं, भगवंताणं, आइगराणं तित्थगराणं, सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवर पुंडरीयाणं, पुरिसवर गंधहत्थीणं; लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं; अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, (जीवदयाणं) बोहिदयाणं; धम्मदयाणं, धम्मदेसियाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्म-

* नोट—जितनी समायिक करनी होवे उतना मुहूर्त बोलणा होय तो टारलो काल मिलाय ने बोलणो।

रचाउरंतचक्कवट्टीणं; (दि्वोताण सरणगइपइट्ठा) अप्पडिहय वरनाण दंसणधराण, विअट्ट छउ-माण; जिणाण जावयाण, तिन्नाण तारयाण, बुद्धाण बोहयाण, मुत्ताण मोयगाण; सव्वन्नूण, सव्वदरिसीण, सिव मयल मरुअ मण त मक्ख्य मव्वाबाह मपुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाण संपत्ताण, नमो जिणाण जि अभयाण।

॥ इति ॥

(पद ३३ सपदा ९ गुरू २९ लघु २३३ सर्व अक्षर २६२)

॥ अथ सामायिक पारवाकी पाटी लिख्यते ॥

नवमा सामयिक व्रतना पंच अइयारा जाणीयवा- नसमायरियवा तंजहा ते आलोउं मणदुप्पणिहाणे वय दुप्पणिहाणे काय दुप्पणि हाणे सामाइयस्स अकरणयाए, सामाइयस्स अणवुठियस्स करणयाए तस्स मिच्छामी दुक्कड़ सामायिकने विषे दस मनना दस वच-नना बारे कायाना ए बत्तीस दोप माहेलो कोई दोपलागो होयतो मिच्छामि दुक्कड़, आहार

संज्ञा, भय संज्ञा, मिहूण संज्ञा, परिग्गह संज्ञा ए चार संज्ञा माहेली कोई संज्ञा करी होय तो मिच्छामि दुक्कडं। स्त्री कथा, राज कथा, भक्तकथा, देशकथा ए माहेली कोई कथा करी होयतो मिच्छामि दुक्कडं। सामायिक समकाएणं, फासियं, पालियं, सोहियं, तिरियं, किर्त्तियं, आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवइ तस्समिच्छामि दुक्कडं ॥ ॥ इति ॥

— ❀ —

॥ अथ समायिक लेनेकी विधि ॥



पहला स्थानक (जागा) बैठको पुजणी मुहपती जोवे फेर जागा जतनासे पुंजे फेर बैठको (आसन) पुज कर बिछावे। आसण छोडके पूर्व तथा उत्तर दिशाकी तरफ मुह करके दो हाथ जोड़के पच अङ्ग नमाय ३ वख्त विधियुक्त तिक्खुत्ताके पाटसे वंदणा नमस्कार करके श्रीमहावीर स्वामीजी की तथा अपसे धर्माचार्य (गुरुदेव) की आज्ञा मागके "इरियावहिया" की पाटी "जीवियाउ ववरोविया तस्स मिच्छामि दुक्कड" सुधी भणनी, पछे "तस्सउत्तरी" की पाटी भण कर काउस्सग्ग करनो काउस्सग्गमें,

२) "इरियावहिया" की पाटी "जीवियाओ ववरोविया" पर्यंत नमे गुणनी "(१) नमो अरिहताए" मनमे कहकर काउस्सग पाडनो छे "(१) लोगस्स" की पाटी प्रगट कहणी, पछे "(१) करेमिभते" की पाटी "जाव नियम" सुधी कहीने आगल मुहूर्त्त घालणा हुवे तेके घालणा, पछे "पज्जुवासामि" से लेकर "अप्पाण वोसिरामि" सुधी पाठ कहणो, पछे नीचे बैठकर डावो गोडो ऊभो राख दोनु हाथ जोड कर "नमुत्थुण" की पाटी दोय वार कहणी, दुजे नमुत्थुणरे अन्तमें जहा ठाण सपत्ताण आवे उस स्थान पर "ठाण सपविउ कामस्स णमो जिणाण जि अभयाण" ऐसा बोलणा, पछे आसण माथे बैसीनें, समायिकका काल पूरा ना हुवे जहा तक ज्ञान-ध्यान करना या सिखा हुवा ज्ञान याद करना या नया बोल-चाल थोकड़ा सीखना या चितारना इसी तरहसे धर्म सम्बन्धी ज्ञान ध्यान करके समायिकका काल पूरा करना।

गुरु महाराज विराजता होवे पास बैठा हुवे तो गुरु महाराजके सन्मुख बैठे पुठ देवे नहीं, सज्जाय वखाण वाणी फुरमावता हुवे तो उसमें उपयोग रक्खे।

समायिक रा भन्ड उपगरण निर्विकार मान रहित रखे, चित-रामादि रहित स्थानक में समायिक करे समायिक में समायिक रा दोष टाले। १ मुहूर्त्त ४८ मिनटका समझो।

॥ इति सामायिक लेनेकी विधि समाप्तम ॥

— ❀ —

॥ अथ सामायिक पारनेकी विधि ॥

सामायिक पाडती वखत "१ इरियावहिया" की पाटी "तस्स उत्तरी" की पाटी कह कर काउस्सग्ग करनो, काउस्सग्गमें हाथ पैर मुह शरीर वगैरह हलाणा चलाणा नही, अपने शरीरको स्थिर रखना काउस्सग्ग मध्ये "१ लोगस्स" की पाटी मनमे कहणी, "णमो अरिहंताण" कह कर काउस्सग्ग पारनो, फेर १ लोगस्सरी पाटी प्रगट कहणी, पछे डावो गोडो ऊभो राखके दोनु हाथ जोड़ कर दोय नमुत्थुणकी पाटी दोयवार बोलणी. पछे नवमो सामायिक पारनेकी पाटी "न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कड" सुधी कह कर तीन वखत नवकार मन्त्र गुणके सामायिक ठिकाणे करना।

॥ इति सामायिक पारनेकी विधि समाप्तम् ॥

— ❀ —

पंच परमेष्ठी वन्दणा।

(सवैया एकत्रीशा)

श्रीअरिहत देवने।

नमुं श्री अरिहंत करमाको कीयो अंत,
हुवासो केवल वंत, करुणा भंडारी है;

अनिसे चोतीसधार, पेंतीस वाणी उच्चार,
समजावे नरनार, पर उपगारी है;
शरीर सुंदराकार, सूरजसो झलकार,
गुण है अनंत सार, दोष परिहारी है;
केतहै तिलोकरीख, मन, वच, काय करी;
लुली लुली वारंवार, वंदणा हमारी है ।

श्रीसिद्ध भगवन्तने

सकल करम टाल, वशकर लीयो काल,
मुक्तिमें रह्या माल, आतमाकूं तारी है;
देखत सकल भाव, हुवा है जगतराव,
सदाहि चायिक भाव, भये अविकारी है;
अचल अटल रूप, आवे नहि भवकूप,
अनुप सरुप उप, ऐसी सिद्ध धारी है,
केतहै तिलोकरीख, बतावो ए वास प्रभु,
सदाहि उगंते सूर, वन्दणा हमारी है ।

श्री आचार्य्यजीने ।

गुण है छतीस पूर, धारत धरम उर,
मारत करम क्रूर, सुमति विचारी है;

शुद्ध सो आचारवंत, सुंदर है रूपकंत,
भणिया सवी सिद्धांत, वांचणी सुप्यारी है;
अधिक मधुर वेण, कोई नहीं लोपे केण,
सकल जीवांका सेण, किरत अपारी है;
केत है तिलोक रीख, हितकारी देत सिख,
ऐसा आचारज ताकूं, वंदणा हमारी है।

श्री उपाध्यायजीने।

पढत अगेआरे अंग, कर्मासूं करे जंग,
पाखण्डीको मान भंग, करण हुंस्यारी है;
चउदे पूर्वधार, जाणत आगम सार,
भवियोंके सुखकार, भ्रमता निवारी है;
पढावे भविक जण, स्थिर कर देत मन,
तप करी तावे तन, ममता निवारी है;
केत है तिलोकरीख, ज्ञान भानु परतिख,
ऐसे उपाध्याय ताकूं, वंदणा हमारी है।

श्री साधुजीने।

आदरी संजम भार, करणी करे अपार,
सुमति गुप्तिधार विकथा निवारी है;

जयणा करे छऊ काय, सावद्य न बोले वाय,
बझाइ कषाय लाय, किरिया भंडारी हे;
ज्ञान भणे आठुं जाम, लेवे भगवन्त नाम,
धर्मको करे काम, ममताको मारी है;
केत है तिलोकरीख, कर्मोको टाले विख,
ऐसा मुनिराज ताकुं, वंदणा हमारी है ।

श्री गुरु वेवमें ।

जैसे कपड़ाको थान, दरजी वेतत आण,
खंड खंड करे जाण, देत सो सुधारी है;
काठके ज्युं सूत्रधार, हेमको कसे सुनार,
माटीके जो कुंभकार, पात्र करे त्यारी हे ;
धरती के कीरसाण, लोह के लुहार जाण,
सीलवाटो सीला आण, घाट घडे भारी है ;
केत है तिलोकरीख, सुधारे ज्यूं गुरु शीप,
गुरु उपकारी, नित लीजे वलिहारी हे ;
गुरु मित्र गुरुमात, गुरु सगा गुरुतात,
गुरु भूप गुरु भ्रात, गुरु हितकारी हे ;
गुरु रवि गुरु चन्द्र, गुरुपति गुरु इन्द्र,
गुरु देव, दे आनद, गुरु पद भारी हे ;

गुरु देत ज्ञान ध्यान, गुरु देत सनमान,
गुरु देत मोक्ष थान, सदा उपकारी है,
केत है तिलोकरीख, भली भली दीनी सिख,
पल पल गुरुजीको, वदणा हमारी है ॥

॥ अथ चोविश जिनवरका स्तवन लिख्यते ॥

राग प्रभाती ॥ प्रात उठी चोविश जिनवर को, स्मरण कीजे भाव धरी ॥ प्रा० ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति कुमति सब दूर हरी ॥ पद्म सुपास चदा प्रभू ध्यायो, पुष्प दंत हण्या कर्म अरी ॥ प्रा० ॥ १ ॥ शीतल जिन श्रेयांस वासु पुज्य, विमल विमल बुद्धि देत खरी ॥ अनन्त धर्म श्री शांति जिनेश्वर, हरियो रोग असाध्य मरी ॥ प्रा० ॥ २ ॥ कुंथुं अर मल्लि मुनिसुव्रतजी, नमी नेमि शिव रमणी वरी ॥ पार्श्वनाथ वर्द्धमान जिनेश्वर, केवल लह्यो भव ओघ तरी ॥ प्रा० ॥ ३ ॥ तुम सम नही कोई तारक दुजो, इम निश्चय मन मांहे धरी ॥ तिलोकरिख कहे जिम तिम करिने, मुक्ति देवो श्री प्रभू म्हेर करी ॥ प्रा० ॥४॥ इति ॥

॥ अथ श्री नवकार मंत्र स्तवन लिख्यते ॥

प्रथम श्री अरिहंत देवा ज्यांरी चौसठ इन्द्र करे सेवा ॥ मारग ज्यांरो शुद्ध खरो, श्री नवकार मंत्र जीरो ध्यान धरो ॥१॥ चोतीस अतिशय पेंतीस वाणी, प्रभू सघलारे मनरी जाणी ॥ कर जोडी ज्यांसूं विनती करो ॥ श्री० ॥२॥ भव जीवाने भगवंत तारे, पछे आप मुगत मांहे पाउधारे ॥ सकल तीर्थंकरनो एकसिरो ॥ श्री० ॥ ३ ॥ पनरे भेदे सिद्ध सीधा, ज्यां अष्ट करमाने खयकीधा ॥ शिवरमणीने वेग वरो ॥ श्री० ॥ ४ ॥ चौदेइ राजरे उपर सही, जठे जनम जरा कोई मरण नही ॥ ज्यांरो भजन कियां भव सायर तिरो ॥ श्री० ॥५॥ तीजे पद आचारज जाणी, जिणरी वल्लभ लागे अमृत वाणी ॥ तन मनसूं ज्यांरी सेवाकरो ॥ श्री० ॥६॥ संघ मांहे सोवे स्वामी, जिके मोक्ष तणा हुय रह्या कामी ॥ ज्यांने पूज्यां म्हारो पाप झरो ॥ श्री० ॥ ७ ॥ उपाध्यायजीरी बुद्धि भारी, ज्या प्रतिबूझ्या वहु नरनारी ॥

सूत्र अरथ जो करेसखरो ॥ श्री० ॥ ८ ॥ गुणपंच वीसे करी दीपे, ज्यांसूं पाखण्डी कोई नही जीपे ॥ दूर कियो ज्यां पाप परो ॥ श्री० ॥ ९ ॥ पंचमें पद साधू जीने पूजो, यां सरीखो निजर न आवे दूजो मिटाय देवे ते जनम जरो ॥ श्री० ॥ १० ॥ जो आतमारा सुख चावो तो थे पांच पदांजीरा गुण गावो क्रोड भवांरा करम हरो ॥ श्री० ॥११॥ पूज्य जेमलजीरे प्रसादे जोडी, सुणतां तूटे करमारी कोडी ॥ जीव छ कायारा जतन करो ॥ श्री० ॥ १२ ॥ सहेर बीकानेर चउ मासो रिखरायचंदजी इम भाखे ॥ मुक्ति चाहो तो धरमकरो ॥ श्री० ॥ १३ ॥ इति ॥

—०:-०—

॥ अथ श्रीगणधर स्तवन प्रारम्भ. ॥

चोपाईनी देशी ॥

एकादश गणधरनां नाम, प्रह उठीने करूं प्रणाम ॥ इन्द्रभूति पहेलो ते जाण, अग्निभूति बीजो गुणखान ॥ १ ॥ वायुभूति त्रीजो जग सार,

गणधर चोथो व्यक्त उदार ॥ शासनपति सुधर्म्मा सार, मंडित नामे छट्ठो धार ॥ २ ॥ मौर्यपुत्र ते सातमो जेह, अकंपित अष्टमगुणगेह ॥ मुनिवर मांहे जे परधान, अचलभ्रात नवमो ए नाम ॥ ३ ॥ नाम थकी होय कोडी कल्याण दशमो मेतारज अविरल वाण ॥ एकादशमो प्रभास कहेवाय, सुखसंपत्ति जस नामे थाय॥ ४ ॥ गाया वीर तणा गणधार, गुणमणि रयण तणा भंडार ॥ उत्तमविजय गुरुनो शिष्य, रत्नविजय वंदे निशदिश ॥ ५ ॥ इति ॥



अथ श्री सोल सतीनो छंद ।

आदिनाथ आदि जिनवर वंदी, सफल मनारथ कीजिए ॥ प्रभाते उठी मंगलीक कामे, सोल सतीना नाम लीजीए ॥ १ ॥ बालकुमारी जगहितकारी, ब्राह्मी भरतनी बेनडिए ॥ घट घट व्यापक अक्षर रूपे, सोल सतिमां जे वडिए ॥२॥ बाहू बल भगिनी सतीय शिरोमणी, संदरी नामे

ऋषभ सुताए ॥ अंक स्वरूपी त्रिभुवन मांहे, जेह अनोपम गुण जुताए ॥ ३ ॥ चंदनबाला बालपणेथी, शीयलवंती शुद्ध श्राविकाए ॥ उडदना बाकुला वीर प्रतिलाभ्या, केवल लही व्रत भाविकाए ॥ ४ ॥ उग्रसेन धुवा धारिणी नंदनी, राजेमती नेम वल्लभा ए ॥ जोवन वेशे कामने जीत्यो, संजम लेइ देव दुल्लभाए ॥ ५ ॥ पंच भरतारी पांडव नारी, द्रुपद तनया वखाणीए ॥ एकसो आठे चीर पुराणा, शीयल महिमा तस जाणीये ए॥ ६ ॥ दशरथ नृपनी नारी निरुपम, कौशल्या कुल चंद्रिकाए ॥ शीयल सलूणी राम जनेता, पुण्य तणी प्रणालिकाए ॥ ७ ॥ कौसंबिक ठामे संतानिक नामे, राज्य करे रंग राजियो ए ॥ तस घर घरणी मृगावती सती, सुर भुवने जश गाजीयो ए ॥ ८ ॥ सुलशा साची शीयले न काची, राची नहीं विषयारसे ए॥ मुखडूं जोतां पाप पलाए, नाम लेतां मन उल्लसे ए ॥ ९ ॥ राम रघुवंशी तेहनी कामिनी, जनकसुता सीतासतीए ॥ जग

सहू जाणी धीज करतां अनल शीतल थयो शीयलथी ए ॥ १० ॥ सुरनर वंदित शीयल अखंडित शिवा शिव पद गामिनी ए ॥ जेहने नामे निर्मल थइए, बलिहारी तसनामनी ए ॥ ११॥ काचे तांतणे चालणी बांधी, कूप थकी जल काढियूं ए ॥ कलंक उतारवा सतीय सुभद्रा, चंपा बार उघाड़ियूं ए ॥१२॥ हस्तीनागपुरे पांडु रायनी, कुंता नामे कामिनीए ॥ पाण्डव माता दसे दसारनी, वहन पतिव्रता पद्मिनीए ॥१३॥ शीलवती नामे शीलव्रत धारिणी, त्रिविधे तेहने वंदीये ए ॥ नाम जपंता पातक जाए, दरिसण दुरित निकंदी ए ॥१४॥ निषधानगरी नलह नरींदनो, दमयन्ती तस गेहिनी ए ॥ संकट पडता शीयलज राख्यूं, त्रिभुवन कीर्ती जेहनि ए ॥१५॥ अनंग अजीता जग जन पुजीता, पुफचूला ने प्रभावती ए ॥ विश्व विख्याता कामित दाता, सोलमी सती पद्मावती ए ॥१६॥ वीरे भाखी शास्त्रे साखी, उदय रतन भाखे मुदा ए॥ व्हाणो

वार्ता जे नर भणशे, ते लेशे सुख संपदा ए॥ १७ ॥ इति ॥

—*—

॥ श्री गौतम रासो लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

वीर नमूं शाशन राधणी तासे चरण चित लाय।
श्री गौतम गुण गावसूं तन मन ध्यान लगाय ॥

मगधदेश गुब्बरगांवजाणो तास वसु भूति मां सई वखाण तेनी कूख जातं गौतम विख्यातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१॥

सकल वेद विद्या में पारगामी तेने पंडित नमे शीश नामी एकदा गौतम होमं रचातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥२॥

तिहां प्रभु वीर विचरंत आया भवीजन देख बहु हरष पाया सुर इन्द्रादि समोसरण रचातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥३॥

देवना विमाण रण कंत आवे गौतम मन

पेख अति पो मावे देखो ए जग जोवा अमर आतं श्री इन्द्रभूती पाये प्रणमूं प्रभात ॥४॥

यज्ञ तज देव समोसरण पेठा इन्द्रभूति आणे आमर्ष सेठा यज तज देव कहां जातं श्री इन्द्रभूती पाये प्रणमूं प्रभातं ॥५॥

एतले देव दुंदुभी नाद वाजे यो इन्द्र जा लियो कोण गाजे अभी जाय कर हाथ हटातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभात ॥६॥

मान गजारूढ थई गौतम चाल्या पांचसौ शिष्य सव संग हाल्या शिष्य विरुदावली इसी मुख वधातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभात ॥७॥

सिंहासन जिन राज राजे समोसरण कल्प धजा डंड छाजे मानुसेण देख गौतम वोलातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥८॥

गिरह गण में जेम दीपक इन्द्र चंदा जेम जिणंद समोसरण सोहे छत्र त्रिय चवर हरि करत हाथं श्रीइन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥९॥

समोसरण सोपान जाय चढ़िया सुर नरा

सहू चित्र मंडिया गौतम प्रभु पेख आश्चर्य पातं
श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१०॥

मदन कुण मात प्रभुरूप आगे इन्द्रपाल
रया अरध भागे अहो अद्भुत रूप अघातं श्री
इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥११॥

ब्रह्मा विष्णु महेश माया यह तो कोई होय
जिनदेव राया गौतम बोले इसी मुख वधातं
श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१२॥

परछंद संदेहनो सद उत्तर दीनो गौतम
सहु शिष्य चरण लीनो अग्नि भूत आदि सब
समजातं श्री इन्द्रभूती पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१३॥

प्रभु त्रिपदी गौतम ने सुणाया तामें चौदह
पूरव रचाया गौतम स्वामी तणा जस जग छात
श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१४॥

सुन्दराकार सत हाथ देही दीपे जाणे सुर
नरा तणा रूप जीते प्रश्न पूछ ज्ञान संग राखे
भरातं श्री इन्द्रभूती पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१५॥

चौ नाण चौदह पूर्व धार धीरा लब्धि भंडार

जिन गुण गंभीराछट्ठ तप गौतम इसी विधि थातं श्री इन्द्रभूती पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१६॥

देव शर्म्मा प्रतिबोधं गौतम प्रयाणं वीर पोता मोक्ष थानं वीर निर्व्वाण गौतम सुणातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१७॥

गौतम मोहवश विलापात कीधा हो प्रभु मो भणी दगा केम दीधा सवास इण विरिया दूर पनातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं॥१८॥

यह तो वीतराग तू मोह पड़िया मोह छोडी केवल ले विचरिया घणा जीव तारी सिद्धा मे समातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥१६॥

घोर तप घोर सत ब्रह्म वाचा सुख सागरा अध्यात्म रंग राचा गौतम नामे ऋद्धि वृद्धि थातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमू प्रभातं ॥२०॥

उगणीस से साठ (१६६०) सन कातिक मास संखेपसे कीनो गौतम रासं सुजाण यह दुज प्रसाद गातं श्री इन्द्रभूति पाये प्रणमूं प्रभातं ॥२१॥ ॥ इति श्री गौतम रासो समाप्तम् ॥

अथ श्री लघु साधु वन्दनानी सज्झाय



साधुजीने वंदना नित नित कीजे, प्रह उग मते सूर रे प्राणी; नीच गतिमां ते नवि जावे, पामे ऋद्धि भरपूर रे प्राणी ॥ सा० ॥ १ ॥ मोटा ते पंच महाव्रत पाले, छकायरा प्रतिपाल रे प्राणी; भ्रमर भिक्षा मुनि सूझती लेवे, दोष वयांलिश टालरे प्राणी ॥ सा० ॥ २ ॥ ऋद्धि संपदा मुनि कारमी जाणे, दीधी संसारने पूठरे प्राणी; एहे पुरुषारी वंदगी करता, आठे करम जावे तूट रे प्राणी ॥ सा० ॥ ३ ॥ एक एक मुनिवर रसना त्यागी, एकेका ज्ञान भंडार रे प्राणी; एक एक मुनिवर वैयावच वैरागी, एना गुणनो नावे पार रे प्राणी ॥ स० ॥ ॥ ४ ॥ गुण सत्तावीस करीने दीपे, जीत्या परिसा बावीसरे प्राणी; बावन ते अनाचीरण टाले, तेने नमावुं मारुं शीशरे प्राणी ॥ सा० ॥ ५ ॥ जहाज समान ते संत मुनीश्वर भव्य जीव वेसे आयरे प्राणी; पर उपकारी मुनि

दाम न मांगे, देवे ते मुगती पोंचायरे प्राणी ॥ सा ० ॥ ६ ॥ ए चरणे प्राणी शातारे पावे, पावे ते लील विलासरे प्राणी; जन्म जरा अने मरण मिटावे, नावे फरी गर्भावासरे प्राणी ॥सा० ॥७॥ एक वचन ए सतगुरु केरो, जो वेसे दिलमांयरे प्राणी; नरक गतिमां ते नहिं जावे, एम कहे जिन-रायरे प्राणी ॥ सा० ॥ ८ ॥ प्रभाते उठीने उत्तम प्राणी; सुणो साधारो व्याख्यान रे प्राणी; ए पुरुषारो सेवा करतां, पावे ते अमर विमान रे प्राणी ॥ सा० ॥ ९ ॥ संवत अठारने वर्ष अड्त्री से, वुसी ते गाम चोमास रे प्राणी; मुनि आस्करणजी एणीपेरे जंपे, हुं तो उत्तम साधारो दास रे प्राणी; साधुजीने वंदणा नित नित कीजे ॥ १० ॥

॥ इति ॥

॥ समाप्तम् ॥



अथ श्री चिन्तामणी पार्श्वनाथनोंको छन्द।

॥ दोहा ॥

कल्पवेल चिंतामणी, कामधेनु गुण खान।
अलख अगोचर अगम गति, चिदानन्द भगवान
॥२॥ परम ज्योति परमात्मा, निराकार करतार
निर्भय रूप ज्योतीसरुप, पूरण ब्रह्म अपार ॥ २॥
अविनाशी साहिव धणी, चिंतामणि श्री पास॥
अरज करू' कर जोड़ के, पूरो वंछित आश॥३॥
मन चिंतित आशा फले, सकल सिद्धवे काम॥
चिंतामणीको जाप जप, चिंताहरे ए नाम ॥४॥
तुम सम मेरेको नही, चिंतामणी भगवान्॥
चेतनकी एह वीनती, दीजे अनुभव ज्ञान ॥५॥

—·—

॥ चोपाई ॥

प्राणल देवलोकथी आये, जन्म बनारशी नगरी पाये ॥ अश्वसेन कुल मंडन स्वामी, त्रिहूं जगके प्रभु अंतरजामी ॥६॥ वामा देवी माताके जाये, लंछन नाग फणी मणि पाये ॥ शुभ काया

नव हाथ वखाणो, नील वरण तनु निर्मल नाणो ॥७॥ पार्श्व यक्ष सेवे प्रभु पाय, पद्मावती वी सुखदाय॥ इंद्र चंद्र पारस गुण गावे, कल्प वृक्ष चिंतामणी पावे ॥८॥ नित समरो चिंतामणि स्वामी, आशा पूरे अंतरजामी ॥ धन धन पार्श्व पुरसादाणि, तुम सम जगमे को नहिं नाणी॥६॥ तुमारो नाम सदा सुखकारी, सुख उपजे दुःख जाय विसारी ॥ चेतनको मन तुमारे पास, मन वाञ्छित पूरो प्रभु आश ॥१०॥

—*—

(दोहा)

ॐ भगवंत चिंतामणी, पार्श्व प्रभु जिन-राय ॥ नमो नमो तुम नामसे, रोग शोक मिट जाय ॥११॥ वात पित्त दूरे टले, कफ नहिं आवे पास ॥ चिंतामणिके नामसे मिटे श्वास ओर खास ॥१२॥ प्रथम दूसरो तीसरो, ताव चोथियो जाय ॥ शूल वहोतेर दूरे रहे, दाद खाज न रहाय ॥१३॥ विस्फोटक गड गूंवडां, कोढ़ अटारे

दूर ॥ नेत्र रोग सब परिहरे, कंठमाल चकचूर॥ १४ ॥ चिंतामणिके जापसें रोग शोक मिट जाय, चेतन पार्श्व नाम को, समरो मन चित लाय॥१५॥

—·—

(चोपाई.)

मन शुद्धे समरो भगवान्, भय भंजन चिंतामणि ध्यान ॥ भूत प्रेत भय जावे दूर, जाप जपे सुख संपति पूर ॥१६॥ डाकण शाकण व्यंतर देव, भय नहिं लागे पारस सेव ॥ जलचर थलचर उरपर जीव, इनको भय नहिं समरो पीव ॥१७॥ वाघ सिंहको भय नहिं होय, सर्प गोह आवे नहिं कोय ॥ वाट घाटमें रक्षा करे, चिंतामणि चिंता सब हरे ॥१८॥ टोणां टामण जादू करे, तुमारो नाम लेतां सब डरे ॥ ठग फांसीगर तस्कर होय, द्वेषी दुशमन नावे कोय ॥१९॥ भय सब भागे तुमरे नाम, मन वञ्छित पूरो सब काम ॥ भय निवारण पूरे आश [illegible]
पास ॥२०॥

(दोहा)

चिन्तामणिके नामसे सकल सिद्धहो काम ॥ राज ऋद्धि रमणी मिले, सुख संपति बहु दाम ॥ हय गय रथ पायक मले, लक्ष्मीको नहिं पार ॥ पुत्र कलत्र मंगल सदा, पावे शिव दर-बार ॥२२॥ चेतन चिन्ता हरणको, जाप जपे तिन काल ॥ कर आंबिल षट मासको, उपजे मंगल माल ॥२३॥ पारस नाम प्रभावथी, वाधे वल बहु ज्ञान ॥ मनवाञ्छित सुख उपजे, नित समरो भगवान् ॥२४॥ संवत अठारा ऊपरे, ८ ट् त्रिशको परिमाण ॥ पोप शुकल दिन पंचमी वार शनिश्चर जाण ॥२५॥ पढ़े गुणे जो भावसूं सुणे सदा चित लाय ॥ चेतन संपति बहु मिले, समरो मन वच काय ॥२६॥

॥ चिन्तामणीनो छन्द ॥

सुगुरु चिंतामणि देव सदा ॥ मुझ सकल मनोरथ पूरसदा ॥ कमलाघर दूर न होय कदा।

जपतां प्रभु पार्श्व नाम यदा ॥ १ ॥ जल अनल मतंगज भय जावे ॥ अरि चोर निकट पण नहिं आवे ॥ सिंह सर्प रोग न सतावे ॥ धन्य धन्य प्रभु पार्श्व जिन ध्यावे ॥२॥ मच्छ कच्छ मगर जल मांहि भ्रमै ॥ वडवानल नीर अथाह गमै ॥ प्रह-वण बैठा नर पार पमै ॥ नित्य प्रभु पार्श्व जिनंद नमे ॥ ३ ॥ विकराल दावानल विश्व दहै ॥ ग्रह वस्ती धन ग्रास आकाश ग्रहै ॥ तुम नाम लिया उपशान्ति लहै ॥ वन नीर सरोवर जेम वहै ॥४॥ झरतो मद लोल कलोल करे ॥ भ्रमरा गुंजारव भर गेस भरै ॥ करि दुष्ट भयंकर दूरि करै, श्रीपार्श्व नाथजीको समरै ॥५॥ छाना छल छिद्र विनाय छलै ॥ यश वात सुणी मन मांहि जलै ॥ ते पिशुन पड़, नित्य पाय तलै ॥ जपतां प्रभु वेरी जाय टलै ॥ ६ ॥ धन देखि निशाचर कोढ़ धसै॥ मुझ मंदिर पैशक देन सुखै॥ अति उच्छव तास आवास अखै ॥ परमेश्वर पारश्र्व जास पखै ॥७॥ अस-

राल विदारण हाथ हटै, गजलोल जहां गज कुंभ घटै॥ मृगराज महा भय भ्रान्ति मिटै॥ रसना जिन नायक जेह रटै॥ ८॥ फिरतो चहुं फेर फुंकार फणी॥ धरणेंद्र धसैं धर रीस घणी॥ भय त्रास न व्यापे तेह तणी॥ धरतां चित पार्श्वनाथ धणी॥९॥ कफ कुष्ट जलोदर रोग कसें॥ गड़ गुंवड़ देह अनेक ग्रसै॥ विन भेषज व्याधि सब विनसै; वामा सुत पार्श्व जे स्तवसै॥ १०॥ धरणींद्र धराधिप सुर ध्यायो॥ प्रभु पार्श्व, २ करपायो॥ छवि रूप अनोपम जुग छायो॥ जननी धन्य वामा सुत जांयो॥ ११॥ करतां जिन जापं संताप कटे, दुख दारिद्र दोहग सोहघटै॥ हट छोड़ जहां रिपु जोर हटै॥ पद्मावती पार्श्व जहां प्रगटै॥ १२॥ (ॐ नमो पार्श्वनाथाय॥ धरणींद्र पद्मावती सहिताय॥ विपहर कुल्यंग मंगलाय॥ ॐ ह्रीँ श्रीँ चिन्तामणि पार्श्वनाथाय॥ मम मनोरथ पूरय स्वाहा.)॥ मंत्राक्षर गाथा गूढ पढ्यो॥

चिन्तामणि जाणो हाथ चढ्यौ, वलि मान महातम तेज बढ्यो ॥ श्री पार्श्व जिन स्तवन जिण पढयो ॥ १३ ॥ तीर्थपती पार्श्वनाथ तिलो ॥ भणतां जस वास निवास फलो ॥ मणि मंत्र सकोमल होय मिलो ॥ अमचि प्रभु पार्श्व आश फलो ॥ १४ ॥ लुंका गच्छ नायक लाभ लिए ॥ हित क्षेम करण गुरुनाम हिये ॥ दीन २ गच्छनायक सुख दीये ॥ कीरति प्रभु पार्श्व मुख कीये ॥ १५ ॥



अथ श्री सिद्ध भगवंतरी स्तुति।

(हरि गीत छंद)

तुमे तरण तारण दुःख निवारण, भविक जीव आराधनं; श्री नाभिनंदन जगत वंदन, श्री आदिनाथ निरंजनं॥१॥ जगत भूषण विगत दूषण, प्रणव प्राणि निरूपकं, ध्यान रूपं अनूप उपमं, नमो सिद्ध निरंजनं ॥२॥ गगन मंडल मुक्ति पद्मं, सर्व ऊर्ध्व निवासिनं, ज्ञान ज्योति अनंत राजे, नमो० ॥३॥ अज्ञान निद्रा विगत वेदन, दलित मोह निरायुकं; नामगोत्र न अंतरायं, नमो० ॥४॥ विकट क्रोधा मान योद्धा, माया लोभ विसर्जनं; राग द्वेष विमुद्रित अंकुर, नमो० ॥५॥ विमल केवल ज्ञान लोचन, ध्यान शुक्ल समीरितं, योगिना यति गम्य रूपं, नमो० ॥६॥ योग्यमुद्रा समोसरण मुद्रा, परिपल्यंकासनं, सर्व दिशि तेजरूपं, नमो० ॥७॥ स्व समय समकित दृष्टि जिनकी, सोही योग अयोगिकं; देश

नामां लीन होवें, नमो० ॥८॥ जगत जनके दास दासी, तास आस निरासनं; चन्दपे परमानन्द रूपे, नमो ॥९॥ चंद्रसूर्य दीप मणि की, ज्योतिये न उलंघितं, ते ज्योतिथि कोइ अपर ज्योति, नमो० ॥१०॥ सिद्ध तीर्थ अतीर्थ सिद्धा, भेद पंचदशादिकं; सर्व कर्म विमुक्तचेतन, नमो० ॥११॥ एक मांहि अनेक राजे, अनेकमांही एकिकं, एक अनेककी नांहि संख्या, नमो० ॥१२॥ अजर अमर अलख अनंत, निराकार निरंजनं; परब्रह्म ज्ञान अनंत लोचन, नमो० ॥१३॥ अतुल्य सुखकी लहरमें प्रभु, लीन रहे निरंतरं; धर्मध्यानथी सिद्ध दर्शन, नमो० ॥१४॥ ध्यान धूपं मनो पुष्पं, पचेन्द्रिय हुताशनं; च्मा जाप संतोष पूजा, पूजो देव निरंजनं; नमो सिद्ध निरंजनं; ॥ १५ ॥ इति ॥

—*—

॥ अथ स्तवन ॥

धम्मो मंगल महिमा निलो, धर्म समो नहीं

कोय ; धर्म थकी नमे देवता, धर्में शिव सुख होय ॥ ध० १ ॥ जीवदया नित्य पालीये, संयम सतरे प्रकार ; बारा भेदे तप तपे, धर्म तणो ए सार ॥ध० २॥ जिम तरुवरने फूलड़े भमरो रस लेवा जाय ; तिम संतोषे आतमा, फूले पीडा न थाय ॥ ध० ३ ॥ इणविध जावे गौचरी, वेहरे सूजतो आहार ; उंच नीच मध्यम कुले, धन्य धन्य ते अणगार ॥ ध० ४ ॥ मुनिवर मधुकर सम कह्या, नही तृष्णा नहीं लोभ, लाध्यो भाड़ो दिये देहने, अणलाध्यां संतोष ॥ ध० ५ ॥ अध्ययन पहले दुम्मपुप्फिए, सखरा अर्थ विचार; पुण्यकलश-शिष्य जेतसी, धर्में जय जयकार ॥ध० ६ ॥ इति समाप्तम् ॥



कुव्यसन मारग माथेरे धिक्-धिक्-ये देशी ।



श्री जिन अजित नमो जयकारी, तूं देवनको देवजी, 'जयशत्रु' राजाने 'विजया' राणीको-आ

तम जात तुंमेवजी श्री जिन अजित नमो जय-
कारी ॥ (टेर) ॥१॥ दूजा देव अनेरा जगमें,
ते मुझ दायन आवे जी; तह-मन्ने तह-चित्त
हमने, तूंहिज अधिक सुहावे जी ॥ श्री० ॥ २॥
सेव्या देव घणा भव भवमें, तो पिण गरज न
सारी जी; अबके श्री जिनराज मिल्यो तूं, पूरण
पर उपकारी जी ॥ श्री० ॥ ३ ॥ त्रिभुवनमें यश
उज्वल तेरो, फैल रह्यो जग जाणे जी; वन्दनीक
पूजनीक सकल को, आगम एम वखाणे जी
॥ श्री० ॥ ४ ॥ तूं जगजीवन अंतरजामी, प्राण
अधार पियारो जी; सब विधि लायक संत
सहायक, भक्त वत्सल वृध थारो जी ॥ श्री० ॥५॥
अष्ट सिद्धि नवनिधिको दाता, तो सम और न
कोई जी; वधै तेज सेवक को दिनदिन, जयत
तेथ जय होवे जी ॥ श्री० ॥ ६ ॥ अनंत ज्ञान
दर्शन संपत्ति, ले ईश भयो अविकारी जी; अवि-
चल भक्ति, विनयचन्द कूं द्यो तो ज़ाणूं रिझ-
वारी जी ॥ श्री० ॥ ७ ॥

॥ अथ श्री वीमल नाथ जी रो स्तवन ॥

(अहो शिवपुर नगर सुहावणो ए देशी)

विमल जिनेश्वर सेविये, थारी वुद्धि निर्मल हो जाय रे; जीवा ! विषय विकार विसारनें, तूं मोहनी कर्म खपाय रे जीवा ! विमल जिनेश्वर सेविए ॥टेर॥ १॥ सुक्ष्म साधारण पणे, प्रत्येक वनस्पति मांय रे, जीवा। छेदन भेदन तें सही, मरमर उपज्यो तिण काय रे ॥ जीवा विमल० ॥ २ ॥ काल अनंत तिहां गम्यो, तेहना दुःख आगमथी संभाल रे, जीवा। पृथ्वी अप्प तेउ वायमें, रह्यो असंख्यातो काल रे ॥ जीवा विमल० ॥ ३ ॥ एकेंद्री सूं वेडंद्री थयो, पुन्याई अनंती वृद्ध रे; जीवा ! संनी पंचेंद्री लगे पुण्य वध्या, अनंत अनंतां प्रसिद्ध रे ॥ जीवा। विमल० ॥४॥ देव नरक तिर्यंचमें, अथवा माणस भव नीच रे, जीवा ! दीनपणे दुख भोगिया, इणपर चारों गति वीच रे ॥ जीवा। विमल० ॥ ५ ॥

अबके उत्तम कुल मिल्यो, भेट्या उत्तम गुरु साध रे; जीवा! सुण जिन वचन स्नेह सूं, समकित वृत्ति शुद्ध आराध रे ॥ जीवा! विमल० ॥ ६ ॥ पृथ्वीपति 'कृतिभान' को सामा' राणीको कुमार रे; जीवा! 'विनयचंद' कहे ते प्रभु, शिर सेहरो हियड़ारो हार रे ॥ जीवा, विमल० ॥७॥

(चेतरे चेतरे मानवी-ए देशी)

श्री मुनि सुव्रत साहिवा, दीन दयाल देवां तणा देव के ; तारण तरण प्रभु तो भणी, उज्वल-चित्त समरूं नित्यमेव के ॥ श्री० ॥ टेर ॥१॥ हूं अपराधी अनादिको, जन्म जन्म गुना किया भरपूर के; लूटिया प्राण छकायना, सेविया पाप अठारे क्रूर के ॥ श्री मुनि० ॥ २ ॥ पूर्व अशुभ कर्त्तव्यता, तेहने प्रभु तुम न विचारके; अधम उधारण विरद छे, शरण आयो अब कीजिये सारके ॥ श्री० ॥३॥ किञ्चित् पुण्य प्रभावथी, इण भव ओल-

रखियो जिनधर्म सार के; निवर्तूं नरक निगो-
दथी, एवो अनुग्रह करो परिब्रह्म के ॥ श्री० ॥४॥
साधपणो नहि संग्रह्यो, श्रावक व्रत न कियां
अंगीकार के; आद्र्या तो न आराधियां,
तेहथी रुलियो हूं अनंत संसार के ॥ श्री०॥ ५॥
अब समकित व्रत आद्र्या, तदपि आराधिक
उतरूं पार के; जन्म जीतव्य सफलो हुवे,
इण पर विनवुं वार हजार के ॥ श्री० ॥ ६ ॥
'सुमित' नराधिप तुम पिता, धनधन श्री पद्मा-
वती माय के, तसु सुत त्रिभुवन तिलक तूं,
वंदत विनयचंद' शीस नमाय के ॥ श्री० ॥७॥

—*—

॥ श्री महावीर स्वामी जिन स्तवन ॥

(श्री नवकार जपो मन रंगे-ए देशी)

धनधन जनक 'सिद्धार्थ' राजा, धन 'त्रिसलादे'
मात रे प्राणी; ज्यां सुत जायो गोद खिलायो,
वृधमान विख्यात रे प्राणी श्री महावीर नमो
वरनाणी ॥ (टेर) ॥ १ ॥ श्री महावीर नमो वर-

नाणी, शासन जेहनो जाण रे प्राणी; प्र
सार विचार हियामें,कीजे अर्थ प्रमाण रे प्रा
श्रीमहा० ॥ २ ॥ सूत्र विनय आचार तपस्य
प्रकार समाध रे प्राणी; ते करीए भवसाग
ए,आत्म भाव आराध रे प्राणी॥ श्री महा०
ज्यूं कंचन तिहुं काल कहीजे, भूषण
अनेक रे प्राणी; त्यूं जग नाम चराचर जो
चेतन गुण एक रे प्राणी ॥ श्री महा ०
अपणो आप विषे थिर आतम, सोहुं हंस
य रे प्राणी; केवल ब्रह्म पदारथ परचय,
भरम मिटाय रे प्राणी ॥ श्री महा० ॥ ५ ॥
रूप रस गंध न जामें,ना स्पर्श तप छांह रे ;
तिमिर उद्योत प्रभा कुछ नाही, आतम अ
मांहि रे प्राणी ॥ श्री महा० ॥ ६ ॥ सु
जीवन मरण अवस्था, ए दस प्राण सं
प्राणी; इणथी भिन्न 'विनयचंद' रहिय
जलमें जलजात रे प्राणी ॥ श्री ॥ ७ ॥

—०#०—

अथ धन्नाजी री सज्झाय लिख्यते ।



धन्नाजी रिख मन चिंतवे, तप करतां तूटी हम तणी कायके ॥ श्री वीर जिनंदजी ने पूछने, आज्ञा लेई संथारो देसूं ठायके॥१॥ धन करणी हो धन राज री; धन करणी हो मुनी राज री ॥ ॥ए आंकणी॥ प्रह उठीने वांद्या श्री वीरने, श्रीमुख आज्ञा दिवी फरमाय के ॥ विमलगिरी, थिवरां साथे, चाल्या समसत साध खमाय के ॥ धन ॥ ॥ २ ॥ ठायो संथारो एक मासनो, थेवर आया प्रभुजी रे पास के ॥ भंड उपगरण स्वामी सांभलो, गोतम पूछे वे कर जोड़के ॥ धन करणी हो धन- राज री; धन करणी हो मुनिराज री ॥ ३ ॥ तप तपिया मुनिवर बहु आकरा, कहो स्वामी वासो कहां जाय लीध के ॥ सागर तेतीसरे आउखे, नव महीनामें स्वारथ सिद्ध पोहच के ॥ध० ॥४॥ खेत्र महाविदेह मांहे सीजसी, विस्तार नवमां अङ्ग रे मांहिं के ॥ शिवसुख शिव पदवी लेही,

आसकरणजी मुनि गुण गाय के ॥ध०॥५॥ सम्वत् अठारेसे गुण सठे, वैसाख वदपक्ष रे मांहि के ॥ बिसलपुरमें गुण गाईया; पूज्य रायचंदजी रे प्रसाद के ॥ ध० ॥ ६ ॥ ओछोजी इधको मैं कह्यो, तो मुझ मिच्छामि दुक्कड़ होय के ॥ बुद्धि सारू गुण गाईया, सूत्र रे अनुसारे जोड़ के । धु० ॥ ७ ।

॥ इति धन्नाजी री सज्झाय समाप्तम् ॥

अथ गजसुकमालजी को स्तवन ।

श्री जिन आया हो सोरठ देश मझार, द्वारा पुरी नगरी भली, श्री जिन भेटया हो, २ कँवर गजसुखमाल, वांणी सुणी ने कंवर वैरागियो, माई मै भेटियाए, २ तारण तरणारी जहाज अमीए साधांरी वाणी में सुणी, माई में जाणयो ए, २ ये संसार असार, स्वार्थिया जुग में सहु अनुमत दीजे हो, २ लेसु संजम भार, वचन संभालो पुरव भवतणा, बचा तुं तो भोलोरे, २ संजम

खांडेरी धार, बाइस परिसह सहणा दोहिला, माई मेरे कालजए, नही जाणो वार तेवार. क्या जानु अम्बा किस विध आवशी, आज्ञा दीनी हो. सजम लीनो हो, २ श्री श्री नेमजी रे पास काउसग्ग करवा मुनि वन में गया, सोमल ब्राह्मण हो, २ दिठा गजसुकमाल, कोप करीयो ए मुनिवर ऊपरे, वैर विशेषे हो, २ बांधी माटीनी पाल, खैर अङ्गारा मस्तक मुकिया, मुनि समता आणी हो, २ ध्यायो निर्मल ध्यान, कर्म निकाचित पिछला क्षय किया, पाम्या पाम्या हो पाम्या केवल ज्ञान, कर्म खपाई मुनि मोक्षे गया, ये गुण गाया हो, २ सरवर नगर मझार, कर जोडी रतनचंद भणे ॥ इति ॥

—:—

॥ अथ महावीर स्वामीको पारणो लिख्यते ॥



दोहा।

श्री अरिहंत अनतगुण, अतिशय पूरण गात ॥
ज्ञानी ध्यानी मुनी संयमी, कहिए उत्तम पात्र ॥ १ ॥

आसकरणजी मुनि गुण गाय के ॥ध०॥५॥ सम्वत् अठारेसे गुण सठे, वैसाख वदपक्ष रे मांहि के ॥ बिसलपुरमें गुण गाईया; पूज्य रायचंदजी रे प्रसाद के ॥ ध० ॥ ६ ॥ ओछोजी इधको मैं कह्यो, तो मुझ मिच्छामि दुक्कड़ होय के ॥ बुद्धि सारू गुण गाईया, सूत्र रे अनुसारे जोड़ के । ध० ॥ ७ ।

॥ इति धन्नाजी री सज्झाय समाप्तम् ॥

—०※०—

अथ गजसुकमालजी को स्तवन ।

श्री जिन आया हो सोरठ देश मझार, द्वारा पुरी नगरी भली, श्री जिन भेट्या हो, २ कॅवर गजसुखमाल, वांणी सुणी ने कंवर वैरागियो, माई मैं भेटियाए, २ तारण तरणारी जहाज अमीए साधांरी वाणी मै सुणी, माई मैं जाण्योए, २ ये संसार असार, स्वार्थिया जुग में सहु, अनुमत दीजे हो, २ लेसु संजम भार, वचन संभालो पुरव भवतणा, वच्चा तूं तो भोलोरे, २ संजम

खांडेरी धार, बाइस परिसह सहणा दोहिला, माई मेरे कालजए, नहीं जाणो वार तेवार, क्या जानु अम्बा किस विध आवशी, आज्ञा दीनी हो, सजम लीनो हो, २ श्री श्री नेमजी रे पास काउसग्ग करवा मुनि वन में गया, सोमल ब्राह्मण हो, २ दिठा गजसुकमाल, कोप करीयो ए मुनिवर ऊपरे, वैर विशेषे हो, २ बांधी माटीनी पाल, खैर अङ्गारा मस्तक मुकिया, मुनि समता आणी हो, २ ध्यायो निर्मल ध्यान, कर्म निकाचित पिछला क्षय किया, पाम्या पाम्या हो पाम्या केवल ज्ञान, कर्म खपाई मुनि मोक्षे गया, ये गुण गाया हो, २ सरवर नगर मझार, कर जोड़ी रतनचंद भणे ॥ इति ॥

—॰—

॥ अथ महावीर स्वामीको पारणो लिख्यते ॥



दोहा।

श्री अरिहंत अनतगुण, अतिशय पूरण गात ॥
ज्ञानी ध्यानी मुनी सयमी, कहिए उत्तम पात्र ॥ १ ॥

पात्र तणी अनुमोदना, कर तो जीरण सेठ ॥
श्रावक ऊंची गति लही, नवग्रहीवेगने छेठ ॥२॥
दस चोमासा वीरजी, विचरत संजम वास ॥
विसालापुरे आविया, इग्यारमे चौमास ॥ ३ ॥

ढ़ाल ।

चोमासो इग्यारमेजी, विचरंत संयम धीर ॥ विसालापुरमें आवियाजो, स्वामी श्री महावीर ॥ जगत गुरु त्रसला नंदन वीर ॥१॥ ए आङ्कणी ॥ भले भले भेठ्या जिनराज सखीरी, मेरो भाग अनो पम सार ॥ मेरो चोक पुराऊ आज ॥जगत०॥२॥ चलदेवनो छे देहरोजी, तिहा प्रभु काउसग्ग लीध ॥ पचखाणे चौमासनोजी, स्वामी ए तप कीध ॥ ज० ॥ ३ ॥ जीरण सेठ तिहां वसेजी, पाले श्रावक धर्म ॥ आकारे करी ओलख्याजी, जाणयो धर्मनो मर्म ॥ जग० ॥ ४ ॥ आज ए छे उपवासियाजी, स्वामी श्री महावीर ॥ काले कर सी प्रभु पारणोजी, हूं सही कर देसूं दान ॥ ज० ॥ ५ ॥ सदा सेठ इम चिंतवेजी, सफल होशी

तुझ आश ॥ पन्न मास गिणतां थकांजी, पूरण थयो चोमास ॥ जग० ॥६॥ सामग्री सब अहार तीजो, सेजे हुई तैयार ॥ प्रभुनो मारग पेखतो जी, बैठो घररे बार ॥ ज० ॥ ७ ॥ घरे आवे जे प्राहुणाजी, नोत्या एकण वार ॥ प्रभुजी क्यूं नही पधारसीजी, मै विनंती करी वारम्वार ॥ जगत० ॥८॥ पछे हूं करसूं पारणोजी, स्वामीने प्रतिलाभ, होय मनोरथ एहवाजी, ज्यूं वरसाले आभ ॥ ज० ॥९॥ अवसर उठ्या प्रभु गोचरीजी, श्री सिद्धा रथ पूत ॥ विसालापुरमें आवियाजी. पूरण घरे पहूंत ॥ ज० ॥ १० ॥ मिथ्यात्वी जाणे नहीजी, जगमें सुरतरु एह ॥ दासी प्रते इम कहेजी, काईंक भिक्षा देय ॥ ज० ॥ ११ ॥ चाटु भरने बाकलाजी, आणी प्रभुने दीध ॥ निरागी लेई करीजो, स्वामीजी, पारणो कीध ॥ ज० ॥ १२ ॥ देव वजावे दुंदुभीजी, बोले बेकर जोड़ ॥ हेम वर्षा तिहां हुईजी, साढी वारे क्रोड ॥ ज० १३ ॥ धन धन दासी तूं सहीजी, धन तेरो अवतार ॥

दान दियो श्री वीरनेजी, पाम्यो भवनो पार ॥ ज० ॥१४॥ राजादिक सहु आवियाजी, धन धन पूरण सेठ ॥ उत्तम करणी तें करीजी, अवर सहु तुझ हेठ ॥ज० ॥१५॥ लोक कहे तुमे सूं दियोजी, पारणो किधो वीर ॥ लोंकां प्रते इम कहेजी, में वहरावी खीर ॥जग० ॥१६॥ जीरण सेठ सुणी तिहांजी, वाजी दुन्दुवी नाद ॥ अनेथ कीयो प्रभु पारणोजी, मनमें थयो विषवाद ॥ ज० ॥ १७ ॥ हुं जगमें अभागियोजी, मेरे न आव्या स्वाम ॥ कल्पवृक्ष किम पामिएजी मारु मंडल ठाम ॥ ज० ॥ १८ ॥ जे जे मनोरथ मैं कीयाजी, ते ते रह्या मन माय ॥ निरधन जिम जिम चिंतवेजी तिम तिम निष्फल थाय ॥ ज० ॥ १६ ॥ स्वामी जी कियो तिहां पारणोजी, कियो उग्र विहार ॥ आया पास संतानियाजी, ते मुनि केवल धार ॥ ज० ॥ २० ॥ विसालानो राजवीजी, लोक सहू आणंद ॥ राय प्रश्न करे इसोजी, सतगुरु चरण पाय वन्द ॥ ज० ॥२१॥ मेरे नगरमें कुण एछे जी

पुण्यवंतने जसवन्त ॥ कहे केवली आज ए छेजी, जीरण सेठ महंत ॥ ज० ॥ २२ ॥ राय कहे कीण कारणेजी, जीरण सेठ महंत ॥ दान दियो श्री वीरनेजी पूरण ते जसवंत ॥ ज० २५ ॥ राय प्रते कहे केवलीजी, पूरण दीधो दान ॥ हेम वर्षा तिहां हुईजी, और नहीं परमाण ॥ ज० ॥२४ ॥ देवलोक जिण बारमेजी, जीरण घाल्यो बंध ॥ अनदिधा दीयो फल्योजी, उत्तम फल संबन्ध ॥ ज० ॥ २५ ॥ एक घडी सुर दुन्दुभीजी, जो नई सुणतो कान ॥ तो जीरण लेतो सहीजी, उत्तम केवल ज्ञान ॥ ज० ॥ २६ ॥ राय जीरण वधावियोजी, अधिको मान सनमान ॥ मुख्य नगरमें थापियोजी, जोवो पुण्य प्रमाण ॥ ज० ॥ २७ ॥ दान देवे सुपात्रनेजी, ते नहीं निष्फल होय ॥ पात्र तणी अनुमोदनाजी, जीरण सेठ फल जोय ॥ जग० ॥ २८ ॥ इम जाणी अनुमोदनाजी, दान सुपात्र रसाल ॥ दान देवेछे साधुनेजी, तेने नमे मुनि माल ॥ ज० ॥ २९ ॥ ॥ इति ॥

अथ चन्द्रगुप्त राजा का सोलह स्वप्ना लिख्यते।



दोहा ।

पाटलिपुत्र नामे नगर, चन्द्रगुप्त तहा राय।
सोलह स्वप्ना देखिया, पाखी—पोसा माय ॥१॥
तिण काले ने तिण अवसरे, पाँच से साधु परिवार।
भद्र बाहु मुनि समोसर्या पाढलिवन मझार ॥२॥
चन्द्र गुप्त वन्दन गयो, बैठो परखदा माय।
मुनिवर देवे देशना, सकलजीवा सुखदाय ॥३॥
हाथ जोड राजा कहे, साँभल जो मुनिराय।
सोलह स्वप्ना देखिया ज्यारों अर्थ दीजो सुनाय ॥४॥
चलता मुनिवर इम कहे, साभल जो तुमराय।
सोलह स्वप्ना देखिया, तेहनो अर्थ सुणो चितलाय ॥५॥

॥ढाल॥ करजोड़ी आगल रही॥ ए देशी॥ दीठो सुपनो पहलड़ो, भांगी कल्पवृक्षनी डालोरे॥ राजा संजम लेसी नही, दुषम पांचमें आरोरे॥ १॥ चन्द्रगुप्त राजा सुणो॥ ए आंकणी॥ कहे भद्रबाहू स्वामीरे॥ चवदे पूर्वना पाठीया, चार ज्ञान अभिरामोरे॥ चंद्र०॥ २॥ सुर्य्य अकाले आथम्यो दूजे सुपने राय मानोरे॥ जाया पांचमा

कालना, तिणने न होसी केवल ज्ञानो रे ॥ चं०
॥ ३ ॥ तीजे चंद्रमा चालणी, तिणरो फल राय
जोसी रे ॥ समाचारी जुई जुई, वारोटीये धर्म
थासीरे ॥ चं० ॥ ४ ॥ भूत भूतणी दीठा नाचतां,
सुपने चोथे राय जोसीरे ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्मनी,
घणी मानता होसीरे ॥ चं० ॥ ५ ॥ भेषधारी
पाखंडीनी, मानतां पूजा बहुलीरे ॥ शुद्ध साधने
साधवी, ज्यांरी मानतां थोड़ीरे ॥ चं० ॥६॥ नाग
दीठो बारा फणो, पांचमो सुपनो राय बोलोरे ॥
कितराइक वरसां पछे, पड़सी बार वरसो कालोरे
चं० ॥ ७ ॥ देव विमान पाछा वल्या, तिणरो
सुणो राय भेदोरे ॥ जंघा विद्या चारणी, जासी
लब्द विछेदोरे॥चं०॥८॥ उगो उकेरडा उपरे, सातमे
कमल विकासीरे ॥ च्यारुंही वरणामध्ये, वाण्या
रे जिनधर्म थासीरे ॥ चं० ॥९॥ एको नही सहु
वाणीया, जुदा जुदा मत्तझालीरे ॥ खांच करसी
आपो आपणी, विराधक बहु थासीरे ॥चं ॥१०॥
हेत कथाने चोपई स्तवन सज्झायनी जोरोरे ॥

तेहमे घणा प्रति बोधसी, सूत्रनी रचना थोड़ीरे ॥ चं० ॥ ११ ॥ दिठो सुपने आठमें, आज्ञानो चमत्कारोरे ॥ उद्योत होसी जिनधरमनो, विच विच मिथ्यात्व अंधारो रे ॥ चं ॥ १२ ॥ समुद्र सूको तीनूं दिशा, दिखण कानो पानी डोलेरे ॥ तीनु दिशा, धर्म विच्छेदसी, दक्षिणदिसा धर्मजाणोरे ॥ चं० ॥ १३ ॥ जहां जहां पञ्च कल्याणका, तहां तहां धर्मनी हाणीरे ॥ नवमां सुपनानो अर्थ थासी, एह अहिनाणो रे ॥ चं० ॥ १४ ॥ सोनेरी थाली मध्ये, कुत्तो खायछे खीरोरे ॥ दसमा सुपनाको अर्थ सुण तूं राय सधीरो रे ॥ चं० ॥१५॥ ऊंच तणी लिछमी ती-का, नीच तणें घर जासी रे ॥ वधसी चुगलने चोरटा, साहूकार सिधासीरे ॥ चं० ॥ १६ ॥ न्याय मार्ग सुध चालसी, ते साहूकारो कीजेरे ॥ दंड मुंड करसी घणो, चोर चुगल पेखीजेरे ॥ चं० ॥१७॥ देतो देखी दातारने, सूम वले मन मांहीरे ॥ ¯¯ान दियो वधसीघणो, सुपना दसमो प्राहीरे ॥

चं० ॥१८॥ हाथी उपर बेठो वानरो, सुपनो इग्यारमो दिठोरे ॥ म्लेछ राजा ऊंचो होसी, चत्री हिंदू हेठोरे ॥ चं० ॥ १९ ॥ हीन जात अनारजूं, असुर म्लेच्छनो वारोरे ॥ हिन्दू खीरणी आपसी, राजा सुण आधिकारो रे ॥ चं० ॥ २० ॥ दीठो सुपने बारमे, समुद्र लोपिछे कारोरे ॥ ॥ केई छोरु गुरु सा बापना, होई जासो ते कारोरे ॥ चं० ॥ २१ ॥ विनो भाव थोड़ो होसी, मच्छर धरसी जादारे ॥ पूत सीख गुरु बापनी, मुकदेशी मर्यादारे ॥ चं० ॥ २२ ॥ निज इच्छाए बोलसी, छांद गुरुनो थोड़ारे ॥ लाज हित अभिमानिया, किया करतूतमे कोरारे ॥ चं० ॥२३॥ कितराइक साधुने साधवी द्रव्यलेसी दिखारे ॥ आज्ञामे थोडा चालसी, सिख देता करसी इ पोरे ॥ चं ॥ २४ ॥ अकल विहुण वांछसी, गुरुवादिकनी घातोरे ॥ सिष अवनीत ईसा होसी, थोडा उत्तम सुपात्रोरे ॥ चं० ॥२५॥ कियो गुन्हो नहि मानसी, सामने जबाव देसीरे ॥ गुरु आया उठे नहिं, गुरुकी आज्ञा नहिं लेसीरे ॥चं०

॥२६॥ कार लोपी वड़ातणी, आपणो करसी जा
णयोरे॥अर्थ बारमा सुपना तणो, भद्रबाहू वखा
णयोरे॥चं०॥ २७ ॥ महा रथ जुत्या वाछड़ा, वाला
धर्मज थासीरे॥ कदाचितवुढ्ढा करे, तो प्रमादमें
पड़जासीरे ॥ चं० ॥२८॥ बालक बहु घर छोडसी,
आणी वैरागज भावो रे ॥ लज्या संजम पालसी,
वुढ्ढा धेंठ सभावोरे ॥ चं० ॥ २६ ॥ सरल नहिं
सहु वालका, धेठा नहिं सहु वुढ्ढारे ॥ समाचारि
मांहे भाषीयो, अरथ विचारो ऊंडारे ॥ चं० ॥३०॥
रत्न भल के दिठा चउदमे, तिण सुपनानो जोड़ो
रे ॥ भरत क्षेत्रना साधु साधवी, हेत मिलाप
होसी थोड़ोरे ॥ चं० ॥ ३१ ॥ कलहकारीने रम-
कडा, असमाधकारी विसेषोरे ॥ उद्योगकारी
निरबुद्धिया, रेहेसी द्वेषा द्वेषो रे ॥ चं० ॥३२॥
वैराग्य भाव थोड़ो होसी, द्रव्य लिंगिनाधारो रे।
भली सीखदेतां थकां, करसी द्वेष अपारो रे।
चं० ॥ ३३ ॥ परशंशा करसी आप आपणी, कटुक
वचन बहु गैरीरे ॥ सरल साधु साधवी तण

उलटा होशी वेरीरे ॥ चं० ॥ ३४ ॥ पोताना अव गुण ढांकने, परतणा अवगुण पेखेरे ॥ पगतले बलतो देखे नहीं, डूंगर बलतो देखेरे ॥चं० ॥३५॥ सूधो मारग परुपसी, तीणसुं मच्छर भावोरे ॥ निंदक बहु साधातणां, होसी धीठ स्वभावोरे ॥ चं०॥ ३६ ॥ राय कुंवर चढ्यो पोठीयें, सुपने पंदरमे दिठो रे ॥ श्री जिनधर्म छोडी करी, मिथ्यामत मांहे पेठोरे ॥ चं० ३७ ॥ न्याई पुरुष नहिं मानसी, नीच गमसी वातोरे ॥ कुबुद्धीने घणा मानसी, लांच ग्राही परतीतोरे ॥चं० ॥३८॥ विगैर मावत हाथी लडे,सुपने सोलमे राय दिठोरे॥ काल थोड़ाने आंतरे, होसी नही मांग्या मेहोरे ॥ चं० ॥ ३९ ॥ बेटा गुरु माईतनी, करसी भगती थोडीरे ॥ माईत वात करतां थकां, विचमें लेसी तोडीरे॥ चं० ॥ ४० ॥ काण कायदो थोड़ो होसी ओछो होसी हेतो रे ॥ घणा राडने इसका, वधसी इण भरत खेत्तोरे ॥ चं० ॥ ४१ ॥ अरथ सुपना सोले तणा, कह्यो भद्रबाहू स्वामीरे ॥ जिन भाख्यो

न होवे अन्यथा, सुण राजा धरी कानोरे ॥ चं० ॥ ४२ ॥ एहवा वचन राय सांभली, राय जोड्या वेहु हाथोरे ॥ वैराग भाव आणी कहे, में सख्या कृपा नाथोरे ॥ चं० ॥४३॥ ए सोले सुपना सुणी संयम पराक्रम करसीरे॥ जिनजी वचन अराधसी, शिव रमणीने वरसी रे ॥ चं० ॥४४ ॥ राजथापी निज पुत्रने, हूं लेसूं संयम भारो रे ॥ वलता गुरु इसड़ी कहे, मतकरो ढील लिगारोरे ॥चं० ॥४५॥ पुत्रने राज्य वेसाड़ीने, चन्द्रगुप्त लीधो संयज भारोरे छता भोग छटकायने, दियो छवकायने अभय दानोरे ॥ चं० ॥ ४६ ॥ धन करणी साधातणी, वयणे अमृत वरसे रे ॥ जेहनो दर्शन देखने, घणा भव जीव तरसीरे ॥ चं ॥ ४७ ॥ चोखो चारित्र पालने, सुर पदवी लही सारोरे ॥ जिन मारग अराधने,करसी खेवोपारो रे ॥ चं० ॥४८॥ अथीर माया संसारनी,आप कहो जिनरायो रे॥ दया धर्म शुद्ध पालने, अजरामरपद पायोरे ॥ ॰ ॥ ४६ ॥ व्यवहार सूत्रनी चूलका, भद्रबाहु

क्यो निचोड़ो रे ॥ इण अनुसारे जानजो, रिष
ालजीनी जोड़ोरे ॥ चं० ॥ ५० ॥

॥ इति ॥

—*—

(अथ जम्बूकुमार जी री सिझाय लिख्यते)

॥ राजगृहीना वासीयाजी जंबू नांम
कुंवार ऋषभ दत्तरा डीकराजी भद्रा ज्यांरी मांय
जंबू कह्यो मान लै जाया मत लै संजम भार,
॥१॥ सुधर्मा स्वामी पधारीयाजी राजगृहीरे मांय
कोणक वांदण चालियोजी जंबू वांदण जाय
जंबू० ॥२॥ भगवत वाणी वागरीजी वरसै
अमृतधार वाणी सुणी वैरागियाजी जांण्यो
अथिर संसार ॥ जंबू० ॥३॥ घर आया माता कनै
जी,विनवे वारं वार अनुमत दीजो मोरी मात जी,
माता लेसुं संजम भार ॥ जंबू० ॥४॥ माता मोरी
सांभलो जननी लेसूं संजम भार ये
आठूंही कामणी जंबू अपछरे उणीहार

परणीनें किमपरिहरो ज्यांरो किम निकले जमार। जंबू० ॥ ५ ॥ ये आठूंही कामणी जंबू तुझ विना विलखी थाय रमियां ठमियां सुं नीसरे ज्यांरा वदन कमल विलपाय ॥ जंबू० ॥६॥ मत हीणो कोई मानवी माता मिथ्या मत भरपुर रूप रमणी सूं राचिया ज्यांरा नहीं हुवा दुरगत दूर, माता मोरी सांभलो जननी लेसूं संजम भार॥जंबू०॥७॥ पाल पोस मोटो कियो जंबू इम किम द्यो छिट काय, मात पिता मेले भूरता थानें दया नहीं आवे दील मांय॥ जंबू० ॥८॥ एक लोटो पांणी पीयो माता मायर बाप अनेक सगलांरी दया पालसूं माता आणीनें चित्त विवेक,माता मोरी सांभ० ॥९॥ ज्यूं आंधारे लाकडी जंबू तुं म्हारे प्राण अधार तुझविना म्हारे जग सूनो जाया जननी जीतव राख॥ जंबू० ॥१०॥ रतन जड़तरो पींजरो माता सुआे जाणं सोही फंद काम भोग संसार ना माता ज्ञानी जाणे झूठा फंद॥जम्बू०॥ ॥११॥ पंच महाव्रत पालनो जम्बू पांचु ही मेरू

समान दोष बयालीस टालणो जम्बू लेणे सूझतो अहार ॥जंबू० ॥१२॥ पंच महाव्रत पालसूं माता पांचूं ही सुख समान दोष बयालीस टालसूं माता लेसूं सूझतो अहार माता मो० ॥१३॥ संजम मारग दोहिलो जंबू चलणो खांडेरी धार नदी किनारे रूखड़ो जंबू जद तद होय विनास जंबू० ॥१४॥ चांद विना किसी चांदणी जंबू तारां विना किसी रात वीर विना किसी वैनडी जंबू झूरसी वार तिवार ॥ जंबू० ॥१५॥ दीपक विना मंदिर सूनो जंबु, पुत्र विना परिवार, कंथ विना किसी कामनी जंबु झुरसी बारूं ही मास॥ जंबु- कह्यो मांनलो थेतो मतलो संजम भार ॥ १६ ॥ मात पिता मेलो मिल्यो माता मिल्यो अनंती- वार तारण समरथ कोई नही माता पुत्र पिता परिवार, माता मोरी सांभलो में लेसूं संजमभार ॥१७॥ मोह मत करो मोरी मात जी माता मोह कियां बंधे कर्म्म हालर हूलर कईं करो माता करजो जिनजी रो धर्म ॥ माता० ॥१८॥ ये आठूं ही

कामणी जंबू सुख विलसो संसार दिन पीछा पड़ियां पीछे थेतो लीजो संजम भार जंबू॥१६॥ ए आठूं ही कामनी माता समझाई एकण रात जिनजीरो धर्म्म पिछाणियो माता संजम लेसी म्हारे साथ,माता मो०॥ २०॥ मात पितानें तारिया जंबू तारी छे आठूं ही नार सासू सुसरानें तारिया जंबू पांचसे प्रभव परिवार, जंबू भलो चेतियो थेतो लीनो संजमभार २१ पांचसे ने सत्तईस जणासूं जंबू लीनो संजमभार इज्ञारे जीव मुगते गया साधू, वाकी स्वर्गमझार ॥ जं० ॥२२॥ ॥ इति पदं ॥

(अथ श्री सीमंधरजीरो स्तवन लिख्यते)

॥ श्रीश्रीसीमंधरस्वाम इकचित वंदू हो वेकर जोड़नें पूरबदेसा हो प्रभुजी परवरऱ्या नगरी पुंडरपुर सुख ठाम, २ वेकर जोड़ी हो श्रावक वीनवै श्रीश्रीसीमंधर स्वाम इकचित वंदू हो वेकर जोड़ने

॥१॥ चौतीस अतिशय हो प्रभु जी शोभता वाणी-पनरे ऊपर वोस,२ एक सेहस लक्षण हो प्रभुजी आगला जीता रागनें रीस,२ ॥ इकचि० ॥२॥ काया थांरी हो धनुष पांचसे आउखो पूर्व चोरासी लाख,२ निरवद वाणी हो श्रीवीतरागनी, ज्ञानी अगम गयाछै भाप,२॥ इकचि० ॥३॥ सेवा सारे हो थांरी देवता सुरपति थोड़ा तो एक किरोड,२ मुज मन मांहे हो होस वसे घणी वंदू बेकर जोड, २ ॥इक चि० ॥४॥ आडा पर्वत हो नदियां अति घणी, विचमें विकट विद्याधर गांम,२ इण भव मांहे हो आय सकूं नही,लेसुं नित उठ थांरो नांम,२ ॥ इक चि०॥७॥ कागद लिखूं हो प्रभु थांने,वीनती वंद-णा वारंवार, २ कुदंन सागर हो कृपा कीजीयें, वीनतड़ी अवधार ॥ इक-चि० ॥६॥ इति पदं ॥



श्री धनाशाल भद्रजी को स्तवन

रङ्गत—[महलामें बैठी हो राणी कमलावती]

सूराने लागे वचन जो ताजणो कायरने लागे नही कोय, सांभल हो सुरता ॥ सूरा० ॥ टेर ॥

नगरी तो राजगरीना वासीया सेठ धन्नोजी जुगमे सार, पूरव पुन्य सुं वहु रिध पाविया आठ नार्‍यां ना भर्तार ॥ सामल ॥ सु० ॥ १ ॥ एक दिन धनजी हो बैठा पाटले, स्नान करे छे तिण वार। आठोंही नार्‍यां मिलकर प्रेमसूं, कुड रही छे जलनी धार ॥ सा. सु. ॥ २ ॥ सुभद्रा हो नारी चौथी तेहनी, मनमें थाई छे दिलगीर ॥ आसु तो निकल्या तेना नेणसुं, कामण क्यों थाई छे उदास, शंका मत राखो मुझ आगले, कारण कहोनीवीमास ॥ सा. सु. ॥ ३ ॥ कामण कहे हो कंथां माहेरा, वीराने चढियो वेराग। एक एक नारीओ नितकी परिहरे। संजम लेवाकी रही छे लाग ॥ सा. सु. ॥ ४ ॥ धनजी कहे हो भोली

बावरी, कायर दीसे छे थांरो वीर, संजम लेणो मनमे धारियो। फिर क्यो करणि या ढील, सा सु. ॥ ५ ॥ कामण कहे हो कंथां माहेरा, मुखसे बणाओ फोकट बात यो सुख छोडीने बाजो सूरमा, जदी जाणागा प्रीतम सांच, ॥ सा. सु. ॥ ॥ ६ ॥ इतरा में धनजी उठीने बोलिया, कामण रेज्यो म्हांसू दूर। संजम लेवांगा अणि अवसरे जदी बाजांगा जगमें सूर ॥ सा. सु. ॥ ७ ॥ बेकर जोड़ीने सुन्दर विनवे कियो हांसीके वश बोल काचीकी सांची न कीजे साहेबा हिवडे विचारीने बाहर खोल ॥ सा, सु, ॥ ८ ॥ संजम लेणो हो प्रीतम सोयलो, चलणो कठिन विचार। बाइस परीसा सेणा दोयला। ममता मारीने समता धार ॥ सा. सु. ॥ ६ ॥ उतर पड उत्तर हुआ अतिघणां आया सारारे भवन उछाव संजम दोई साथे आदरां। उतरोनी कायर नीचे आव। सा० सु. ॥ १० ॥ साला बन्दोई संजम आदर्यो वीर जिनंदजीके पास। सालभद्रजी सर्वार्थ सिद्ध

गया, धन्नोजी शीवपुर वास ॥ सा. सु. ॥११॥ संमत उगणीसे साल इकसटे चितोड कियोरे चोमास ॥ मुनीनंदलाल तणा शिष्य गावियो। मन वांछित फलेगा मुझ आस । संभल हो सुरता. ॥ १२ ॥ इति ॥

—*—

अथ म्रगा पुत्रकी सज्जाय लिख्यते ।

सुगरीव नगर सुहामणोजी, राजा बलभ नाम ॥ तस घर राणी म्रगावतीजी, तस नंद गुण धाम ॥ ए माता खीण लाखीणीरे जाय १ ॥ एक दिन वैठा गोखडेजी, राणयारे परवा सिस दाजे ने रवी तपे जी दीठा तव अणगार ए माता० ॥ २ ॥ मुनि देखी भव सांभाल्यो जी मन वसीयो रे वेराग ॥ हरप धरीने उठीया जी लागा माताजी रे पाय ॥ ए जननी अनुमत द मोरी माय ॥ ३ ॥ तु सुखमाल सुहामणो जी भोगो संसारना भोग ॥ जोवन वय पाछी प

जब आदर जो तुम जोग ॥ रे जाया तुजवीन
घड़ीरे छव मास ॥ ४ ॥ पाव पलकरी खवर नही
एमाय करे कालको जी साज ॥ काल अजाण्ये
झड़पड़े जी. ज्युं तितर पर वाज ॥ एमात
खिण लाखिणी रे जाय ॥ ५ ॥ रत्न जड़त घ
आंगणोजी तुं सुंदर अवतार ॥ मोटा कुल
ऊपनाजी कांई छोडो निरधार ॥ रे जाया ॥ तु
॥ ६ ॥ वाजीगर वाजी रचि ए माय, खिण
खेरु थाय ॥ ज्युं संसारनी सम्पदाजी, देखत
विल जाय ॥ ए माता० ॥ ७ ॥ पिलंग पथर
पोढणो जी, तुं भोगीरे रसाल ॥ कनक कचो
जिमणोजी, काचलडीमे अहार रे जाया ॥ तु
॥ ८ ॥ सायर जल पीया घणा ए माय चुं
मातारा थान ॥तृप्त न हुवो जीवडो जी, इ
अरोग्या धान ॥ ए माता ॥ खी० ॥ ६ ॥ चा
छे जाया दोहिलो जी, चारित्र खांडानी धार॥
हथोआरां भुंजणो जी, ओषद नही हे लि
॥ रेजाया॥ तु० ॥ १० ॥चारित्र छेमाता सो

गया, धन्नोजी शीवपुर वास ॥ सा. सु. ॥११
संमत उगणीसे साल इकसटे चितोड
चोमास ॥ मुनीनंदलाल तणा शिष्य गावियो
मन वांछित फलेगा मुझ आस । साभल
सुरता ॥ १२ ॥ इति ॥

अथ म्रगा पुत्रकी सज्जाय लिख्यते ।

सुगरीव नगर सुहामणोजी, राजा बलभ
नाम ॥ तस घर राणी म्रगावतीजी, तस नंद
गुण धाम ॥ ए माता खीण लाखीणीरे जाय
१ ॥ एक दिन बैठा गोखडेजी, राणयारे परवा
सिस दाजे ने रवी तपे जी दीठा तव अणगार ।
ए माता० ॥ २ ॥ मुनि देखी भव सांभाल्यो जी
मन वसीयो रे वेराग ॥ हरष धरीने उठीया जी
लागा माताजी रे पाय ॥ ए जननी अनुमत दे
मोरी माय ॥ ३ ॥ तुं सुखमाल सुहामणो जी
भोगो संसारना भोग ॥ जोवन वय पाछी प

लारी, आरज्या छतिस सेंस सारि ॥ दुहा ॥ समो-
सरण देवा स्च्यो वेठा त्रिभुवन नाथ इन्द्र इन्द्रा-
णी सेवा करै पाम्या हरख उल्लास॥ वीर जिन०
॥ १ ॥ खबर राजेन्द्र भणी लागी। वीरजिन
आय उतरया वागे; जावणे दरसण के काजे,
करू सजाइ वहु छाजे। दोहा। हाथी घोड़ा रथ
पालखी पाय दल रे परिवार, भाइ वेटा उमराव
अंतेउर सवकू लीधा लार, वीरजिन०। २।
अठार सहेस गज छाजे, घुड़ला लख चोविसे
गाजे एकविस सहेस रथ ज्योति, पालखि एक
सेहस सोहंति। दुहा। हाथी घुमे घुड़ला हिसे,
रथ करे झणकार, पायदल मुखरे आगले, बोले
जय जय कार। वीरजिन०। ३। पांचसे अंतेउर
लारे करत हे नवा नवा सिणगारे, पहरिया रत्न
जड़ित गहणा वाजता वाजंतृ वयणा। दुहा।
चंवर छत्र ढोलावतां, चाल्या मध्य वाजार राय
अपणो आडम्बर देखी गर्व कियो तिणवार।
वीरजिन। ४। स्वर्ग से इन्दर भी आया भेटीया

श्री जिनवर का पाया, ग्यान से सर्व वात जाणी दशारण भद्र बडो मानी । दुहा । मांन उतारण कारणे इंद्र दियो आदेश एक ऐरावत ऐसो लावो ज्युं गर्व गले विशेष । वीरजिन० । ५ । चौसठ सहेस गज छाजे, गगन विच उभाइ गाजे एक एकको ऐसो रुप आयो सुणता आश्चर्यही पायो । दुहा । एक एकके मुख पांच से, मुख मुख के आठ दंत, दंत दंत आठ वावडी, ज्यांमांहे कमल महंत । वीरजिन । ६ । पांखडी लाख लाख ज्यां के नाटक पड़े वतीस से तां पे, इंद्र कूं इंद्रासन सोवे, करण का उपर मन मोहे । दुहा । जहांपर इंद्र विराजिया लारे वहु परिवार दशारण भद्र जी देखने, गर्व गल्यु तिणवार । वीरजिन० । ७ । चिंतवत दिल अपने मांही वडाइ किस विध रह भाइ, इंद्रसे जीतु हुं नाई, करूं उपाय कठातांइ । दुहा । अवसर देखी संजम लिनो, दशारण भद्र नरंद्र तुरंत आइ उतावलो, पगे लाग्यो शक्रेन्द्र, वीरजिन० । ८ । इन्द्र जद मुनि वर से वोले,

नहीं कोइ आपंतरो तुले ओरतो शक्ति घणी म्हारे, वेके कुंदिला नाहीं धारे। दुहा। धन धन हे मुनिरायजी, तुमे राख्यो मान अखंड, वार वार गुनेह गार हूं, इंद्र गयो गगन के मंद। वीरजिन०।। ६। मुनिवर संजम सुद्धपाले, दोष सह आतमना टाले, मिटाया जन्म मरण फेरा. आतमा अटल हुवा तेरा। दुहा। गुरु देव प्रसाद से, सुणियो भविजन लोक जो करणी साचि करे तो मिलशी सगला थोक वीरजिन। १०। संमत उगणीसे का सोहे साल तेतिसा मन मोहे। आसोज सुद पंचमि जाणो, हर्ष से हीरालाल गाणो,। दुहा। देश हडोती विषै कोटो मोटो सहेर, चोमासो कियो राम पुरामां चार संतके लेर। वीरजिन० ।११।।इति॥



॥ भरत चक्री को स्तवन; ॥



॥ अमर पद पाया हो, भरतेश्वर मोटा राजवी; मुक्ति पद पाया हो, भरतेश्वर मोटा राजवी ॥ या टेर ॥ सर्वार्थ सिद्ध थकी चवि आया, नगर विनिता माय, रिखभदेवजी तात तुम्हारा सुमङ्गलादे मांय । अमर० । भरते० मुगति० । भरते ॥ १ ॥ लाख वरस पूरवतांइ । कंवर पद महाराज । षट लाख पूरब तांइ । राज भोग्यो श्रीकार । अमर० । भरते० मुगति० । भरते० ॥ २ ॥ साठ सहेस वरसा लग तांइ । दिग्वि-जय अधिकार । अष्ट भगत त्रिदस अराधी । वसकिधा भूपाल । अमर० । भरते० । मुगति० । भरते । ३ । रतन चतुर दस वनिद नायक । राणी चौसठ हजार । महेल बयालीस भोमियास रे । नाटकरो धुंकार । अमर० । भरते० । मुगति० । भरते० ॥ ४ ॥ दोय कोड देवता कह्यास रे तन्न तणा रखवाल ।

तख चोरासि हय गय रथ। छीन्नुं [illegible]
जुंझार। अमर०। भरते०। मुगति० [illegible]
॥ ५॥ आरीसारे भुवन मेंसजी। [illegible]
ध्यान। अनित्य भावना भावतांसजी [illegible]
ग्यान। अमर०। भरते०। मुगति० [illegible]
॥ ६॥ संजम ले पधारियासजी [illegible]
मांय। दस सहेस समजाए [illegible]
पन्थ बताय। अमर०। [illegible]
भरते० ॥ ७॥ तिजा अंग [illegible]
चोथानो अधिकार। [illegible]
पुन्य तणो जय जय [illegible]
मुगति० भरते० ॥ ८॥ [illegible]
पहलो भरतेश्वरजीना [illegible]
ध्यावतां। पावे सुख [illegible]
मुगति०। भरते० [illegible]
सजी। केवल [illegible]
पद उपरेस [illegible]
भरते०। [illegible]

[illegible] ीवा
[illegible] की
समज मन
[illegible] ज

पैंतालीस वरसे। रतनपुर चोमास । हीरालाल कहे पुज्य प्रसादे पुरे मनकी आस। अमर०। भरते०।। मुगति०। भरते० ॥ ११ ॥

॥ इति ॥

—*—

॥ उपदेशी ठुमरी ॥

प्रभु नामको समरण करना समरण करना नही विसरना, जिनवरजी का ध्यान धर के, निज आत्म को निर्मल करना॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन तत्व का ध्यान धरके, चार चोकड़ी को परिहरना ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ आश्रव छोड़ समर को धारो, ज्ञान उद्यम करना ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ व्रत पंचखाण तपस्या करके पांचु इन्द्री वश करना ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ तन धन जोवन सब है झुठा वैराग भाव दिल में रखना ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ शिव पद्वी की चाह हुवे तो, समकित रत्न हिये धरना ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥ गोविन्दराम की

अरज सुणीजे, अब में आयो आपके सरणा ॥ प्रभु० ॥ ७ ॥

॥ स्तवन ॥

॥ समज जीवा आयुजावे ज्यु रेलरे ॥

सीधीरे सड़क बणी शिवपुर की, तां पर जावत पेलरे ॥ टेर ॥ समज मन उमर जावे ज्यु रेलरे समज जीवा आयु जावे ज्यु रेलरे ॥ १ ॥ वरस वरस की बणी स्टेशन, मास मास की मील रे ॥ समज मन उमर जावे ज्यु रेल रे, समज जीवा आयु जावे ज्यु रेल रे ॥ २ ॥ रात दिवस खेंचत दोय अञ्जन विन घोड़े विन बैल रे ॥ समज मन उमर जावे ज्यु रेल रे समज जीवा आयु जावे ज्युं रेल रे ॥ ३ ॥ प्रेम जोत की लालटेण है, विन बती विन तेल रे, ॥ समज मन उमर जावे ज्यु रेल रे, समज जीवा आयु जावे ज्यु रेल रे ॥ ४ ॥ नाडी रे तार खबर देणे कुं, दसु द्वार रेया फेल रे ॥ समज मन उमर जावे ज्यु रेल रे, समज जीवा आयु जावे ज्यु रेलरे ॥५॥

पैंतालीस वरसे। रतनपुर चोमास । हीरालाल कहे पुज्य प्रसादे पुरे मनकी आस। अमर०। भरते०। मुगति०। भरते० ॥ ११ ॥

॥ इति ॥

—*—

॥ उपदेशी ठुमरी ॥

प्रभु नामको समरण करना समरण करना नहीं बिसरना, जिनवरजी का ध्यान धर के निज आत्म को निर्मल करना॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन तत्व का ध्यान धरके, चार चोकड़ी को परिहरना ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ आश्रव छोड़ समर को धारो, ज्ञान उद्यम करना ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ व्रत पंचखाण तपस्या करके पांचु इन्द्री वश करना ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ तन धन जोवन सब है झुठा वैराग भाव दिल में रखना ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ शिव पदवी की चाह हुवे तो, समकित रख हिये धरना ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥ गोविन्दराम की

कामनी ने मन मांहि ए कुण वस्यो जी, श्रेणिक पड्यो रे संदेह ॥ वी० ॥ ४ ॥ अंतेउर परो जाल तो जी श्रेणिक दीयो रे आदेश ॥ भगवंते संशय भांगियो जी, चमकियो चित नरेश ॥ वी० ॥५॥ वीर वांदी वलतां थकां जी, पेसतां नगर मझार धूवांधोर तिहां देखी कहे जी, जा जा भुंडा अभय कुमार ॥ वी० ॥ ६ ॥ तात नो बचन ते पाली करी जी, व्रत लियो अभयकुमार॥ समय सुन्दर कहे चेलणा जी, पामशे भवतणो पार ॥ वी० ॥ ७ ॥ इति समाप्तम् ॥

॥ श्री ॥

॥ श्री नागलाजीरी सज्झाय ॥

नुंई रे परणया ते गोरी नागला रे
भाव देव भाई घर आइया रे, त्यां रे,प्रभुबोध्य
मुनिराय रे ; हाथ में लीनो घृतरो पात्रो रे,
त्यांरे भाई मने अधर पोहचाय रे ॥

नुंईं रे परणया गोरी नागला रे ॥ १ ॥
ईम केही गरू पासे आइया रे,
त्यां रे गरू पुछे दिक्षा रा काईं भाव रे लाजरो
कारज नहीं कोयरे
त्यां रे दीक्षा लीनी भाई रे पास रे,
नुंईं रे परणया ते गोरी नागला रे ॥ २ ॥
बारे वरस संजम रह्या रे, त्यारे धरता नागला रो
ध्यान रे, हाँ हॉ मुर्ख ह्मे शुं करयो रे, त्यां रे धर-
ता नागलारो ध्यान रे,
नुंईं रे परणया ते गोरी नागला रे ॥ ३ ॥
चन्दन वदन मिर्ग लोचनी रे,
त्यां रे विल विलती मुकी घर नार रे
भाव देव ने भोग चेत आइया रे, त्यां रे अण
ओलखे पुछे घर री नार रे,
नुंईं रे परणया ते गोरी नागला रे ॥ ४ ॥
नारी केवैछे सुण साध जी रे,
तमे छो गुणांरा भण्डार रे, गज छोडी
चढ़े रे ज्युंही, भमियोड़ो आर रे,

नुंई रे परणया ते गोरी नागला रे ॥ ५ ॥
नारी नेव करी समजावीया रे, त्यांरे भले
लीनो संजम भार रे; भाव देव देवलोके गया
रे त्यांरे समय सुंद्र धरे ध्यान रे
नुंई रे परणया ते गोरी नागला रे ॥ ६ ॥
॥ इति ॥

—*—

अथ श्री सुगुरु स्तवन लिख्यते ।

—०°०—

वे गुरु मेरे उर वसो, जे भवजलनिधि जहाज आप तीरे परतारतां, ऐसे श्री मुनिराज ॥ वे गु० ॥ १ ॥ मोह महा रिपु जीत के, छोड़े घरवार, होय मुनीश्वर वन वसे आत्म शुद्ध विचार ॥ वे गु० ॥ २ ॥ राग उरग वपु विल घणा, भोग भुजङ्ग समान, कजलि तरु ससारहे, सहु छोड्यो इम जांण॥ वे गु० ॥ ३ ॥ पंच महाव्रत आदरे, पाचु सुमति समेत, तीन गुप्ति गोपे सदा अजर अमर पद हेत ॥ वे गु० ॥

॥ ४ ॥ धरम धरे दश लच्चणो भावे भावना सार, जीते परिसह बीस दोय, चारित्र रत्न भण्डार ॥ वे गु० ॥ ५ ॥ रत्न त्रयोनिधि उर धरे, अरु निग्रंथ त्रिकाल, जीते काम पिशाच को, स्वामी परम दयाल ॥ वे गुरु ० ॥ ६ ॥ ग्रीषम ऋतु रवि तेजसुं सूके सरवर नीर, शेल शिखर मुनि तप तपे; दाजे नग्न शरीर ॥ वे गु० ॥ ७ ॥ पावस रेण डरियामाणी, वरसे जल धार, तरु तल वसे तप तपे, वाजे झंझावाय ॥ वे गुरु० ॥ ८ ॥ शीत पड़े कपि मद गले, दाजे साहु वन-राय, धार तरङ्गिणीके तटे ठाढे ध्यान लगाय ॥ वे गु० ॥ ६ ॥ इन विध दुधर तप करै, तीनो काल मझार, लग गये सहज स्वरूप में, तनसुं ममता निवार ॥ वे गु० ॥ १० । रङ्ग महेल में पोहोढ़ता, कोमल सेज विछाय, ते काकराली भूमि में सोवे समकर काय ॥ वे गु० ॥ ११ ॥ गज चढ़ चलता गर्भ सुं, सेना सज चतुरङ्ग, निरख निरख पग वे धरे, पाले करुणा

अङ्ग ॥ वे गुरु० ॥ १२ ॥ खटरस भोजन जीमतां सोवन थाल मभार, अवे सव छिटकाय ने फासुक लेता आहार ॥ वे गु० १३ ॥ पूर्व भोग न चिंतवे, अग्गम वाञ्छा नाय, चतुर गति दुःख से डरे, सूरत लगी शिव मांय ॥ वे गु० ॥ १४ ॥ वे गुरु चरण जहां धरे, जङ्गम तिर्थ जेह, सो रज मम मस्तक चढ़ो, वुधर मांगे एह वे गुरु मेरे उरवसो ॥ १५ ॥

॥ इति मुनिवर सज्भाय सम्पूर्णम् ॥



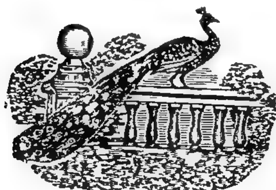
॥ नेमिनाथजी री जान ॥

—०:०—

ऐसा जादवपती रे ऐसा जादवपती, परणवा पधारया राजमती ॥ ए टेर ॥ अगरसेण राजा रे पुत्री ईसी, शास्त्रमें केयो आभे बीज जिसी। ऐसा० ॥ १ ॥ व्यानें विआवण जावे नेम कुंवार, बहू विध साथे सजीया कृष्ण मुरार॥ ऐसा०॥२॥ शक्रेन्द्र ब्राह्मणनो रूप धरे, सन्मुख आयो

ईम अर्ज करे ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ लगनमें दिखे छे कोई अधुर, ईण अवसर नहीं परणे जरूर ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ कृष्ण केवे रे ब्राह्मण आज ईहां, पील चावल थाने केण दिया ॥ ऐसा० ॥ ५ ॥ पशुओ को वाटमें वाड़ा भरिया, करुणा करीने प्रभु पाछा फिरया ॥ ऐसा० ॥ ६ ॥ संजम लेई त्यागी रिद्ध छती, कर्म खपाय पांम्या सिद्ध गती ॥ ऐसा० ॥ ७ ॥ गुरु नंदलाल दयाल मुनिस, मांडल गढमें गाया तिस ॥ ऐसा० ॥ ८ ॥

इति ।



॥ अथ श्रीऋषभदेवजी महाराजरी किर्ती लिख्यते ॥



॥ लावणी चाल तुरा किलंगीरो चालमें ॥



श्रीऋषभदेव भगवान हुये वडभागी, महाराज ज्ञानका ध्यान लगायाजी ; श्रीजैनधर्मका मूल और मारग वतलायाजी ॥ टेर ॥ ये जेन धर्म धर्म महाधर्म है, महाराज जो कोइ इसपर चलता है, करे जीवकी दया तो लख चोरासी टलता हे ; है दया धर्म निज चीज वीज मुक्तिका, महाराज वो नही सड़ता गलता है, जैनधर्म पर चले वोही नर फुलता फलता हे ; (उडावणी) श्रीऋषभदेवको जो कोइ शीश नमावे, वो अपने मनका चिन्ता ही फल पावे, महाराज चरणोमें चित्त जो लायाजी, श्रीजैनधर्मका मूल और मारग वतलायाजी ॥ १ ॥ वस श्रीजेनधर्मका येही मूल मारग हे, महाराज जीवको नह

सतानाजी, और कीड़ी मकोड़ी हरे वृक्षसे वच
जानाजी, छव काया उपर जो रक्षा करता, मह
राज वो सतरे भेदे संजम पानाजी, पाप अठ
टाल सीधे मारगको जानाजी, (उडावणी) हु
चोवीस तीर्थंकर जैन धर्ममें भारी, हुआ सव
प्रथम ऋषभदेव अवतारी, महाराज जीने
जैन चलायाजी ; श्रीजैन० ॥ २ ॥ सत्य वच
मुनीका मुनीराज ही जाने, महाराज पांचु
इन्द्रियोंको मारेंजी, एक निज नाम हिरदे
केवल ज्ञान उचारेंजी, धन माल त्यागकर मुन
राज हुय वेठे, महाराज जैनका धर्म अपारा
एक निज नामसे काम रखेतो पार उतारा
(उडावणी) श्रीऋषभदेव भगवानने एसा कीन
सव छोड़ दिया एक निज नाम रखलीना, म
राज नाम हरिनाम रखायाजी, श्रीजैन० ॥ ३
समरण मंत्र नवकारका हरदम कर ले, महार
मुनी हो कनक कामणी त्याग, और महा
है पांच इनोको साध लगाले लाग, तूं तृ

तामस त्याग वेरागी हुयजा, महाराज वारे व्रतोंसु तूँ मत भाग, अव सुता हे किस नींद गर्वमें जगणा है अव जाग, (उडावणी) तूं केइ पूरव चोरासी भटक कर आया, कोइ दया धर्म से देही मनुष्यकी पाया, महाराज पुण्यका जोग सवायाजी, श्रीजैन० ॥ ४ ॥ चवदे नेम श्रावकका इनको करणा, महाराज आठों कर्माको टारोजी, और क्रोध मान मद मोह लोभ पांचों को मारोजी, गुरु साहअली और करीमवकस रतनाजी महाराज गर्व गर्वियोंका गालाजी, मत करो कोइ अभिमान जीवकी रचा पालोजी, (उडावणी) जो गुरुसुं वदले वो पापी हे चेला, संसारमें उजला करदो में हुँ मेला, महाराज का लेखां नेरा केवायाजी, श्रीजैनधर्मका मूल और मारग वतलायाजी ॥ ५ ॥ इति॥

॥ गारव री लावणी ॥

हॉक मत कर गर्व दीवाना, सुण सतगुरूकी सीख सयाना ; धरा रेवे धन माल होत तन राख मसाणारे हांक मत कर गर्व दिवाना ॥ टेर ॥ संत कंवरकी सुन्दर काया अमर रूप देखणकुं आया, गर्व किया उस वख्त विरलाया, पीक दाणीमें थूकत कीड़ा देख डराणारे हांक मत कर गर्व दिवाना ॥ १ ॥ सोवन लंका समदरी खाई, हरि सुत कुंभकरणसा भाइ, तीन खंडमें आण दवाइ, वदि करी जद रावण लछमण हाथ मराणारे हांक मत कर० ॥ २ ॥ नगरी द्वारिका देखण लायक, छप्पन कोड जादवको नायक, कृष्ण महावली सुर थे पायक, भस्म हुआ छण मांय देखता सव कमठाणारे हांक मत० ॥ ३ ॥ वीर ब्राह्मणी कूखमें आया हरीचंद राजा महा दुख पाया, मुंज भूपति मांगने खाया, अभिमानी संभव चकरी जलमें डवका-

णारे हांक; मत० ॥ ४ ॥ झूठ कपट करके धन जोड़े रात दिवस घर धंधा दोड़े, मद छकीयो तृष्णा नहीं छोड़े, मत कर ममता आप मुवा सब माल वीराणारे हांक मत० ॥५॥ मात पीता तिरीया सुत ग्याती, सब स्वार्थके मिले संगाती, पर भव जाता कोइ न साथी, दान शील तप भाव के ले लो साथ खजानारे हांक मत० ॥ ६ ॥ अथर जगत जिम बादल छाया, इन्द्रजाल सुपने की माया, सांझ देख गर्वे मत भाओ, लक रहा सुरज विच डवके लेसी चमकाणारे हांक मत० ॥ ७ ॥ क्रोध मान मद लोभ न राखो, मर्म वचन किणारो मत भाखो, प्रेम सहित अनभव रस चाखो, धन नर कृष्ण लाल निज तत्त्व पिछाणारे हांक मतकर गर्व दिवाना ॥ ८ ॥

॥ इति ॥

॥ श्री निर्मोही री पांच ढाल लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

निरमोही गुण वरणवुं, देण भवक प्रीति बोध;
कथा कार इधकार छे, जित्यो मोह महा जोध
॥ १ ॥
शक्रेन्द्र गुण वरणव्या, इन्द्र सभामें जोय;
निरमोही परवार में, मोह न व्यापे कोय ॥ २ ॥
एक देव पारख्या निमत, धारी मिनखा देह;
जोगी रूप करी लखे, किम जितो ए नेह ॥ ३ ॥
राय कुँवर परछन कियो, जोवे सगलो साथ;
फिरती दासी रावली, जोगी सूँ करे बात ॥४॥

॥ दोहा सोरठा ॥

सुण दासी मुझ बात, तुझ सुखदायक मठ कने;
सिंह हण्यो साचात कहेतां हिवडो थरहरे :—

॥ राग सोरठ भरतजी ॥

आत्म ज्ञान तणो नहीं रसीयो, निज सुख नही
[illegible] थे ;

भेख लियो पिण भेद न पायो, तूँ राग द्वेष नो ताण्यो ॥ १ ॥
हो जोगी कुण थारो, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाड़ो हो जोगी कुण थांरो, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाडो ॥
मोह सुखदायक मांही विराजे, सो तो मार न सकीये, और सर्व सुपने की माया, विगर विचारयो न बकिये ॥ हो जोगी कुण थांरो, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाड़ो ॥ २ ॥ आप आपणी थीत कर जासी, कुण राजा कुण रांणा ; आप सरुपी आप चितानंद, चाकीरा भरम मंडाणा हो जोगी कुण थारो, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाड़ो ॥३॥
तूँ जोगी क्युँ थरहर कांपे, सहु सुपने की माया, जोग तणी छे बातां न्यारी, स्युं हुवे राख लगाय हो जोगी कुण थांरो, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाड़ो ॥ ४ ॥ ए कुटम्ब विटम्ब तजी ने किम कहे थांरो म्हारो, दासी वचन सुण जोगीसर, अन्तर नयन उघाडो॥ हो जोगी कुण

थांरा, कुण म्हारो, ए जुग छे हटवाड़ो ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

वचन सुणी ने चमकियो, इण ने सोच न कोय;
चाकर ने ठाकर घणा, हिये विमासी जोय ॥ १॥
जाय कहूँ हिव बाप ने, तिण रे कँवरज एक;
राज रिद्ध सहु कारमी, करसी दुःख अनेक॥२॥

॥ दोहा सोरठा ॥

सांभल तूँ राजांन, मुझ आश्रम ने पाखती;
तुम कुल तिलक समान, सिंघ विदारयो कुंवर
ने ॥ १ ॥

॥ राग मांस ढ़ाल दुजी ॥

तूँ किम भुल्यो हो जोगीसर तूँ किम भुल्यो हो,
कँवर कहो किम मांहरो, मत मोह अलुजो हो,
म्हारो कदेयन विछड़े, अन्तर कर वुजो, हो जोगी
सर तूँ किम भुल्यो हो ॥ १ ॥
वाए मिलिया वादला, छिन मां ही लासी हो
संजोगे आई मिल्या, विजोगे उठ जासी हो,
ेी . तूँ किम भुल्यो हो ॥ २ ॥ सुपन भरम

जग जाल ए, जोगी किम राच्यो हो; मोह जाल गल पहरने, जीव नट जिम नाच्यो हो, जोगीसर तूँ किम भूल्यो हो ॥ ३ ॥ बाप मरी बेटो हुवे, बेटी मर माता होय ; अन्तर ज्ञान विचार ले, ए जगना नाता हो, जोगीसर तूं किम भूल्यो हो, ॥ ४ ॥ जोगी रह गयो जोवतो, एवा पिता कोइ होय; यो कठिन हृदय एनो घणो, में लिधो जोय हो जोगीसर तूँ किम भूल्यो हो ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

बाप तणो मोह अलपता, आणे न मनमेंदुख ; माय जीव अति दुख करे, जिण राख्यो निज कुख ॥ १ ॥ जाय कहूँ हिव मायने, सुणतां छोड़े प्राण, कठिन अग्र अति पेटनी, इम सहु मुख की वाण ॥ २ ॥

॥ दोहा सोरठा ॥

सुण मइया मुझ वांण, कँवर भणी सिंघ मारियो,
छुटया नहीं मुझ प्राण, कहतां हिवड़ो थरहरे ॥१॥

॥ ढाल तीजी ॥

शंकर वसे रे केलास में। भोला भरम में किम भमे, क्युं तुझ झालज उठीरे, आत्म ज्ञान विचारतां, ए सहु वातज झुठी रे, ए जग सगलो रे कारमो ॥ १ ॥ थित अनुसार परवार ए, कुण सुख दुख नो दाता रे, थित पुरी कर चालसी कुण बेटो कुण माता रे, ए जग सगलो रे कारमो ॥ २ ॥ मूर्ख नर मन में, घणी राखे डंडी आसा रे; देखत ही गल जावसी, ज्युं जल मांही पतासा रे, ए जग सगलो रे कारमो ॥ ३ ॥ पुद्गल फंद तो वन्ध किसो, जोवो हृदय में जोगी रे; हूँ तूँ मन मे तेवड़े, तूँ तो अन्दर रोगी रे, ए जग सगलो र कारमो ॥ ४ ॥ संजोगे मिलीया सहु, विजोगे सहु विगटे रे; आत्म ज्ञानी आदमी, या वात नहीं अटके रे, ए जग सगलो रे कारमो ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

डाकण जिसी, आंत न दीजो कोय;

सगाई रे, अन्तर ज्ञान लख्यो नहीं वावा, अ
ए राख लगाई रे, जोगी तें जोग री जुगत
जाणी ॥ ४ ॥ भरम जाल ए मरणो न रहणे
मूल रहे न राखी रे, इणा ने भुरे सोही ज्ञान स
अलगो, सूत्र सिद्धान्त छे साखी रे, जोगी
जोग री जुगत न जाणी ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

मन वच कर डोल्यो नहीं, सांभल कुंवर स्वरुप
सूर परखत हर्षत हुवो, अहो अद्यातम रु
॥ १ ॥ निरमोही ईण कारणे, ऊपसम भाव वि
सूरपति सुद्ध गुण वरणाव्यां, प्रतक लिना दे
॥ २ ॥

॥ दोहा सोरठा ॥

धन निरमोही राय, धन परिवारज समकति,
पूरव पुण्य पसाय, शुद्ध संजम एवी पाइये ॥ १॥

॥ ढाल पांचमी ॥

कोयलो परवत धुंधलो रे लाल ॥ ए देशी ॥

नैं कुंडल झल हले रे लाल, हिये अमोलख
र रे राजेसर ;
थ जोड़ी पाय पड़े रे लाल, करतो जय जय
कार रे राजेसर; धन धन करणी थांहरी रे लाल
॥१॥ राज कॅवर प्रगट कियो रे लाल, लागो
पिता रे पाय रे राजेसर; गुण करतो सूर हर्षयो
रे लाल, आयो जिण दिश जाय रे राजेसर; धन
न करणी थांहरी रे लाल ॥ २ ॥ इम आतम
रस पीजिये रे लाल, किजिए समकित सुद्ध रे
राजेसर, राग द्वेप कर्म जितिए रे लाल ; टालिये
कुमत कुबुद्ध रे राजेसर धन धन करणी तांहरी
रे लाल ॥ ३ ॥
कथाकार ईधकार छे रे लाल, जिण सुं वणाई
ढाल रे चतुर नर ; निज मन थीरता कारणे रे
लाल, जितण मोह छमा जाण रे चतुर नर,
धन धन करणी तांहरी रे लाल ॥ ४ ॥ सम्वत
अठारे चिहोतरे रे लाल, पाली चौमासो किधो रे
चतुर नर , रतनचन्द आनन्द में रे लाल, पांच

ढाल प्रसिद्ध रे चतुर नर, धन धन करणी थांहरी
रे लाल ॥ ५ ॥

॥ इति श्री निरमोही पांच ढाल समाप्तम् ॥

॥ अथ श्री रे नेमि राजमती की सिज्जाय ॥



॥ दोह ॥

शासन नायक समरिये, मन वंछित सुखदाय॥
राजुल इकवीसी कहुं, सुणज्यो चित्त लगाय॥
॥ १ ॥

चित चलियो रह नेम नो, देखि राजुलरूप।
दृष्टान्त देयने राखियो, पड़तो भव जल कूप॥२॥

॥ ढाल ॥

राजमती इम विनवे हो, मुनिवर मन चलीयो
तूॅं घेर ; थोड़ा सुखां रे कारणे हो मुनिवर क्युं
हारे नरभव फेर॥ १ ॥

सुण साध जी हो मुनिवर, मन चलियो तूॅं घे
ए आंकड़ी ॥

पञ्च महाव्रत आदरया हो;मुनिवर मेरु जितने

र, वसियारी वान्छा करो हो मुनिवर, धृग थारो
व्रतार ॥ सु० ॥ मु० ॥ चित्त चलियो तूं घेरा॥
२ ॥
रागे मन वाल ने हो मुनिवर. लिनो संजम
ार,
अव कायर क्यों होवे हो मुनिवर, देख पराई नार
सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ ३ ॥
राज पंथ ने छोड़ ने हो मुनिवर, ऊजड़ मार्ग
मत जाव, अमृत भोजन चाखने हो मुनिवर,
अव चूकस किम खाय ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥
॥ ४ ॥
गज असवारी छोड़ने हो मुनिवर, खर ऊपर मत
बैस, स्वर्ग तणा सुख छोडने हो, मुनिवर, पताला
मत पैस ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ५ ॥ चन्दन वाल
कोयला करे हो मुनिवर, आंवो काट ववुल,
कुण बोवे घर आगणे हो मुनिवर, ज्युं होसी
थारे सूल ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ घर घर फिर-
सी गोचरी हो मुनिवर, देख पराई नार, हड़

नामा वृक्ष नी परे हो मुनिवर, डिगता न लागसी वार ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ७ ॥ वमियारी वान्छा मत करो हो मुनिवर, गन्धन कुलमति होय, रत्न चिन्तामणी पाय ने हो मुनिवर, कीच मांही मत खोय ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥८॥ कुल मोटो आपां तणो हो मुनिवर, जिण सामो तूँ जोय, काम भोगने तुँ वान्छसी हो मुनिवर, भलो न कैसी कोय, सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ ९ ॥ गोवाल भण्डारी, सारखो हो मुनिवर, हमाल उठायो भार, बोझ मजुरी अरथीयो हो मुनिवर, नहीं माल सिरदार ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ १० ॥ घणो रूप नारि तणो हो मुनिवर, वस्त्र गहणा सार, देख देखने सीदावसी हो मुनिवर, जासी जमारो हार ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ ११ ॥ मन गमतां इन्द्री तणा हो मुनिवर, सुख विलसे घर मांय, त्यां स्त्री न्यारो रहे हो मुनिवर, त्यागी कह्यो जिनराय ॥ सु० ॥ मु०॥ चि० ॥१२ आवे वेश्रमण देवता हो मुनिवर, नल कुँवर

नो जात, सुपने मे वान्छु नही हो मुनिवर, थारी
कितरीएक वात ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥१३॥
जिहां तिहां ही विचरसी हो मुनिवर, नगर ने
वलि ग्राम, स्त्री देखी चित डोलसी हो मुनिवर,
नारी नरक नी ठाम ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि०॥ १४ ॥
तहु सरीखा घर नहीं हो मुनिवर, नहीं सरीखी
नार, केई मुण्डाने केई भला हो मुनिवर, चलीयो
जाय संसार ॥ सु० ॥ मु० ॥ चि० ॥ १५ ॥ ब्राह्मी
सुन्दरी वेनड़ी हो मुनिवर, सतीयां मे सिरदार,
कर करणी मुक्तें गया हो मुनिवर, नाम लिया
निस्तार ॥ सु०॥मु०॥चि०॥ १६ ॥ तिर्थंकर वावीस
मां हो मुनिवर, जग मे मोटा सोय, वालपणे तज
निसर्‌या हो मुनिवर, वन्धव साहमो जोय ॥ सु०
॥मु० ॥ चि० ॥ १७ ॥ नारी दुखरी वेलडी हो
मुनिवर, रमणी दुखरी खाण, इम जांणी ने
चेतज्यो हो मुनिवर, कह्यो हमारो मान ॥ सु०
॥ मु० ॥ चि० ॥ १८ ॥ वचन सुणि राजल तणा
हो मुनिवर, हीयो ठिकाणे आय, धन धन तुं

मोटी सती हो मुनिवर, गई मुगत मझार ॥ सु० ॥मु० ॥ चि० ॥ १६ ॥ ए दोनु उत्तम हुवा हो मुनिवर, पाम्या केवल ज्ञान, ए दोनु मुगते गया हो मुनिवर, किजे ऊणारो ध्यान ॥ सु ०॥ मु० ॥ चि० ॥ २० ॥ सम्बत् अठारे बावने हो मुनिवर, श्रावण मास मझार, चोथमल कहे पिपाड़ में हो मुनिवर, सुदी पंचमी मङ्गलवार। ॥ सुण साधजी हो मुनिवर, चित चलियो तूँ घेर (सुण साधजी हो मुनिवर, मन चलियो तूँ घेर) ॥ इति श्री रिट्ठनेमी राजमती की सज्जाय समाप्तम् ॥

—*—

॥ अथ श्री अनाथी मुनिनी सज्जाय ॥

श्रेणिक राय वाडी चढयो, पेखियो मुनि एकंत ॥ वर रुप कांते मोहियो, राय पुछे रे कहो रे विरतंत ॥ १ ॥ श्रेणिकराय हुँ रे अनाथी निग्रंथ तिण मे लीधो रे साधुजीनो पंथ ॥ श्रेणिक राय

हुँ रे अनाथी निग्रंथ ॥ ए आंकणी ॥ ईण कोसंबी नगरी वसे, मुझ पिता परिगल धन्न परवार परे परवर्‍यो हुँ छुं तेहनो रे पुत्र रत्न ॥ श्रे ॥ २ ॥ इक दिवस मुझ वेदना, उपनी ते न खमाय ॥ मात पिता सहु जुरि रह्या; तोही पण रे समाधि न थाय ॥ श्रे० ॥ ३ ॥ गोरडी गुण मणि ऊरडी, गोरडो अबला नार ॥ कोड़ पीड़ा मे सही, कोणे न किधी मोरडी सार ॥ श्रे० ॥४ ॥ बहु राजवैद्य बुलाविया, कीधा कोडि उपाय ॥ बावना चन्दन चरचिया, तोही पण रे समधि न थाय ॥ श्रे० ॥ ५ ॥ जग मांही कोई केहनो नही, ते भणी हुँ रे अनाथ ॥ वीतराग नो धर्म बायरो कोई नही रे मुक्ति नो साथ ॥ श्रे० ॥ ६ ॥ वेदना जो मुझ उपसमे, तो लेऊं संजम भार ॥ इम चिंतवतां वेदन गई, व्रत लिधुं में हर्ष अपार ॥ श्रे ० ॥ ७ ॥ कर जोड़ी राय गुण चिंतवे, धन धन तूँ अणगार ॥ श्रेणिक समकित पामीयो, वांदी पोहतो रे नगर मझार

॥ श्रे० ॥ ८ ॥ मुनि अनाथी गुण गावतां, तुटे कर्मनी कोड ॥ गणि समय सुन्दर तेहना, पाय वन्दे रे वेकर जोड़ ॥ श्रे० ॥ ९ ॥ इति ॥

॥ अथ मोक्षनगर सज्झाय लिख्यते ॥



गौतम स्वामी पुछा करे, विनो कर शीश नमाय प्रभुजी ; अविचल थानक में सुण्यो, कृपा करो मोय बताय प्रभुजी ; शिवपुर नगर सूहावणो ॥ टेर ॥ १ ॥ आठ कर्म अलगा किया, सारया आत्म काज प्रभुजी; छुटा संसार ना दुख थकी रहेवानो कुण ठाम प्रभुजी ॥ शिव० ॥ २ ॥ वीर कह्यो उर्ध्व लोक मे, मुक्त शिला तिण ठाम हो गौतम ; स्वर्ग छाईसां ऊपरे, तिणारा छे बारे नाम हो गौतम ॥ शि० ॥ ३ ॥ लाख पैंतालीस योजनां, लांबी पौली जाण हो गौतम , आठ योजन जाडी विचे, छेहड़े पतली अनंत वखाण हो गौतम ॥ शि० ॥ ४॥ ऊजल हार मोत्यां

णो, गौसंख–दूध ज्युं जाण हो गौतम; आ
तिण सूं उजली अति घणी, समा छत्र संठाण
हो गौतम ॥ शि० ॥ ५ ॥ अरजुन सोना सें
ऊजली, घठारी मठारी ज्युं जाण हो गौतम
फिटक बिच ही ऊजली, सूहाली अनंत वखाण
हो गौतम ॥ शि० ॥ ६ ॥ शिला उलंघी आया
गया, अधरह्या विराज हो गौतम, अलोकथी
जाय अवरया, सारया आतम काज हो गौतम;
॥ शि० ७ ॥ जन्म नही मरणो नही, नही चिन्ता
नहीं रोग हो गौतम ; वैरी नही मंत्री नही
नही विजोग नें संजोग हो गौतम ॥ शि० ॥ ८ ॥
भुख नही त्रिषा नही, नही हरख नही सोग हो
गौतम , कर्म नही काया नहीं, नही विषे
रस भोग हो गौतम ॥ शि० ॥ ९ ॥ गाम नगर
एकोय नही, नहीं वसती नही उजाड हो गौतम
काल तिहां वरते नहीं, नही रात दिवस तिथी
वार हो गौतम ॥ शि० ॥ १० ॥ शब्द रुप रस
गध नहीं, नही फरस नही वेद हो गौतम, बो

नहीं चाले नहीं, मूल न पामे खेद हो गौतम॥ शि० ॥ ११ ॥ राजा नही परजा नहीं, नहीं ठाकुर नहीं दास हो गौतम ; मुगति में गुरु चेलो नहीं, नहीं लोहड़ बडांरी रीत हो गौतम ॥शि० ॥ १२॥ अनोपम सुख पामे सदा, भिल रह्या अरुपी जोत प्रकाश हो गौतम; सगलां रा सुख सासता,सगला ही अविचल राज हो गौतम ॥ शि० ॥ १३ ॥ और जायगा सेके नही, रही जोत में जोत समाय हो गौतम ॥ शि० ॥ १४ ॥ केवल ज्ञान सहित छे, केवल दर्शन जाण हो गौतम ; चायक समकित निरमली, कदेइन हुवे उदास हो गौतम ॥ शि० ॥ १५॥ ए सिद्ध सरुप कोई ओलखो आणो मन वैराग हो गौतम शिव रमणी वेगा वरो, पामो सुख अथाग हो गौतम ॥शि०॥१६॥

इति श्री मोच नगर सज्जाय समाप्तम् ॥

॥ स्तवन सिद्ध शीलाका ॥

हो जी सिद्ध शीला सगलासरे, जोजन पेतालीस लाख हो प्रभु ॥ अरजुण सोनामे उजली विस्तार उवाई में भाख हो ॥ प्रभु शिवपुर नगर सुहावणो ॥ टेर ॥ १ ॥ म्हाने जावण केरो कोड हो, प्रभु पास जिनेसर वीनवुं ॥ म्हाने कर्म बन्धनथी छोडाय हो॥ प्रभु शिवपुर ॥२॥ थानके सदाईकाल छे सास्वतो ॥ मिल रही जोतमे जोत ॥ हो ॥ प्रभु तला लीन एकमें अनेक छे ॥ जाने कदीय न आवे दुःख ॥ हो प्रभु शिव० ॥३॥ जठेजन्म जरामरण कोय नही । नही चिन्ता नहीं शोक ॥ हो प्रभु, सासता सुख साता घणी ॥ ज्यारे कदीयन पडे विजोग ॥ हो प्रभु शिव० ॥ ४ ॥ जठे भूख तिरखा लागे नहीं । तिरपत रहे सदा भरपूर हो प्रभु ॥ ऊणारत उपजे नही । नही मेले भव अकूंर ॥ हो प्रभु शिवपुर ॥ ५ ॥ जठे ठाकुर चाकर कोई नहीं । सगला सरीखा होय हो प्रभु ॥ केवल ज्ञान

दर्शने करी ॥ चवदे राजरया छे जोय ॥ हो प्रभु शिव० ॥ ६ ॥ जठे सेठ सेनापती मंत्री। सुख भोगवे मराडली कराय हो प्रभु ॥ वोहला सुख वलदेवना ॥ वासुदेव तुले नहीं थाय ॥ हो प्रभु शिव० ॥ ७ ॥ जठे हय गय रथ लख चौरासी ॥ पायदल छिनवे क्रोड हो प्रभु ॥ चवदे रतन नव नीद घरे ऐसा नरपत केरा इंद्र ॥ हो प्रभु शिव० ॥ ८ ॥ होजी चौसठ सहेस अन्तेवरा। नाटक पड़े विध वत्तीस ॥ हो प्रभु ॥ महल बयालीस भोमिया। सहु राजन में विशेष ॥ हो प्रभु शिव० ॥ ९ ॥ हो जी वीसतार स्युं करूं वरतंत छे घणो। जंम्बुद्वीप पंगातीमाय हो प्रभु ॥ जुगल्या केरो वले जाणजो। जोड़ले जन्म नर-नार ॥ हो प्रभु शिव० ॥१०॥ होजी जीवा भगवती में भाखीयो। वले प्रश्नव्याकरण माय हो प्रभु ॥ ज्ञानी देवा दाखियो। कल्पवृक्ष पुरे ज्यांरी आस ॥हो प्रभु शिव ०॥ ११ ॥ होजी चक्रवृतने जुगल्या थका। सगलाई सुरांरा सुख हो प्रभु ॥

इन्द्रतुले लागे नहीं । सगलाई देवांरा सुख ॥ हो प्रभु शिव० ॥१२॥ होजी इन्द्र थकी अधिका कह्या । निग्रन्थ मोटा अणगार हो प्रभु ॥ सदाई सुख सन्तोप में रहे । ज्याने भोग जाण्या वमण जीसो अहार ॥ हो प्रभु शिव० ॥१३॥ होजी अनन्ताही सुख अरिहन्तना । वले सिध वडा सरदार हो प्रभु ॥ तीनलोक मे कोई ओपमा लागे नही । म्हाने केतां न आवे पार ॥ हो प्रभु शिव० ॥ १४॥ होजी अन्तरजामी आपछो । पर दुःखांरा काटणहार हो प्रभु ॥ आसकरी मै आवियो । मने भवसागरथी तार ॥ हो प्रभु शिव० ॥१५॥ होजी तीनुंही कालरा देवता । रतनारे विमाणेवेस हो प्रभु ॥ जोड़ लगावे सिद्धतणी नहीं आवे अनन्त मे भाग ॥ हो प्रभु शिव० ॥ १६॥ होजी अश्वसेनरायजी रा नन्द । वामादेराणी अंग जातहो प्रभु॥ पास जिनेश्वर वीनवुं म्हारी आवागमन नीवार ॥ हो प्रभु शिव० ॥ १७ ॥ होजी सम्वत अठारे विसे सम्य फलोदी कियो चौमास ॥ हो प्रभु० ॥

पुज जेमलजी रा परसादथी रिखराय चन्दजी किया गुणग्राम ॥ हो प्रभु शिव० ॥ १८ ॥
॥ इति श्री सिद्ध शीला को स्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ दर्शन पच्चीसी लीख्यते ॥

चित समाधि होवे दश बोलां ॥ ढाल ॥ जीव अपुर्व जिन धर्म पासें, ज्यांरे कमी न रेवे काय रे प्राणी, कल्पवृत्त घर आंगण ऊग्यो, मन वांछित फल पायरे प्राणी,चित समाधि होवे दश बोलां ॥ १ ॥ लील विलास सदा साता में, सुख मांही दिन जायरे प्राणी, चित समाधि होवे दश बोलां ॥ २ ॥ दुजे बोले जातीस्मरण पामे पुन्य परमाण रे प्राणी, पुरव भव भली परे देखे समजो नी चतुर सुजान रे प्राणी, चित समाधि होवे दश बोलां ॥ ३ ॥ उतकृष्टा नवसे भवलग तांई देखे, पड़े सन्नी पचेन्द्री री ठीक रे प्राणी, आउखो जाणे आप भोग्या ते अवधि ज्ञान मंगली

करे प्राणी चित समाधि होवे दश बोलां ॥४॥ मृगा पुत्र महलां में पाम्यो, वले डेड के समगत सार रे प्राणी. मल्लीनाथजी रा छऊं मिंत्रीसर मुनी-वर मेघ कुमार रे प्राणी, चित समाधी होवे दस बोलां ॥ ५ ॥ क्षत्री नामे राय रखीसर, वले सुद-र्शन सेठ रे प्राणी, नेमी राजा चारित्र लियो तीनु होंता ठिकाणे ठेट रे प्राणी, चित समाधि होवे दस बोलां ॥ ६ ॥ भगु पुरोहितरा दोनु बेटा, वले तेतली प्रधान रे प्राणी, जातिस्मरण थी सुख पाम्यां, कहतां न आवे पाररे प्राणी, चित समाधि होवे दश बोलां ॥ ७ ॥ तीजे बोले जथा तथ सुपने, राजी होवे मन देखर प्राणी, रिध विरध पामे परभाते तिणारा अर्थ अनेक रे प्राणी, चित समाधी होवे दस बोलां ॥८॥ कई एक इण भव सिधा ए सुपने विचार रे प्राणी, श्री अरि-हंतजी री माता आद देइ देखे, चाल्यो भगवती सूत्र मे विस्तार रे प्राणी, चित समाधी होवे दश बोलां ॥ ६ ॥ चोथे बोले देवता रा दरशन

देख्यां ठरे त्यांसु नेणारे प्राणी, जग में जोत उ·
द्योत करे तो, समदृष्टी का सेनाणारे प्राणी, चित
समाधी होवे दश बोलां ॥ १० ॥ सोमल ब्रा·
ह्मण ने समझायो, देव समदृष्टी आयरे प्राणी.
समगत मांही कर दियो सेंठो, चाल्यो निरया
वलका सुत्रमें विस्तार रे प्राणी, चित समाधी
होवे दश बोलां ॥ ११ ॥ सुगडाल कुंभार ने,
सुर राते बोल्यो अमृत वैण रे प्राणी, श्री वीत·
राग आसी प्रभाते तु भेटीजे जग भांण रे प्राणी,
चित्त समाधि होवे दश बोलां ॥ १२ ॥ इमकेइने
सुर पाछो वलीयो प्रभु भेट्या प्रभात रे प्राणी.
समगत लेइने श्रावक हुवो, मिट गयो भ्रम मि·
थ्यात रे प्राणी चित समाधि होवेदश बोलां ॥
१३ ॥ अवधि लेइ अरिहंत जी आया, माता रे
गर्भ मांह रे प्राणी, पेटमें पोढ्या दुनिया देखे
पुरा पुन्य संच्या जिण राय रे प्राणि; चित समा·
धि होवे दश बोलां ॥ १४ ॥ सर्वार्थ सिद्धना
देवता देखे तिहां बैठा, लोक नाल रे प्राणी, श्री

अरिहंतदेवजीने परसन पुछे, उत्तर आपे दीन दयालरे प्राणी, चितसमाधि होवे दश बोलां॥१५॥ छटे बोले अवध ज्ञानी, देखें बहु संसार रे प्राणी सात मे बोले सुणे हो सुर ज्ञानी, मन परजा रो विस्तार रे प्राणी, चित समाधि होवे दश बोलां ॥ १६ ॥ मन पर्यव ज्ञान मुनीवर ने पावे लब्ध धारी अणगार रे प्राणी, गौतम गणधर आद देइ पाम्यां कैसी सामी भव पार रे प्राणी, चित समाधि होवे दश बोलां ॥ १७ ॥ समुन्द्र दोय नें द्वीप अढाइ जेमें सन्नी पचेंद्री होयरे प्राणी, ज्यां जीवां रे मनडे री वात्यां छानी न रहे कोय रे प्राणी ॥ चित० ॥ १८ ॥ आठ मे बोले केवल ज्ञानी, नवमे केवल दर्शन जाण रे प्राणी, लोक अलोक भली पर देखे, समजे कोई चतुर सुजाण रे प्राणी ॥ चित० ॥ १६ ॥ जघन्य तिर्थंकर वीश विराजे, उत्कृष्टा एक सो सीतर रे प्राणी, गणधर मुनिवर केवल ज्ञानी, हुवा पाटोन पाट रे प्राणी ॥ चित० ॥ २० ॥ लोकामें

उद्योत करत हे, हुवा तिर्थंकर चौवीस रे प्राणी, तीर्थ थापी ने कर्मा ने कापो, जग तारनजगदीश रे प्राणी ॥ चित० ॥ २१ ॥ दशमे वोले पंडित मरणो करे उत्तम करणी साध रे प्राणी, आवागमन रा दुःखसे छुटे, इम कह्यो जिनराज रे प्राणी, चित्त समाधी होवे दश वोलां ॥ २२ ॥ नुवे जणारो नामज भाख्यो, केयो अंत गढ मांही अंत रे प्राणी केवल लही ने मुक्ति सिधाया, हुवा सिद्ध भगवंत रे प्राणी ॥ चित० ॥ २३ ॥ दशासुत स्कन्ध सुत्र मांही, वली सामायिंगजी री साख रे प्राणी, तिण अनुसार जोड़ करीने रिप राय चन्दजी भणे मन हुल्लास रे प्राणी ॥ चित० ॥ २४ सम्वत् अठारेने वर्ष अड़तीसे, मेड़ते नगर चौमास रे प्राणी, पुज्य जयमलजी रे प्रसादे, दर्शण पच्चीसी जोड़ी मन उल्लास रे प्राणी, चित समाधि होवे दश वोलां ॥ २५ ॥

॥ इति दर्शन पच्चीसी समाप्तम् ॥

पन्नरे तिथी की सज्जाय ।

—०:०—

हांरे लाला एकम आयो एकलो । तूं तो पर भव एकलो जायरे लाला ॥ धर्म्म विना यो जीवडो । कांई भव २ गोता खायरे लाला ॥ १ ॥ श्री जिन धर्म्म समाचरो ॥ ए आंकणी ॥ हांरे लाला पुण्य पाप जग में कह्या । इन दोनां रा रूप पहचान रे लाला ॥ पुण्य से शिव सुख पाइये । कांई पाप छे दुःखरी खाण रे लाला ॥ श्री ॥२॥ हांरे लाला तीन मनोर्थ चिंतवो । कांई तीन शल्य दुःख दायरे लाला ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र सूं जीव तिर गया मोक्ष मांयरे लाला ॥ श्री ॥ ३ ॥ हां रे लाला च्यार चोकडी पर हरो । चारूं शरणा राखो घट मांयरे लाला ॥ हां रे लाला च्यार ध्यान जिनवर कह्या । कांई चार विकथा दुःख दाय रे लाला ॥ श्री ॥ ४ ॥ हां रे लाला पांचो इन्द्रिय वश करो । लेवो पंच महाव्रत धार रे लाला ॥ पांचवी गति पावे प्राणिया, कांई पांच ज्ञान श्रे-

कार रे लाला ॥ श्री ॥५॥ हां रे लाला आत्म स-
म, छव काय छे । तेहनी जतना करो हित लाय
रे लाला ॥ षट् पदार्थ ओलखो । छऊं लेस्यां में
तीन लेवो धाय रे लाला ॥ श्री ॥६॥ हां रे लाला
सात होथ तन वीरनो । सात नय कही जिनराय
रे लाला भय विशन सात परहरो सात नरक ए
छै दुःख दायरे लाला ॥ श्री ॥ ७ ॥ हां रे लाला
आठ मद उत्तम तजे । प्रवचन आठ आराध रे
लाला ॥ आठ कर्म अलगा करो । तो पामे
अत्तय समाध रे लाला ॥ श्री ॥ ८ ॥ हां रे
लाला नव वाड़ है सीलकी । नव नीधी चकरीने
होयरे लाला ॥ नव लोकान्तिक देवता ॥ नव
ग्रीवेग छे सोय रे लाला ॥ श्री ॥ ९ ॥ हां रे
लाला दश यती धर्म्म धारज्यो । दश बोले चित
समाध रे लाला ॥ दश गुण साधू दरशणो
मिले पुण्य होवे जो अगाध रे लाला ॥ श्री ॥
१० ॥ हां रे लाला ग्यारे पडिमा श्रावक तणी
ग्यारे अङ्गका होवो जाण रे लाला । ग्या

गणधर वीरना । पाम्या छे पद निर्वाण रे लाला ॥
॥ श्री ॥११ ॥ हांरे लाला बारे भावो भावना । बारे
पडीमा वहे मुनिराय रे लाला ॥ बारे व्रत श्रावक
तणा । बारे जप तपो सुख दाय रे लाला ॥ श्री
॥१२॥ हां रे लाला तेरे क्रिया परिहरो। तेरे काठिया
कीजे दूर रे लाला ॥ तेरे योग तिर्यंच का। तेरे
चारित्र सुख पूर रे लाला ॥ श्री ॥ १३ ॥ हां रे
लाला चउदे भेद जीव राखिये। चीतारो चवदे
नेम रे लाला ॥ चवदे पूर्व नो ज्ञान छै। चव-
दे राजू लोक कह्यो एम रे लाला ॥ श्री ॥ १४ ॥
हां रे लाला पंनरे भेदे सिद्ध हुआ। पंदरे परमा-
धामी देव रे लाला ॥ पंदरे दिवस को पख
कह्यो। ए कृश्न शुक्ल दो छे रे लाला ॥ श्री ॥
१५ ॥ हां रे लाला दोय पख एक मास छे
दोय मास ऋतु होय रे लाला ॥ तीन ऋतु ए
अयन छे, दो अयनें सम्वत्सर जोय रे लाल
॥ श्री ॥ १५ ॥ हां रे लाला जोयण कूप चौर
विषे। भरे वालग्र कोय रे लाला ॥ सो सो वर्षे

काढतां। खाली एक पले होय रे लाला ॥ श्री ॥ १६॥ हांरे लाला दश कोड पले सागर कह्यो । दश कोड सागर सरपणी होयरे लाला ॥ उत्सर्पिणी पण एतली॥ वीस कोड काल चक्र जोय रे लाला ॥ श्री ॥१७॥ हां रे लाला अनंत काल चक्र जीवड़ो । भम्यो च्यार गतीने मांयरे लाला ॥ पण समकित दुर्लभ कही । च्यार बोले काज थाय रे लाला ॥ श्री ॥१८॥ हां रे लाला नीठ नीठ नर-भव मिल्यो । सुणी जिन वरनी वाण रे लाला ॥ श्रद्धि फरसी जिण जीवड़े । ते पामें पद निर्वाण रे लाला ॥श्री ॥१६॥ हां रे लाला सम्वत् उगणीसे छपन्ने । फागण वदी दूज गुरुवार रे लाला ॥ पटि-याले देश पञ्जवा में। छे राजसिंह सिरदाररे लाला॥ श्री ॥ २० ॥ हां रे लाला केवल रिख पन्न रे तिथी । गाई बुद्धि प्रमाण रे लाला । हलू करमी सुण चेतसी । श्रद्धि जिनवर वाण रे लाला ॥ श्री जिन धर्म्म समाचरो ॥ २१ ॥ इति ॥

बारे मास (महीना) की सज्जाय लिख्यते ।



सुणजो भवी जीवा । जतन करोजी बारे मास मे ॥ आंकड़ी ॥ चेत कहे तू चेत चतुर नर। तीन तत्व पेछाण ॥ अरि हन्त देव निग्रंथ गुरुजी । धर्म दया में जाणहो ॥ सु ॥१॥ वैशाख कहे विश्वास न कीजे । छिन छिन आयु छीजे ॥ छव काया की हिंसा करता। किण विधि प्रभुजी रींझेजी ॥ सु ॥ २ ॥ जेठ कहे तू है अति मोटो। किसे भरोसे बैठो। दिन दिन चलणो नेड़ो आवे। ले ले धर्मको ओटोजी ॥ सु ॥३॥ अषाढ कहे आतम वश करिये । सबही काज सधरिये ॥ थोड़ा भवां के मांय निश्चय । मुगत तणा सुख वरीयेजी ॥ सु ॥ ४ ॥ श्रावण कहे कर साधूकी संगत । ले ले खरची लार ॥ बार बार सतगुरु समझावे । वृथा जन्म मतहोर जी ॥ सु ॥ ५ ॥ भादो कहे भगवंत की बानी । सुणिया पातक जावे ॥ शुद्ध भावसे जो कोई श्रद्धो। गर्भवास नहि आवे जी ॥

सु ॥ ६ ॥ आसोज कहे तूं आछी करले। नर भव दुर्लभ पायो ॥ धर्म्म ध्यानमे सेठो रहिजे। मत पड़जे भ्रम मांहीजी ॥ सु ॥ ७ ॥ कार्त्तिक कहे तूं कहां तक हे। हृदय मांही विचारो ॥ मात पिता सुत वहेन भाणजा। अन्त समय नहीं थारो जी ॥ सु ॥ ८ ॥ मृगसर कहे मृग समो जीवड़ो। काल सिंह विकराल ॥ खूट्यो आउखो उठ चलेगो। काया नाखेगा जालजी ॥ सु ॥ ६ ॥ पौप कहे तूं पोपे कुटंम्बको। परभव से नही डरता ॥ पाप कर्म पर काज ने करने। क्यों दूर गत में पड़ता जी ॥ सु ॥ १० ॥ माहा कहे मोह मांहि उलभ्यो। कर रह्यो म्हारो म्हारो ॥ धन कुटंम्ब सब छोड़ जायगा। कालको होयगो चारो जी ॥ सु ॥ ११ ॥ फागण फाग सुं मत संग खेलो। ज्ञान तणो रंग घोली ॥ कर्म वर्गणा गुलाल उडावो। जलावो भव भ्रमण होली जी ॥ सु ॥ १२ ॥ उगणीसे पचास फागणे। नाथ दुवारे आया ॥ गुरु खूबारिखजी प्रसादे। केवल रिख वणाया जी ॥ सु ॥ १३ ॥ इति ॥

॥ कविता ॥

सङ्गसे पुष्पको चन्द्र मिले,
अरु संगसे लोहा स्वर्ण कहावे ।
सङ्गसे पण्डित मूर्ख वने,
अरु संगसे शुद्र अमर पद पावे ॥
संगसे काठके लोहतरे,
तनको सतसंग ही पार लंघावे ॥
संगसे सन्तको स्वर्ग मिले,
अरु संग कुसंगसे नरकमें जावे ॥

॥ गजल सत्संगकी ॥

लाखो पापी तिर गये, सत्संगके परतापसे ।
छिनमें वेड़ा पार है, सत्संगके परतापसे ॥ टेर ॥
सत्संगका दरिया भरा, कोई न्हाले इसमें आनके
कट जाय तनके पाप सब, सत्संगके परतापसे ॥१॥
लोहका सुवर्ण वने, पारसके परसंगसे ।

लटकी भंवरी होती है, सत्संगके परतापसे ॥२॥
राजा परदेशी हुवा, कर खुनमें रहते भरे ।
उपदेश सुन ज्ञानी हुवा, सत्संगके परतापसे ॥३
संयती राजा शिकारी, हिरनके मारा था तीर ।
राज्य तज साधू हुवा, सत्संगके परतापसे ॥ ४ ॥
अर्जुन माला कारने, मनुष्यकी हत्या करी ।
छ· मासमें मुक्ति गया, सत्संगके परतापसे ॥ ५ ॥
एलायची एक चोरथा, श्रेणिक राय भूपति ।
कार्य सिद्ध उनका हुवा, सत्संगके परतापसे ॥६॥
सत्संगकी महिमा बड़ी, है दीन दुनिया बीचमें ।
चौथमल कहे हो भला, सत्संगके परतापसे ॥७॥
इति सत्संगकी गजल समाप्तम् ॥

—※—

॥ अथ निंदावारक सज्जाय ॥

—·०· ०—

निंदा म करजो कोइनी पारकी रे, निंदानाँ बोल्यां महा पाप रे ॥ वयर विरोध वधे घणो रे. निंदा करतो न गणे माय वाप रे ॥ निं० ॥ १ ॥ दूर बलंती कां देखो तुम्हें रे, पग मां

वलती देखो सहु कोय रे ॥ परना मलमां धोया लुगडां रे, कहो केम उजला होय रे ॥ निं० ॥२॥ आप संभालो सहुको आपणो रे, निंदानी मूको पडी टेव रे ॥ थोडे घणे अवगुणे सहु भरया रे, केहनां नलीयां चुंए केहनां नेव रे ॥ निं० ३ ॥ निंदा करे ते थाये नारकी रे, तप जप कीधुं सहु जायरे ॥ निंदा करो तो करजो आपणी रे, जेम छुटकावारो थाय रे ॥ निं० ॥ ४ ॥ गुण ग्रहजो सहुको तणा रे, जेहमां देखो एक विचार रे ॥ कृष्णपरें सुख पामसो रे, समयसुंदर सुखकार रे ॥ निं० ॥ ५ ॥ इति निंदावारक सजाय समाप्तम् ।

॥ अथ तेर काठियानी सजाय लिख्यते ॥

॥ झांझरिया मुनिवर, धन्य धन्य तुम अव तार ॥ ए देशी ॥ सोभागी भाई, काठिया ते निवार ॥ उत्तम पदवी तो लहो जी, जय ज जपरे संसार ॥ सो० ॥ का० ॥ ए आंकणी ॥

साधु समीपें आवतां जी, आलस आणें अंग ॥ धर्मकथा नवि सांभले जी, मोड़े अंग बहु भंग ॥ सो० ॥ का० ॥ २ ॥ बीजो मोह महावली जी पुत्र कलत्रशूं लीन ॥ प्राणी धर्म न आचरे जी, घर धनने आधीन ॥ सो० ॥ का०-३ ॥ त्रीजो अवज्ञा काठियो जो, शूं जाणे गुरु एह ॥ व्यापारें सुख संपजे जी, कीजें हर्ष तेह ॥ सो० ॥ का० ॥४॥ चोथे मान धरे घणं जी, मुझ सम अवर न कोई ॥ म वंदु जण जण प्रत्ये जी, एम महोटी माम मन होइ ॥ सो० ॥ का० ॥ ५ ॥ पांचमें क्रोधवशे करी जी, छांडे धर्मनां स्थान ॥ 'धर्मलाभ मुजने नवि दीयो जी, नवि दीयो गुरु सन्मान ॥ सो० ॥ का० ॥ ६ ॥ छठे जीव प्रमादथी जी, करे मदिरादिक सेव ॥ गुरु वाणी नवि सद्दहे जी, नवि माने जिन देव ॥ सो० ॥ का ॥ ७॥ सातमें कृपण पणा थकीजी, नावे साधु समीप ॥ धर्मकथा नवि सांभले जी, मंडाशे धन टीप ॥ सो० ॥ का० ॥८॥ आठ में गुरुभय ऊपन्यो जी,

कहेशे नरक नां दुःख ॥ के कहेशे केम नाविय
जी, पामशो कहो केम मोक्ष ॥ सो० ॥ का० ॥ ९ ॥
नवमें देहरे आवतां जी, दाखवे शोक विशेष ॥ घरना
कारज सवि करे जी, धर्मनां काज उवेख ॥सो०
॥का०॥ १०॥ अज्ञान दश में काठिये जी, देव-
तत्व गुरुतत्व ॥ धर्मतत्व गुरु सद्दहो जी, एम आ-
णे मिथ्यात्व ॥ सो० ॥ का० ॥ ११ ॥ अव्याक्षेपक
अग्यारमें जी, जलपलतो दिन रात ॥ प्राणी
धर्मन ओलखे जी, समझाव्यो बहु भांत ॥ सो० ॥
का० ॥ १२ ॥ बारमें धर्मकथा तजी जी, कौतुक
जोवा जाय ॥ रात दिवस ऊभो रहे जी, नयणे-
निंद न भराय ॥ सो० ॥ का० ॥१३॥ विषय तेरमो
काठियो जी, विषयसुं रातालोक ॥ विषय साकर
लेखवे जी, अवर सवे जी फोक ॥ सो० ॥ का० ॥
१४॥ सिद्ध क्षेत्र जातां थकां जी, काठिया ए
अंतराय ॥ द्रव्य भावथी टालिये जी, तो मनोवंछीत
थाय ॥ सो० ॥ का० ॥ १५ ॥ तेर काठिया जिने कह्या
जी, समजी वर्जो एह ॥ कुशल सागर वाचक

तणो जी,उत्तम कहे गुणगेह ॥ सो० ॥ का० ॥ १६
॥ इति ॥

॥ अथ मुनि दानविजयजी कृत कर्म ॥ ऊपर सज्जाय ॥

। कपूर होवे अति ऊजलो रे ॥ ए देशी ॥ सुख दुःख सरज्या पामीयें रे, आपद संपद होय ॥ लीला देखी परतणी रे, रोप म धरजो कोयरे ॥ प्राणी मन नाणो विषवाद ॥ एतो कर्म तणा परसाद रे ॥ प्रा० ॥ १ ॥ फलने आहारे जीवीऊ रे, वार वरस वन राम ॥ सीता रावण लइ गयो रे, कर्म तणा ए काम रे ॥ प्रा० ॥ २ ॥ नीरपाखें वन एकलो रे, मरण पाम्यो मुकुंद ॥ नीच तणे घर जल वह्यो रे, शीसधरी हरिचंद रे ॥ प्रा० ॥ ३ ॥ नले दमयन्ति परिहरी रे,रात्रि समय वन वास ॥ नाम ठाम कुल गोपवी रे, नले निरवाह्यो काल रे ॥ प्रा० ॥ ४ ॥ रूप अधिक जग जा-

णीयें रे, चक्री सनतकुमार ॥ वरस सातशे भोग-वी रे, वेदना सात प्रकार रे॥ प्रा० ॥ ५॥ रूपें व-ली सुर सारिखा रे, पाण्डव पांच विचार ॥ ते वन-वासे रडवड्या रे ॥ पाम्या दुःख संसार रे ॥ प्रा० ॥ ६ ॥ सुरनर जस सेवा करे रे, त्रिभुवनपति वि-ख्यात ॥ ते पण करम विटंबीया रे, तो माणस केइ मात रे॥ प्रा०॥ ७ ॥ दोष न दीजें केहने रे, कर्म विटंवण हार ॥ दानमुनि कहे जीवने रे, धर्म सदा सुखकार रे ॥ प्रा० ॥ ८॥ इति कर्म नी सज्जाय समाप्तम् ।

—✱—

। अथ श्री सुमतीहंस कृत करम पचीसीनी सज्जाय प्रारंभ ॥

॥ ढाल ॥ पेख करमगति प्राणिया, सायर जेम अथाहो रे ॥ अलख अगोचर ए सही, इम भाखे जिण नाहो रे ॥ पे० ॥ १॥ ब्रह्माविष्णु महेसरा, करता भावे जेहो रे ॥ मारग चूकिया धीर ते, ऊजाडे

पड्या तेहो रे ॥ पे० ॥२॥ एह करम करता सही, मत
बीजो मन जाणो रे ॥ करम पसायें भोगवे, रांक
अने वली राणो रे ॥पे०॥३ ॥पापपडल सवि परिहरो,
सांचो जिनधर्म संचों रे ॥ पोथी पोढो म कर-
मनें, जीव भणी मत वंचो रे ॥ पे० ४ ॥ ॥कर-
मवसे सुख दुख हुवे, लीला लखमी लाहो रे ॥
भलाभला भूपती नड्या, राणहु ताजिम शाहो रे ॥
॥ पे० ॥५॥ करकंडूनें साधवी, परठवीयो सम-
साणो रे ॥ बेहु देशनो राजीयो, दुकर करम प्र
माणो रे ॥ पे० ॥ ६ ॥ सोल शणगार बनावता,
भरतेसर सुविचारो रे ॥ तप जपविणते पामीया,
केवल महल मझारो रे ॥ पे० ॥७॥ राणा रावणनो
कियो, लखमण वीरे संहारो रे ॥ लंक विभीषण
भोगवे, करम बड़ो संसारो रे ॥ पे० ॥८॥ अरी-
सेना अर्कतूल ज्युं; कृष्णागसी भुजपाणे रे ॥ दाह
देखि निजपुर तणी, मरण लहे एक ठाणे रे ॥
॥ पे० ॥ ९ ॥ दृढप्रहारी पापी वडो, हत्या कीधी
चारो रे ॥ केवलपामी तिणेभवे, पोहोतो मोक्ष

मझारो रे ॥ पे० ॥१०॥ शेठ सुता शिर परिहरी, ईलाची पुत्र रसालो रे, ऊपसम रस भर पूरियो, मुक्तिगयो ततकालो रे ॥ पे० ॥ ११ ॥ नंदनश्री श्रेणिकतणो, नंदीषेण रीषी गायो रे ॥ चारित्र सुं चित चुकवी,महीलाशुं मनलायो रे ॥ पे० ॥ १२ ॥ आषाढभूति महामुनि, मोदक सुं ललचाणो रे ॥ सदगुरु वचनने ऊलंगी, नटविशुं भंडाणो रे ॥ पे० ॥ १३ ॥ दासी मोहे मोहियो, मूंज वड़ो राजानो रे ॥ घरघर भीख भमाड़ीयो, मत कोई करो गुमानो रे ॥ पे० ॥ १४ ॥ घणा दिवस भोले वहे, वलिभद्र कांधे वीरो रे ॥ हरी चंदराजायें आणीयो, नीचतणे घरे नीरो रे ॥ पे० ॥ १५ ॥ साठसहस सुत सामटा, सगररायना सारो रे ॥ नागकुमारे वालिया, करम तणो परि चारो रे ॥ पे० ॥१६॥ तिर्थंकर चक्रवर्ति हरी, जे सुखभोगवे देखे रे ॥ शालिभद्र सुख भोगवे, ते सहू करम विशेषे रे ॥ पे ॥१७॥ सिंह गुफावासी मुनि,दोड्यो वेस्या वोले रे ॥ रत्न कंवल

कारण गयो,चोमासे नेपाले रे ॥ पे० ॥ १८ ॥ साधु थई चंडकोशीयो, पामी वीरसंयोग रे ॥ अणसण लही सूध मने, विलसे सुरना भोग रे ॥ ॥ पे० ॥ १६ ॥ अवला सवला जाणीने, सूतीकंत विमासी रे ॥ रात्ति मांहि मूकी करी, नलराजा गयो नासी रे ॥ पे० ॥ २० ॥ सतीय शिरोमणी द्रौपदी, नामथकी निस्तारो रे ॥ करम वशे तेणे सही, पंच वरया भरतारो रे ॥ पे० ॥ २१ ॥ सहस पचीस सेवा करे, सुर लखमी विण पारो रे ॥ सुभुमचक्रीस नरकें गयो, ब्रह्मदत्त ए अधिकारो रे ॥ पे० ॥ २२ ॥ धन्य धन्य धनो धीर जे,पगपग रद्धि विशेषो रे ॥ करम पसाय थकी लहे, कयवन्नो वली देशो रे ॥ पे० ॥२३॥ वस्तुपाल तेजपाल जे, करण अने वली भोजो रे ॥ विक्रम विक्रम पूरियो,करमतणी ए मोजो रे ॥ पे० ॥२४॥ संवंत सतर तरोतरे, श्रीसूमतीहंस उवझाय रे ॥ करमपचीसी ए भणी, भणतां आणंद थाय रे॥ पे० ॥२५॥ इति ॥

॥ कर्म रो स्तवन ॥

कर्म चंद कांई कांई नाच नचावै, श्रो श्रचरज म्हाने श्रावे ॥कर्म० ॥ १ ॥ श्राद जिनेशर अंतरजामी, हुवा है श्रादना करता ॥ तुम प्रसाद श्राहार ने काजे,रया वरस लग फीरता ॥कर्म० ॥२॥ उगणीसमां जिनराज मल्लीजिन, स्त्री वेद अवतरीया ॥ जाल लेइ लेइन छव राजा,कुंभ घरे परवरीया ॥ कर्म०॥३॥ अतुल वली महावीर सरीसा,जाह अंगूठें मेरू कंपायो ॥ तुम प्रसादे अनारज देशमे, संगम चालीने श्रायो ॥ कर्म०॥४॥ एक दिन भात्र देख जादवको,वैश्रमण द्वारा वसाई ॥ तुम प्रसाद तपसी दीपा वण,छन में श्राय जलाइ ॥ कर्म०॥५॥ सतीय शिरोमणी, चंदनवाला राज किनकाथाई ॥ तुम प्रसादे राजगृही, चौटेमें मोल विकाई ॥ कर्म० ॥६॥ हुं नरवुद्धि अजाण जन्मको, जीण सुए अचरज श्रावे,जीण वनमें नहीं धाक सिहनी, सुसलीयो केम डरावे ॥ कर्म० ॥७॥ कुड़ कपट मद

मच्छ ठगाई करने काम चलायो ॥ एक ठगाइ ईंध की किनी जिणमें, आकव नाम धरायो ॥कर्म० ॥८॥ हरचंद राय तारादे राणी, पुत्र लेइने निसरचा॥ सोभाग कुलने घरे करी चाकरी, पाणी पीसण करवा ॥ कर्म० ॥९॥ विक्रमराय पंचमें आरे, परदुख काटण कह्यो ॥ तुम प्रसाद हाथ पग खंढी, घाचीने घर रहियो ॥ कर्म०॥१०॥ मो सरिखो कूण नीच जगतमें, दुष्ट महा कुकरमी, उपर कली इसी वताउं लोक देखावे धर्मी ॥ कर्म ॥११॥ मोय सरीखो अनजान हुए, सो तो उपर दोष चढ़ावै, सुगरू कहे मा करोहो सगाई तो कुण पर जणावे ॥ कर्म० ॥१२॥ इत्यादिक मोटा पुरसा तोय, करकरणीने हटायो, सेस कहे इण संगत वावजी, थारो पार न पायो ॥ कर्म ॥१३॥ इति ॥



॥ दया की लावणी ॥

—०—

दयाको पाले है वुधवान, दया मे क्या समझे हेवान ॥

प्रथम श्री जैन धर्म मांही, चोवीस जिनराज हुवा भाई, मुखसे ज्याने दयाज बतलाई, दया-विन धर्म केह्यो नाही, धर्म रूची करणा करी, नेमनाथ महाराज, मेगरथराजा परेवो, सरणो रखकर सारचा काज, हुवा श्रीशांतीनाथ भगवान, दयाको पाले है वुधवान ॥ १ ॥ दूसरा [illegible] मझार, हुवाश्री कृश्नादिक अवतार, गिता [illegible] भागवत कीनी, और वेदा में दया [illegible] सरीखो धर्म नहीं, अहिंसा [illegible] और सर्वपंथ में, येही धर्म को [illegible] निज शास्त्र धरच्यान, दया [illegible] ॥ २ ॥ तिसरा मन [illegible] उनकी कुरान, [illegible] उसीको वेद [illegible]

मुस्तफा, सुण लेना इनसान, जो कीसी को दुःख देवेगा, जावै दोजक की खान,मार ज्यां मुदगल की पेछान, दयाको पाले है बुधवान ॥ ३ लानत है उसीमत तांइ, जीसी में जीवदया नाहीं, जीव रक्षा में पाप केवै, दुःख दुरगत का जो सेवे, मा हणो मा हणो वचन है, देखो आंख्यां खोल, सुत्र रहस्य में ना समझे,मुरख खाली करे झकझोल, कहो चत्रक केहुक अज्ञान, दया को पाले है बुधवान ॥ ४ ॥ इस तिनु मजहब के कह दीये हाल, इसो पर कर लेना तुम ख्याल, सुणके कुगुरू का संग देवो टाल, बणा तुम षट् काया रा प्रतिपाल, गुरू हीरालालजी रे हुकुमसे नाथ द्वारे मांय, किया चोमासा चोथमलने, उगणीसे साठ के मांय, सुण के जीव रक्षा करो गुणवान, दया को पाले है बुधवान ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ अथउपदेशी लिख्यते ॥

तेरी फुलसीदेह, पलक में पलटे, क्या मगरुरी

राखेरे ॥ आतम ज्ञान अमीरस तजने, जहेर जड़ी किम चाखे रे ॥ ते० ॥ १ ॥ काल वैरी तेरे लारे लागो,ज्युं पीसे जिम फाके रे ॥जरा मंझारी छलकर बेठी.जिम मुसे पर ताके रे ॥२॥ सिरपर पाग लगी कसवोई, तेवडा छिणगा राखे रे ॥ निरखे नार पारकी नेणा, वचन विषे रस भाखे रे ॥ ते० ॥ ३ ॥ इंद्र धनुष ज्युं पलकमे पलटे देह खेह सम दाखेरे ॥ इणसुं मोह करे सोही मुरख, इम कह्यो आगम साखे रे ॥ ते० ॥४॥ रत्नचन्द जी जग देख इथरता, बंधिया कर्म विपाकेरे ॥ सिव सुख ज्ञान दीयो मोय सतगुरु ॥ तिण सुखारी अवीलाखा रे ॥ ते० ॥५॥ इति ॥

—*—

॥ अथ कालरी सज्जाय लिख्यते ॥

इण कालरो भरोसो भाईरे को नही, ओकिण वीरीया मांहे आवे ए ॥ बाल जवान गीणे नही, ओ सर्व भणी गटकावे ए ॥ इण० ॥ १ ॥ बाप

दादो बैठो रहे, पोतो उठ चल जावे ए॥ तो पीण घेठा जीवने, धरमरी वात न सुहावे ए ॥ इ० ॥ २ ॥ मेहेल मिंदरने मालिया, नदीए निवाणनें नालो ए ॥ स्वर्गने मृत्यु पातालमे, कठेन छोडे कालो ए ॥ इ० ॥ ३ ॥ घर नायक जाणी करी, रच्या करी मन गमती ए ॥ काल अचाणक ले चल्यो, चोवयां रेह गई झिलती ए॥ इण० ॥ ४ ॥ रोगी उपचारण कारणे, वेद विचक्षण आवे ए ॥ रोगी नें ताजो करे, आपरी खबर न पावे ए ॥ इण० ॥ ५ ॥ सुंदर जोडी सारखी, मनोहर मेहेल रसालो ए ॥ पोढ्या ढोलिये प्रेमसुं, जठे आय पहुंतो कालो ए ॥ इण० ॥ ६ ॥ राजकरे रलियामणो, इंद्र अनोपम दिसे ए ॥ वैरी पकड़ पछाड़ीयो, टांग पकडने घींसे ए ॥ इ० ॥ ७ ॥ वल्लभ वालक देखने मांडी मोटी आसो ए ॥ छिनक मांहे चलतो रह्यो होय गई निरासो ए ॥ इण० ॥ ८ ॥ नार निरखने परणीयो, अपच्छरने अणुहारे ए ॥ सूल

वलतो रह्यो,आ उभी हेला मारे ए ॥ इण॰
॥ चेजारे चित्त चूपसुं, करी अंमारत मोटी
। पावड़ीए चड़तो पड्यो, खायन सकीयो
टी ए ॥ इण॰ ॥ १० ॥ सुरनर इन्द्र किन्नरा,
ाइ न रहे नीसंकोए ॥ मुनिवर कालने जीति-
ा, जिणदीया मुक्तमाहे डंको ए ॥ इण॰ ॥११।
किसनगढ मांहे सीडसटे, आया सेखे कालो ए॥
रतन कहे भव जीव ने, कीजो धर्म रसालो ए
॥ इण॰ ॥ १२ ॥ इति ॥

—*—

॥ अथ आत्म-शिक्षा सज्जाय लिख्यते ॥

(ढाल—कर्म न छुटेरे प्राणिया एदेशि)

मानन कीजे रे मानवी,माने ज्ञान विनाश ।
ध्यान न पायोरे धर्म्मनो, मरने दुर्गति जाय ।
मा०॥१॥ जे नर महेलां मे पोढता, करत
भोग विलास, ते नर मरने माटी थया, उ
उगा छे घास॥मा०॥२॥जे नर रुच रुच वांधत

शालु कसुमल पाग, ते नर मरिने माटो थया भांडा घड़े रे कुम्भार ॥ मा० ॥३॥ जे नर सुखमें विराजतां,वागुलता मुख पान,ते नर पोढ्या छे आग में,काया काजल समान ॥मा० ॥४॥ चौसठ सहस अंतेउरी,पायक छिन्नु जी कोड़,ते नर अंत अकेलड़ों, चाल्यो छे सहु रिद्ध छोड़ ॥ मा० ॥५॥ जे नर छत्र धरांवतां,चम्मर विझंता जी सार,ते नर पोढ्या छै आग में, ऊपर डांगां की मार ॥मा०॥ ॥६॥ जे नर दीपक करी पोढता, फूलड़ां सेज विछाय, ते नर अटवि मांहे पोढिया, चांचां मारे रे काग ॥ मा० ॥७॥ जादव पति सरिखा जी चलि गया, जोवो कृष्ण नरेश, वन को शूंवी मे एकलो, हणयो बांण सुं जेम ॥ मा० ॥८॥ दोढ़ा दोढ़ा रे चालता, निर्खता वलि छांय, पहिले पोहरे दिट्ठा हुंता,छेले दिशे जि नांय ॥मा०॥६॥ कहता म्हासुं जी कुण अड़े,म्हेंकाढां करड़ा नी वांक मगज मांहे मावतां नहीं, ते तो होय गया रांक, ॥ मा० ॥ १० ॥ गरीब लोकां ने खोसता, डरता

प्रभुजी से नांय, रावले रोक्या रे दुख पड़े, सोच करे मन मांय, ॥ मां० ॥ ११॥ घर मंदिर यांही रह्या, साथे पुराय ने पाप, कुटुम्ब काज कर्म्म बांधिया, भोगवे एकलो जी आप ॥ मा० ॥१२॥ धर्म विहुणी रे जे घड़ी, निश्चय निष्फल जाय, ओछा जीतव रे कारणे, मूढ रह्यो ललचाय ॥ मा० ॥ १३ ॥ नोवत घुरती जी वारणे, सरणाई संख भेर, काल तिहांने जी ले गयो, नहीं कोई लावे जी घेर ॥ मा० ॥ १४ ॥ धमण धमंति जी रह-गई, बुझ गई लाल अंगार, एरण ठवको जी मिट गयो, उठ चाल्यो जी लोहार, ॥मा०॥१५॥ सिरख पथरणा में पोढ़ता, तेल फुलेल लगाय, एक दिन इसड़ी वणी, कुत्ता काग जे खाय ॥ मा० ॥ १६ ॥ तन सराय में वासो करी, जीव साथे सुख चैन, शास नगारा कूंचरा, वाजत है दिन रैन ॥ मा० ॥ १७ ॥ परजालीने पाछा फिरया, कुंकुं वर्णी जी देह, जल में पैश सींचो लियो धृग धृग कारमु स्नेह ॥मा० ॥ १८ ॥ मानी नर

मानी थया, देता नारकि नींव, इम जाणि धर्म आदरे, ते तो पुणयवंत जीव ॥ मा० ॥ १६ ॥ निर्लोभी निर्लालची,छत्रकाय रा रत्तपाल, तिहांरी प्रतीत आंणज्यो,छोडो आल जंजाल ॥मा०॥२०॥ सद्गुरु सांसो रे टालसि,जोवो सुवुद्ध नरेश,साधु श्रावक व्रत पालजो, ज्यांसु सुगति मुगति सुख थाय ॥ मा० ॥ २१ ॥ कुगुरु कुमार्ग घालसि, रखे पतीजो त्यांय, हिंसा धर्म्म करायने, मेल से नारकी मांय ॥ मा० ॥ २२ ॥ तिहां कोइ आडो नहीं आवसी, जी जी जप से तिवार, मारसे हेलो रे एकलो, छेदन भेदन तेह ॥मा० ॥२३॥ अनंत भूख तृषा सही, शीत ताप दुःख घोर, धरती करवत सारखी, वेदन कठिन कठोर, ॥ मा० ॥ २४ ॥ पांच पच्चीस वाकी रह्या, हिंसा झूंठ अदत्त, मांस मद्य पर नारना लागा दोष अनंत ॥ मा० ॥ २५ ॥ देव ढुंढाला जी आवसी, करता लोचन लाल, देख्या जीवड़ो रे कांपसी, मारसि मुद्गल झाल ॥ मा० ॥ २६ ॥ हसतां

कर्म्मज बांधिया. रोयां छटेजी नांय, सतुगुरु देवे रे चेतावाणी, चेतो चतुर सुजाण, ॥ मा० ॥ २७ ॥ पड़दे रहती जी पदमणी, सचित नित शृंगार, आखर उतरयाजी धर्म्मरा, तव घर घर री पणिहार ॥ मा० ॥ २८ ॥ चिहू दिस हंडी जी चालती, हीडता हिंडोले खाट, पुण्य रो संचो पुरो हूवो, तव कवड़ी मांगे जी हाट ॥ मां ॥ २६ ॥ आगे जाचक ओ लगे. अवल्ल वड़ो असवार,अरथविण तिथिरे प्रगटिया, आणे ईंधन वार, ॥मा० ॥३०॥ राज तेज रिद्ध कुटुम्बरा,केसुं करो रे अहंकार, मेलो मंडियो छै कारमों, विछड़ंता नही वार ॥ मा० ॥ ३१ ॥ पृथ्वी पाणी अगन में, वायु वनस्पति त्रसकाय, इण रचा धर्म्म ऊपजे, दुख दारिद्र मिट जाय ॥ मा० ॥ ३२ ॥ परनारी संग परिहरो, क्रोध तजो दुख दाय, चोरी छोड्या सम्पति मिले, साच वोल्या सुख थाय ॥ मा० ॥ ३३ ॥ तृष्णा तोडो जी पापणि, वात करो संतोप. निंदा मकरो रे

पारकी, टालो आतम दोष ॥ मा० ॥ ३४ ॥ कूड़ कपट मेल त्याग ने, ध्यान धरो जी नवकार, रात्रि भोजन परिहरो, ज्यूं होसी जीवरो उद्धार ॥ मा० ॥३५॥ शील व्रत संजम आदरो, निर्मल राखो रे मन, पुंजी छोड़े जी घरतणो, विरला जगमांहि ॥३६॥ ए गुण धारया जी सुख लहें, पावे मोक्ष प्रधान, देवलोक मांहि वासो मिले, देखो नवतत्व ज्ञान ॥ मा० ॥ ३७ ॥ तिहां पिण सुख जे सुरतणा, रत्नजड़ित आवास, गहणा गांठा जी नव नवा, अधिकी जोत प्रकाश ॥३८॥ समा यिक ने पोसो करो, सद्गुरु री सुणो रे वखाण, प्रतीते धर्म्म पालजो, तो पर भव अमर विमान ॥ मा० ॥३९॥ शीयल व्रत संजम आदरो, निश्चो धरो मन मांहि, ज्यूं सुख पामो जी सासता, चित्ते चितवोजी ज्ञान ॥मा०॥४०॥ संवत् अठारे गुणया सीये, जोड़ि मन शुद्ध धार, वीर प्रभुजी इम कहै, छोड़ों आल जंजाल ॥ मान न कीजें रे मानवी ॥ ४१॥ इति श्री आतमशिक्षा सज्झाय सम्पुर्णम् ।

॥ दश पच्चक्खाण की सज्झाय ॥

॥ न्हालदे नी देशी ॥



दश पच्चखाणे जीवडो जी, कांइ पामे सुख अपार, करतां एक नोकारसी जी, (२) सो वरस नरक निवार, तप समो नही जगत मे जी, सुख तणो दातार ॥ तप समो नहीं जगतमेंजी ॥टेर॥ ॥ १ ॥ बिजु पोरसी वर्ष सहसनी जी, कांइ साढ़ पोरसी दश हजार, पुरीमढ लत्तएक वर्षनी जी, एकासणे दश लत्त धार ॥ त० ॥ २ ॥ नीवी तोडे कोड वरसने जी, कांइ दश कोड एकल ठांण, सो कोड एकल दत दहेजी, आंबिल सहस कोड़ जाण ॥ त० ॥ ३ ॥ सहस दश कोड उपवास में जी, कांइ छठ तणे तप धार, लख कोटी वर्ष खपाहीये जी, अट्टम कोटी दश लत्त टार ॥ त० ॥ ४ ॥ कोटा कोटी वर्षनो जी. कांई दशम भस्म करे कर्म, मुनिराम कहे तप कीजिये जी. पामे सहु शिव शर्म ॥ त० ॥५॥ इति ॥

॥ अथ सवासो शिष छतीसी लिख्यते ॥

श्री सद्गुरु उपदेश संभारो, धर्म सीख सुं बुद्धि धारो, विधि सहू मांहि विवेक विचारो, सगला कारज जेम सुधारो ॥ १ ॥ प्रथम प्रभाते शुभ परिणाम, नित लिजै भगवंत रो नाम, धणी रा सांम धर्म में रहीजे, कथन मुख थी झूठ न कहिजे ॥ २ ॥ धर्म दया मन मांहे धार, अधिक सहू में पर उपकार, वाद म करे जिहां वसवो वास, वैरी नो मत करजे विश्वास ॥३॥ वरजे समसठाम व्यापार, चाले अपने कुल आचार, मांइतांरी आंण म खडे, मोटा सेती आण मति मंडे ॥ ४ ॥ झगडे साख म देजे झुठी, आप वडाई म करे अपुठी, म लडे पाडोसी सूं मूल, अपणा सूं होजे अनुकुल ॥५॥ सझे व्यापार सूं पुंजी सारु, अटकल ठांम देइ उधारु, रखे वधारे ऋण ने रोग, लखण लेजे ज्यूं न हँसे लोग ॥ ६ ॥ वस्ती छेह म करिजे वास

पापी रे मत रहिजे पास, ऊँचो मत सोई
आकास, वित्त छते म करे वेपास ॥ ७ ॥ दि
रो स्त्री ने भेद न दिजे, कदेही सांभे पंथ
कीजे, पूत भणावे डर डाकर साथे, म चाले
लाड न मारे माथे ॥ ८ ॥ नान्हा ते मत जाणे
नान्हा, छिद्र पराया राखे छाना, अधिकारी म
करे अदेखाई, भंभेरे मत भूप भपाई ॥ ६ ॥
राजा मित्र न जाणे रंग, सुमाणस रो करजे संग.
काया राखी तपस्या कीजे, दान चले घर सारु
दिजे ॥ १० ॥ जोरावर सुँ न रमे जुवो, करेजे
मत घर आंगण कुओ, वैदां सुं मत करजे वैर,
गाल वोले तोही न कहे गेर ॥ ११ ॥ नारि कु-
लच्छण ने धन नास,साहलको पड़ियो पांमे हास,
अति पछतावे चित उदास, पंच मे पॉचे मत
परकाश ॥ १२ ॥ अमल न कीजे होडे अधिका,
वरा करिजे घर मे विधिका, गरथ परायो तूँ मत
गरहे, निखरे पाडोस पिण न रहे ॥ १३ ॥ दोय
भिडता एकलो मत देखे, धणी ने वुरो मत कही

जे द्वेष, जूते मत मोटा नी जोडे, छोकर वादरी रामत छोडे ॥ १४ ॥ गांम चलंता शकून गिणिजें, हणतां विण किणही न हणीजे, त्रिण गहणा दिजें नही व्याज, निश्चे वर्षनो राखें नाज ॥ १५॥ दुश्मण ने दुश्मण मत दाखे, रीस हुवे तोही मन में राखे, खत लिखाए मत विण साखें, मांणपोतानोगालमनाखे ॥ १६॥ लाज न कीजे नामे लेखे, वधारे परतीत विसेषे, धरीजे मेलज गॉम धणी सुॅ, इकतारी कर अपणी स्त्री सुॅ ॥ १७ ॥ चलतां वसतां सहु चीतारे, वाल्हा सैण मतां वीसारे, जावतो करतो रात जागे, न सुइजै अंगे नागे ॥ १८ ॥ जे करतो हुवे चोरी जारी, ऊण सेती कीजै नहीं यारी, वसत न लीजे चोरी वाली, लुंवे मत तूॅ निवली डाली ॥ १६ ॥ दे फूंका न वुझावे दीवो, पांणी अण छांण्यो मत पीवो, छींक लीयां कहीजे चिरंजीवो, रुठो मनावो फाटो सीवो ॥ २० ॥ म करो रवी साहमो मल मूत्र, लछण म लेजै

लावा लूत्र, पाप तजे तूँ सकजे पुत्र, सांभलजे सुभ शास्त्र सूत्र ॥ २१ ॥ भूंडा सुँ पिण करे भलाई, परहर पांचे जेह पलाई, वैठा वात करे वेई जो,तेड़या विण तिहांना हुवे तीजो ॥ २२॥ कारज सोच विचारी कीजे,खता पडयां ही अति मत खीजे, सुधरेय काम कहे स्यावास, म करे याचक निपट निरास ॥२३॥ म करे मूल किणही री निंद्या, छावी जे वली गुरु रा छंदा, नांम लोपीनें न हुइ जे निगुरा, नवि चांपी जे कीड़ी नगरा ॥ २४ ॥ आदर दीजें माणस आए, जिहां नही आदर तिंहा मत जाए, हसजे मत विण कारण हेत, कपडो पिण मत करे कुवेत ॥२५ ॥ वहु विपमें आसण मत वैसे, पर घर अण जांण्यां मत पेसे, पाणी अती तांण्यो मत पीजे, सारो ही दिन सोय न रहीजे ॥ २६ ॥ वांधे मत मल मूँत्र अवाधा, खाजे मत फल जीवां खाधा, वसंत पराई मतां विपोडे, छांनी परनी गांठ म छोडे ॥ २७ ॥ जीमजे आगलि भोजन जरि

शत्रु न हुइ जे कारिज सरीये, पैसे मत अदि ठे पाणी, तोड़े प्रीति मतां अतिताणी ॥२८॥ घरमें मत खाये फिरतो घिरतो, म कहे मरम न बोली जे निरतो, तेरु सुँ मत तोड़े तिरतो, वडांरे काम म थाए विरतो ॥ २६ ॥ पंथ टले तव लिजे पुछ, मोटां साहमी मत मोडे मुँछ, तुछ वचन म कहै तूँकार, मत वैसे वलि ठांसणी मार ॥ ३० ॥ भोजन ओपमा न कहे भुंडी, अपणी जाति विचारे उंडी, जिण सांभि-लतां ऊपजे लाज, एहवो म कहे वेण अकाज ॥ ३१ ॥ किजे नही पग पग क वाट, अण हूंतो ऊपजे उचाट, महिला सुँ न हुइजे मन मट्ठ, हाण न कीजे अपणो हट्ठ ॥ ३२ ॥ टेढा न हुइजे जंगी टट्टू, ललचायो मत थायजे लट्टू, पंडित मुर्ख करजे परिषा, सगला ने मत गणिजे सरिषा ॥ ३३ ॥ म कहे फिर फिर अपणो नाम, ठीक सुँ वेसे देखी ठामं, सुंवरो नाम न लेईजे सवारो, कोई हसी अण हंतो कारो ॥ ३४ ॥

जे परी तु वेठ वेगार, आप वसे जिहां हुवे
धिकार, दुटप्पी वात कहे दरवार, सहुने पूछी
तंतसार ॥ ३५ ॥ सीख सवासो कही
मभाय, साचवतां सहुने सुखदाय, थित नित
वेजय हर्ष जश थाय, इम कहे धर्मसी उव-
झाय ॥ ३६ ॥

॥ इति सवासो शिष छतीसी समाप्तम् ॥

— ० —

॥ अथ ज्ञान वतोसी रा दोहा लिख्यते ॥



कका कर कछु काम, धर्म हेत उद्यम, कछु
कर समरण ल्यै नाम, भज भगवंत म भुल
नूं ॥ १ ॥ खखा खिजमत रोस, कर्म कमाए
आंपणे, किसीयन दिजे दोष, विण भोगव्यां
छुटे नहीं ॥ २ ॥ गगा गर्व निवार, गर्व तणां
दु:ख याद कर, संकट उदर मझार, ऊंधे मुख
जव लटकते ॥ ३ ॥ घघा घरके लोक, स्वार्थ
मिले कुटम्ब सव, दु:ख पीड़ा आवे रोग, वांट

काल अनंत, घर घर किण ही न राखीयो, करणी करे बहु अंत, मुक्तपुरी सुख भोगवो ॥२२॥ चवा वैर नहीं जाय, जेती लछ पुन्ये मिली, ऊदे पाप के जाय, मन पछतावा रहि गया ॥ २३ ॥ भभा भरमत भूल, दीरघ दुःख सुख तुच्छ है, अवर नहीं सम तुल्य, जाप जपो भगवंत को ॥ २४ ॥ ममा मन न डुलाय, देख विराणी लच्मी, पूरव पुन्य कमाय, भोगवे आपो आपनी ॥ २५ ॥ यया घट मांय, नाम नहीं जगदीश का, सो घट सुधरे नांय, आरत ही भ्रमतो रहे ॥ २६ ॥ ररा रस न लुभाय, जिभ्या स्वाद निवारिये, मीन बहुत तड़फाय, कांटे विंध्यो तालवो ॥ २७ ॥ लला लोभ निवार, लोभ कियां कछु सुख नहीं, लोभ कियां दुख थाय एह कह्यो जिनराज जी ॥ २८ ॥ ववा वीशन नजेय, विशन कियां दुःख होत है, विशन कियो नलराय, हरयो राज तिण कर्म थी ॥ २^ ॥ शशा सत्त न छोड़िये, सत सूॅ रिद्ध सि

सत्तसुँ दर्शन राखियो, श्र भया दुखणी थाय ॥ ३० ॥ पपा खिजमत खुब कर, ले साहिब की औट, साहिब की खिजमत कियां लगे न जम की चोट ॥ ३१ ॥ ससा साहिब समर ले, स्मरण सुँ सुख होय, स्मरण करतां जीवड़ा, अविचल पद लह्यो सोय ॥ ३२ ॥ हहा हरदम भजन कर, भजन उतारे पार, भजन विहुणा प्रांणिया, किण विध ऊतरे पार॥ ३३ ॥ क्षक्षा क्षमा करो रे जीवड़ा, क्षमा वड़ी सँसार, गजसुकमाल क्षमा थकी, पहुंतो मुक्त मझार ॥ ३४॥ अक्षर बत्तीसी करी, आत्म पर उपकार, वधे ज्युँ कुरब कायदो, वधे ज्युँ वुध सँसार ॥ ३५ ॥ चतुर पुरुष वांचे तिके, चतुराई पामंत, पूरण किधी मुनि वरु, दोलत राम कहंत ॥ ३६ ॥

॥ इति अक्षर ज्ञान बत्तीसी समाप्तम् ॥

—*—

॥ कर्मा की सज्झाय ॥

सुखिया घरमें जनमियो, दुखी थयो किण काज, कर्मको आंटो रे ; कोई न खोलणहार, कर्मको आंटो रे ; दुखी थकी सुखीयो थयो, केई करता दीसे राज ॥ कर्म० ॥ कोईन० ॥ ॥ कर्म० ॥ एक आतम खोलणहार ॥ कर्म० ॥ १ ॥ बडा तपस्वी अवलिया, केई पाले छै ब्रह्मचार ॥ क० ॥ केई श्रेणी चढ पाछा पड़या, पंडित पेले पार ॥ क० को० क० ए० क० ॥ २ ॥ सिद्ध साधक केई पूछिया, फरयो फकीरां लार ॥ क० ॥ ग्रह गोचर केई पूजिया, ओर पूज्या पर्वत पाड़ ॥ क० ॥ ३ ॥ किण विध कर्मज बांधियां, किण विध दीवी अंतराय ॥ क० ॥ लाख उद्यम कर देखिया, पिण कुंण नहीं सक्यो वताय ॥ क० ॥४॥ कोई श्रावक धोरी वाजिया, निंदा करत अपार ॥ क० ॥ केई साधूकी करणी करै, पिण पड़या निंदाके लार ॥ क० ॥ ५ ॥ अरिहंतनो विरहो

पडयो, और अथयो केवल नांण ॥ क० ॥ पूर्व-
धारी विच्छेदिया, किणविध पडे पिछांण ॥ क०
॥ ६ ॥ सम्यकत्व ही आतां छतां, छुटे मिथ्या
गांठ ॥ क० ॥ केवल घाती गये हुवे, सिद्ध हुवे
चय आठ ॥ क० ॥ ७ ॥ अक्कल पिण चल्ले नही,
और चल्ले नही कछू जोर ॥ क० ॥ मुनि राम
कहे केवल विना, मचियो घोरमघोर ॥क०॥ ८ ॥
॥ इती कर्मा को आंटो केवली गम्य ॥

—※—

॥ अथ ललीत छंद ॥

परमदेवनो देव तुं खरो ॥ धरम ताहरो मे
नथी करो ॥१॥ भरममां भमो तुं नथी गम्यो ॥
कर्म फासमां हुं अती दम्यो ॥ २ ॥ गरीव
प्राणीना प्राण मे हण्यां ॥ तश थावरो जीवना
घणा ॥ ३ ॥ थरर धुजता मोतथी डरी ॥ अरर
एहनी घात मे करी ॥ ४ ॥ शदशभा जइ भुठ
वोलियो ॥ धरमी जीवनो मरम खोलीयो ॥ ५ ॥

शदगुणी शीरे आल आपीयां ॥ अरर पापना पंथ थापीया ॥ ६ ॥ अदत दानथी हु नथी डरयो ॥ परधिनो हरी केर में करयो ॥ ७॥ तसकरो तणा तानमां चढ्यो ॥ अरर पापना पुंजमां पड़यो ॥ ॥ ८ ॥ रमणी रंगमां अंग उलस्यु ॥ विषय-सुखमां चीतडुं वस्यु ॥ ९ ॥ शीअल भंगनो दोषना गणयो ॥ अरर हायरे बाहुरो वणयो ॥१०॥ अथीर दाममां हु रह्यो अड़ी ॥ धरम वात तो चीतना चढी ॥ ११ ॥ उंघत मोहमां हु थयो अती ॥ अरर माहरी शीथशे गती ॥ १२ ॥ क्रूर भावथी क्रोधमें ग्रह्यो ॥ सजन दुहवी रोषमां रह्यो ॥ १३ ॥ सरवजनथी संप छोडियो ॥ तरण तोलथी तुछ हुं थयो ॥ १४ ॥ मच्छर मनथी में वहु कर्यो ॥ ममत भावथी हु अती भर्यो ॥१५॥ मदछके चढ्यो मानमां अड्यो ॥ विनय ना कर्यो गर्वमां पड्यो ॥ १६ ॥ दगल वाजिये हू वहु रम्यो ॥ कपट कूड़मा काल निरगम्यो ॥ १७ ॥ मुख मीठुं लवी सृष्टी भोलवी ॥ अरर केमरे भुलशे

भवी ॥ १८ ॥ धन हीरा कणी मोतीने मणी ॥
अवुर आचनो हु थयो धणी ॥ १९ ॥ अधिक
आस्तो अंतरे घणी ॥ अरर लोभ ने नाश क्यों
हणी ॥ २० ॥ मगन मन थी साजनो परे ॥ हित
घणु धरी पोखी आखरे ॥ २१ ॥ तरकटी तणां
फंदमां फल्यो ॥ अरर रागथी ना लह्यो कल्यो ॥
२२ ॥ दिल डुबी रह्यु द्वेष दर्दमां ॥ गुण नथी
गण्या मेरी मर्दमां ॥ २३ ॥ अरुण आंखडी
रोषथी भरी ॥ अरर सर्वनो हु थयो अरी ॥२४॥
निज कुटंव ने नात जातमां ॥ वढी पड्यो हु तो
वात वातमा ॥ २५ ॥ अवुज आत्मा घात मां
घड्यो ॥ अरर क्लेश थी कुंपमां पड्यो ॥ २६ ॥
अण हु ता दिया आल अन्यने ॥ अलिक ओचरी
मेल्यु धनने ॥ २७ ॥ सद्गुरु तणो संग ना कर्यो ॥
अरर पापथी पीडमा भर्यो ॥ २८ ॥ परनी चोवटे
चुगली करी ॥ नृप सभा झुठी साहदी भरी ॥२९॥
पिसुन धुर्त हु लांच लालची ॥ पशु पणे रह्यो
पाप मां पची ॥ ३० ॥ पार पुठे परा दोप दाखवा ॥

जस तणा घणो स्वाद चाखवा ॥ ३१ ॥ रसहि
वात तो में करी छती ॥ भव अरण्यमां हुं रह्यो
अती ॥ ३२ ॥ अधम काममां हर्ष में धर्यो ॥
धर्म ध्यान मां अमरषे भरयो ॥ ३३ ॥ दुरगुणों
रच्यो मोहमां मच्यो ॥ अरर कर्मना नरतमां
नच्यो ॥ ३४ ॥ छल विद्या करी अर्थ संचिया ॥
झुठ लवी घणां लोक वंचीया ॥ ३५ ॥ पतित
रांक ने छेतर्या वहू ॥ अरर पाप हुं केटलां
कहुं ॥ ३६ ॥ शरीर शोधतो मे नवी कर्यो ॥
जड़ प्रसंग थी जुठमां फिर्यो ॥ ३७ ॥ सुध विचार
तो चित ना चढ्यो ॥ मिंछत सलतो मुजने
नड्यो ॥ ३८ ॥ कर्म वैरीए वीटीयो मने ॥ कर-
ग्रही करूं अर्ज जिनने ॥ ३९ ॥ करग्रहो प्रभु
रांक जाणीने ॥ दिल दया धरो मेहर आणीने ॥
४० ॥ तकशीरो घणी कोश के गणी ॥ बक्षीशो
गुना जगत ना धणी ॥ ४१ ॥ रींज करी खरी
ओडी आशने ॥ सरण राख जो खोडी दासने
॥ ४२ ॥ नम भुजा अही चंद्रमां ग्रही ॥ पटण

प्राचीथी पश्चिमें सही ॥ ४३ ॥ चतुर मासमां चंदरे रही॥ ललित छंद नी जोडए कही ॥ ४४॥

॥ इति ललित छंद समाप्तम् ॥

॥ अथ उदय विचार लिख्यते ॥

मिथ्यात्व ने उदय जीव अज्ञान पण पामे, अष्टकम उदै अश्रक्षपणुं पामे, जोगने उदै लेश्या पामे, अप्रत्याख्यानी न उदै अविरति पामे, मोहने उदै क्रोधादि च्यार कपाय पामे, कपाय मोहनी ने उदै वेदत्रिक पामे. नाम कर्म ने उदै गती च्यार मध्ये परिभ्रमण पामे, मिथ्यात्व मोहनो ने उदै मिथ्यात्व पामे।

॥ इति उदय विचार सम्पूर्णम् ॥

॥ भावना का हरिगीत छंद ॥

हुं नमुं वीतरागने, वीतराग पदने आप जे

राग द्वेष नष्ट थइने, परम तत्व प्रकाशजो ॥ लोक रूचीनो त्याग करीने, शुद्ध मार्ग आदरुं ॥ दुष्ट कर्मो नष्ट करी, आनन्द ने वेगो वरूं। कल्याण थाओ सर्वनु, परहितमां तत्पर रहुं । दोष सर्व नाश पामो, सहु लोकनुं कुशल चहुं ॥ ज्ञान दर्शन चरण गुण, आराधना प्रेमे रहो। अहो-निश ए प्रभु भावना हरिदासनी वेगे वहो ॥

॥ इति ॥

॥ दोहा ॥

(१) सिव हरन मंगल करन, धन है श्री जैन धर्म। यह समरथां संकट कटे, टुटे आठहूं कर्म ॥

(२) निचे जोयां गुण घणां, जीव जंत टल जाय। ठोकर की लागे नही, पड़ी वस्तु मिल जाय ॥

(३) लोभी गुरु तारे नही, तिरे सो तारन हार। जो थारे तिरणो होवे, तो निरलोभी गुरु धार॥

(४) साफी की सुधरे सदा, कढेन गोता खाय। कढेन पडे पाधरी, मन मैले की वात ॥

(५) सिंह समान यो जीव हे, कर्म करे चक चुर। प्राकर्म फोडे मांयलो, तो मुक्त किसी छे दूर ॥

(६) मन की सरधा मन मे धरिये, जिनसे पार ऊतरीये। मिथ्यात्वी से वाद न करीयें, अवसर मोन पकड़ीये ॥

(७) जब जैसी जाके उदय, वैसा सेवे स्थान। शक्त मरोडे जीव कूं, उदय महा बलवान ॥

(८) विनयवंत विगडे नही, ऊंडो दे उपयोग। तुरन्त लागे अवनीत ने, मिथ्यात रुपी यो रोग ॥

(९) जब लग आंकुश शीशपे, तब लग निर्मल देह। हाथी आंकुश वाहिरो, शिर पर डारत खेह ॥

(१०) विन आंकुश विगडया घणा. कुशिषे कपूत कु नार। आंकुश माथे धारिया, ज्यां रा खेवा पार ॥

(११) आरंभे धन निपजे, अनर्थे धन जाय। क्या
पत्थर कूटावसी, क्या लुचा सोधा खाय॥

(१२) देतो भावे भावना, लेतो करे संतोष। वीर
कहे रे गोयमा, ए दोनु जासी मोक्ष॥

(१३) छोटी ने बेटी गिणे, बराबरी की बैन।
मोटी ने माता गिणे, ए उतम का चैन॥

(१४) वचन वचन के आंतरो, वचन के हाथ न पांव।
एक वचन है ओपधी, एक वचन है घाव॥

(१५) चतुर पुरुष वह जानिये, सगली समझे
अेन। अेननमें समझे नहीं तासे करिये
सैन, सैनन में समझें नहीं तासे करिये
वैन। वैनन मे समझे नहीं तासे लेन न
दैन॥

(१६) ज्ञानी से ज्ञानी मिले, करे ज्ञान की बात
मूर्ख से मूर्ख मिले, क्या मुकी क्या थाप

(१७) सबसे चढ़ता प्रेम है, प्रेम उतरतां नेम
जहां घर प्रेम न नेम है, तहां घर कुश
न खेम॥

(१८) आता ही आदर करे. जातां दे जीकार।
मिलियां हंस कर बोलवो, ए उत्तम घर
आचार ॥

(१९) धर्म धर्म सब कोई कहे, मरम न जाणे कोय।
जात न जाणे जीव की, धर्म किसी विध
होय ॥

(२०) नां काहू से दोस्ती, नां काहू से वैर। संत
खड़े बाजार में, सब की चाहत खैर ॥

(२१) बोली बोल अमोल है, बोल सके तो बोल।
हीये तराजू तोल के, पीछे बाहिर खोल ॥

(२२) सरवर तरवर संत जन, चौथो बरसे मेह।
पर ऊपगार के कारणे, च्यारुं धारी देह ॥

(२३) संतोषी सदा सुखी, दुखी तृष्णावान।
भावे तो गीता पढ़ो, भावे पढ़ो पुरान ॥

(२४) क्रोधी से क्रोधी मिले, काठा कर्म बंधाय।
क्रोधी से क्षमा करे तो, वैर विघन टल जाय ॥

(२५) सब जीव जीवणो वंछे, मरणो वंछो न कोय।
जीवां ने हणतां थका, मुक्त न पहुंतो कोय ॥

(२६) धर्म धन ज्यां संचीया, जाकी होड़ न होय। क्या राजा क्या वादशाह, तुले न लागे कोय ॥

(२७) कनक तज्या कामन तज्या, तज्या सिहांसन राज । एकज पृकर्ति ना तजी, जिनसे भया अकाज ॥

(२८) अकल अमोलख गुण रत्न, अकलां बुझे राज । एक अकल की नकल से, सुधरे सगला काज ॥

(२९) दुष्ट न छोडे दुष्टता, सज्जन तजे न हेत । काजल तजे न श्यामता, मुक्ता तजे न श्वेत ॥

(३०) भली आपसुं नहीं वणे, बुरी किंया मत जाय। अमृत भोजन छोडने. जहर काहेकूं खाय ॥

(३१) भुरकी भगवंत नांमरी, होल कर्मां ने लागे । अंतस रो वैराग हुवे तो. ऊभो ही घर त्यागे ॥

(३२) रतन जडत री कोटड़ी, मांही पन्नालाल। सत गुरू ऐसा भेटिये, छिन मे कर दे निहाल ॥

(३३) बालपणे मे जोग्या बास, गंगा ऊपर किया निवास। वुढ़ापे भोगारी आस, तो कात्यो पींज्यो भयो कपास ॥

(३४) मिठा बोल्या गुण घणा, सुख ऊपजे कछु और। वशीकरण ए मंत्र है, तजो बोल कठोर ॥

(३५) गुणी जन को वन्दणा, ओगुण देख मध्यस्थ। दुखी देख करुणा करे, मित्र भाव समस्त ॥

(३६) साध सदाही वांदिये, पो ऊगंते सूर। ज्यां घर लच्छमी संपजे, दलिद्र जावे दूर ॥

(३७) कुल मरजादा छोडे माजना, पिवे चिलम ने होका। धम ध्यान री चटणी कर गया आला गिणे न सुका ॥

(३८) होके में हिंसा घणी, हे पाप रो मूल।

जे सुख चावो जीव को, तो होको करजो दूर ॥

(३९) रात गमाई सोय कर, दिवस गमायो खाय। हीरे जिसो मनुष्य जमारो, कोडी सटे जाय ॥

(४०) दया तो दिलमें घणी, मीठा जारा वैण। उंचा वाने जाणजो, नीचा राखे नैण ॥

(४१) दया तो दिल में नही, कड़वा ज्यांरा वैण। नीचा वाने जाणजो, ऊँचा राखै नैण ॥

(४२) अकल अमोलप गुण रत्न, अकल पूछे मुनिराज। एक अकल री नकल सुं, सब ही सुधरे काज ॥

(४३) कलियुग आयो कबीर जी. भली बातको चेरो। मन गमताई बोलणो, खुसामदी को पेरो ॥

(४४) नागण के मुख जहर है, स्त्री के सब अंग। तिण कारण इस नार का, कबहू न करीये संग ॥

(४५) अहि विष काटत चढे, या देखत ही चढ जाय। ज्ञान ध्यान पुण्य प्राणकूं, जडा मूल से खाय॥

(४६) आंब नमे अंबली नमे, नमेस डाडम दाख। इरंड विचारा क्या नमे, ऊसकी ओछी जात॥

(४७) क्षमा वडेन को होत है, ओछे को उत्पात। क्या कृष्ण का घट गया, भद्गु मारी लात॥

(४८) जैसी नजर हराम पै, वैसी हर पै होय। चला जाय वैकुंठ में, पला न पकडे कोय॥

(४९) पपे सूं परचो घणो, हवे रहो हजुर। लला लिव लागी रही, ददा दिल से दूर॥

(५०) पंडित वो जो ना आणे गर्व ज्ञानी वो जो जाणे सर्व। तपस्वी वो जो ना धरे क्रोध, कर्म आठ जोते वो जोध॥

(५१) ऊतम वो जो वोले न्याय, धर्म वो जो मन मे भाय॥ मेलो वो जो निन्दा करे, पापी वो जो हिंसा आचरे॥

पाय। सतगुरु दाता मोत्तका, मॉग दिया बताय॥

६६। सुतो सुपन जंजाल में, पाम्यो जाणे राज। जब जाग्यो तब एकलो, राज न सीझे काज॥

६७। तिम ए कुटंम्ब सहू मल्यु, खोटी माया जाल। आयू पहोंचे आपणे, खिण थाये विसराल॥

६८। आय पहोती आतमा, कोई नहीं राखण हार। इंद्र चंद्र जिनवर वली, गया सभी निरधार॥

६९। जिसुं कीजे तिसुं पाइये, करे तैसा फल जोय। सुख दु:ख आप कमाइये, दोप न दोजे कोय॥

७०। दोप दीजे निज कर्मने, जिण नहीं कीनो धर्म। धर्म विना सुख नहीं मीले, ए जिन शासन मर्म॥

७१। धन जोवन नर रुपनो, गर्व करे तूं

श्रीजिनेन्द्राय नमः

अथ श्रीतेतीस बोलका थोकड़ा.



सूत्र श्रीउत्तराध्ययन समवायांग तथा दशाश्रुतस्कंध वगेरहमे तेतीस बोलका थोकडा चले सो कहते है.

(विस्तार अन्य जगहका है)

पहले बोले—एक प्रकारका असंयम—सर्व आस्रवसे निवृत्त नहीं होना

दूसरे बोले—दो प्रकारका बन्धन—राग बन्धन और द्वेष बन्धन.

तीसरे बोले—१ तीन प्रकारका दण्ड—१ मनदण्ड, २ वचनदण्ड, ३ कायदण्ड.

२ तीन प्रकारकी गुप्ति—१ मनगुप्ति, २ वचनगुप्ति, ३ कायगुप्ति.

३ तीन प्रकारका शल्य—१ माया शल्य, २ नियाण (निदान) शल्य, ३ मिथ्या दर्शन शल्य.

४ तीन प्रकारका गर्व—१ ऋद्धिगर्व, २ रसगर्व, ३ सातागर्व

५ तीन प्रकारकी विराधना–१ ज्ञानकी विराधन
२ दर्शनकी विराधना, ३ चारित्रकी विराधन

चोथे बोले–चार कषाय–१ क्रोध कषाय, २ मान कषा
३ माया कषाय, ४ लोभ कषाय.

चार संज्ञा–१ आहार संज्ञा, २ भय संज्ञा, ३
थुन संज्ञा, ४ परिग्रह संज्ञा.

चार कथा–१ राज्यकथा, २ देशकथा, ३
कथा, ४ भातकथा (इन चा
सम्बन्धी कथा).

चार ध्यान–१ आर्तध्यान, २ रौद्रध्यान, ३ ध
ध्यान, ४ शुक्लध्यान तथा १ पदस
२ पिण्डस्थ, ३ रूपस्थ और ४
पातीत ध्यान.

पांचमें बोले–पांच क्रिया–१ कायिका, २ अधिकरणिका,
प्रद्वेपिका, ४ पारितापनिका, ५ प्राणातिपातिका.

पांच कामगुण–शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्श.

पाच महाव्रत–१सर्वथा प्राणातिपातसे निवृत्ति, २
र्वथा मृषावादसे निवृत्ति, ३ सर्वथा अदत्तादान
निवृत्ति, ४ सर्वथा मैथुनसे निवृत्ति, ५ सर्व
परिग्रहसे निवृत्ति (सर्वथा त्रिकरण त्रिजोगसे)

पांच समिति–१ इर्यासमिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति, ४ आदान भंडमत्त निक्षेपना समिति, ५ उच्चार प्रस्रवण खेल जल श्लेष्म परिस्थापनिका समिति (इन कामोंमें शुद्ध उपयोग).

पांच प्रमाद–१ मद, २ विषय, ३ कषाय, ४ निद्रा, ५ विकथा.

छठे बोले–छ काय–१ पृथ्वीकाय, २ अप्काय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पतिकाय, ६ त्रसकाय.

छ लेश्या–१ कृष्ण लेश्या, २ नील लेश्या, ३ कापोत लेश्या, ४ तेजो लेश्या, ५ पद्म लेश्या, ६ शुक्ल लेश्या.

सातमें बोले–सात भय–१ इहलोक भय–मनुष्यसे मनुष्यको भय
२ परलोक भय–मनुष्यको देवता या तिर्यंचसे भय
३ आदान भय–धन दोलतके नष्ट होनेका भय.
४ अकस्मात् भय–कहींसे अनगारी आपत्ति आ जावे-अचानक दुःख आ जावे ऐसा भय
५ आजीविका भय–भावप्यमें खानेपीनेको मीलेगा या नही सुखसे गुजर होनेमें बाधा न आ जावे ऐसा भय
६ अपयश भय–किसी तरह इज्जतमें हरकत पहुचे या यश कीर्ति जैसी है वैसी कैसे बनी रहेगी ऐसा भय.

७ मरण भय–मोतका डर–कब मरुंगा यह निश्चित नही होनेसे हर समय मरणकी शंका रखना.

आठमें बोले–आठ मद–१ जातिमद, २, कुलमद, ३ बलमद, ४ रूपमद, ५ तपमद, ६ लाभमद, ७ सूत्रमद, ८ ऐश्वर्यमद (अहंकार)

नवमें बोले–ब्रह्मचर्यकी नव गुप्ति–रक्षा–वाडें (१) ब्रह्मचारी पुरुष ऐसे स्थानमें न रहे जहां स्त्री, पशु, नपुंसक रहते है वा वारंवार आते जाते हो. और रहे तो चूहे और बिल्लीका दृष्टान्त—जिस जगह बिल्ली रहती हो उस जगह चूहे, चाहे जितनी सावधानीसे रहे, तोभी उनके मारे जानेका संभव है, तैसे ही ब्रह्मचारी पुरुष, स्त्री वगेरह सहित स्थान भोगवे तो उनके ब्रह्मचर्यके खण्डित होनेका संभव है. (२) ब्रह्मचारी पुरुष स्त्री सम्बन्धी काम राग बढानेवाली कथा वार्ता करे नही और करे तो निम्बु और रसना (जीभ) का दृष्टान्त जैसे निम्बुरसका जानकार जब निम्बुका नाम लेता है कि उसके मुहमें पानी छुटने लगता है–आ जाता है तैसे ही ब्रह्मचारी पुरुष स्त्री सम्बन्धी वार्ता करे तो शीलरत्नके भग होनेकी संभावना रहती है. (३) स्त्री जिस स्थानपर कुच्छ देर वैठी होवे उस स्थानपर ब्रह्मचारीको कुच्छ समयतक वैठना नहीं तथा स्त्रीके

साथ भी बैठना नही और बैठे तो कोरा और कणकका दृष्टान्त, जैसे कोरेका फल कणक (भिजा हुवा आटा) के पास रखाजावे तो वह कणक ज्याटे २ गीला होता जाता है और उसका रसकस घटता जाता है तैसे ही ब्रह्मचारी पुरुषका स्त्रीके आसनपर बैठनेसे ब्रह्मचर्य नष्ट हो जाता है. (४) ब्रह्मचारी पुरुष स्त्रीके अंगोपाग रूप लावण्य निरखे नही–वारवार नजर भरके देखे नही. देखे तो कची आख और सूर्यका दृष्टान्त, जैसा जन्मता बालक सूर्यको देखे तो अन्धा होजाता है या उसका दृष्टि विषय घट जाता है. तैसे ही ब्रह्मचारी पुरुष स्त्रीके अगउपांग निरखे तो ब्रह्मचर्यका नाश होनेका सभव है, (५) ब्रह्मचारी पुरुष, स्त्रीके रुदन, गीत, हास्य, आक्रद, कुजित इत्यादि शब्द सुनाई पडे वैसी भीत या टट्टीके आडमें वास करे नही (पासके मकानमेंसे भी इनका ध्वनि कानोंमें आताहो वहा न रहे) और रहे तो मेघ और मोरका दृष्टान्त, मेघके–बादलके गर्जनेपर मोर (मयूर) अवश्य बोलता है–कोकाट करता है तैसेही स्त्रीके हास्यादिके शब्द सुननेपर काम राग बढता और ब्रह्मचर्य खण्डित होनेका सभव रहता है. (६) ब्रह्मचारी पुरुष पूर्वकालके स्त्रीके साथ भोगेहुवे भोगोंको याद न करे और करे तो जिनरक्ख और रयणादेवी

दृष्टान्त, जैसे जिनरक्ख रयणादेवीके साथके काम-
भोग याद करके ललचा गया और प्राण खोये तैसे
ब्रह्मचारी पुरुष पूर्वके कामभोगका वारंवार स्मरण
करे तो शीलरत्न गुमा देता है (७) ब्रह्मचारी पुरुष
हमेशा सरस–स्वादिष्ट आहार करे नही और करे तो
सन्निपातके रोगीको दुध मिश्रीका दृष्टान्त· अर्थात्
जिसको सन्निपात–शीत हो गया है उसे दुध मिश्री
पीलाई जावे तो वह मर जाता है तैसेही हमेशां सरस
पुष्ट आहार करनेवाला ब्रह्मचारी अपना ब्रह्मचर्य
खो बैठता है. (८) ब्रह्मचारी पुरुष लुक्खा निरस
आहारभी दावरके करे नही, अधिक करेतो सेरकी
हांडीमें सवासेरका दृष्टान्त–अर्थात् जिस गारेकी
(कच्ची मिट्टीकी) हांडीमें सेर धान्य पकता है उसमें
सवासेर रांधाजावेतो हांडीका नुकशान होता है–फट
जाती है, तैसे ब्रह्मचारी अधिक भोजन करेतो ब्रह्मचर्य
गुमा देता है–नष्ट कर देता है (९) ब्रह्मचारी पुरुषको
स्नान शृंगार करना नही–शरीरका मण्डन विभूषा
करना नही और करेतो रांकके हाथमें रत्नका दृष्टान्त
जिस प्रकार रांक पुरुषमें रत्न रखनेकी योग्यता न
होनेसे उसे बाजारमें हाथोंमें उछालता चलता है
देखनेवालेका मन चल जाता है और रत्न खोसलीया
जाता है. वह मूर्ख उसे पेटीमें बन्द नही रखता है

तैसेही ब्रह्मचारी पुरुष न्हावे धोवे, शणगार करेतो उनमेंभी शील रत्नको रक्खनेकी अयोग्यता है स्त्री वगेरेका मन शील रत्नको लुटानेका होजाताहै और ब्रह्मचर्य नष्ट होजाता है

मैं बोले–दश प्रकारका यति धर्म–(१) खन्ति–अपराधी पर वैरभाव नहीं रखना, क्षमा धारना (२) मुत्ति–लोभ रहित बनना। (३) अज्जवे–सरलता–निष्कपटता। (४) मद्दवे–मार्दव, नम्रता, अहंकारका त्याग (५) लाघवे–भण्डोपगरणाकी उपाधि थोडी होना। (६) सच्चे–सच्चाईसे, प्रामाणिकतासे बोलना व आचरण करना। (७) सयमे–शरीर, मन और इन्द्रियोंको काबुमें रखना, वश करके नियममें रखना (८) तवे –आत्मशक्ति वढे, इच्छाशक्ति वढे, मनोवल दृढ होवे उस विधिसे उपवास वगेरा तप करना (९) चियाए –ममताका त्याग करना। (१०) वम्भचेरवासे– शुद्ध आचार पाले, मैथुनसे सपूर्ण निवृत्ति करे– पराङ्मुख रहे।

दश प्रकारकी समाचारी–(१) आवस्सिया–उपाश्रय (स्थानक) वाहर जानेका होवे तब वडे मुनिसे अर्ज करे कि मुझे वाहर जाना जरूरी है। (२) निसीहिया–उपाश्रयमें पीछा लौटते वख्त गुर्वादिसे कहे मैं

कामसे निवृत्त होकर आ गयाहूं (३) आपुच्छणा-खुदके काम होवेतो गुरुसे पुच्छे. (४) पडिपुच्छणा-अन्य मुनियोंके काम होवेतो गुरुसे वारवार पुच्छे. (५) छन्दणा-अपनी लाइ हुई वस्तु वडोंको थामे देनेको कहे (६) इच्छाकार-गुरुसे अर्ज करे कि अगर आपकी इच्छा होवे तो मुझे सूत्रार्थ-ज्ञानदान दीजिये (७) मिच्छाकार-पापकर्मको गुरुके सामने मिथ्या दुष्कृत कहे. (८) तहकार-गुरुके वचनको प्रमाण करे-स्वीकार करे अथवा आप जैसा कहते हो वैसाही है ऐसा कहे. (९) अब्भुट्ठाण-गुरु तथा वडे मुनिवर आवे तब सात आठ कदम-पग सामा जावे और पिछा लोटे तब उतना ही पहुचाने जावे.(१०) उवसपया-गुरुजनोंसे सूत्रार्थ लक्ष्मी पानेके वास्ते हमेशां सावधान रहे और गुरुके पासमें रहे.

इग्यारमे वोले-श्रावककी इग्यारा प्रतिमा-(१) दर्शन प्रतिमा-एक मासकी शुद्ध अतिचार रहित समकित धर्म पाले. (२) व्रत प्रतिमा-दोमासकी-नाना प्रकारके व्रतनियम अतिचार रहित पाले (३) सामायिक प्रतिमा-तीन मासकी अतिचार रहित हमेशां सामायिक करे. (४) पोषधप्रतिमा-चार मासकी-अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा वगेरेका पोषध, अतिचार रहित करे (५) कायोत्सर्ग

प्रतिमा-पांच मासकी-हमेशा रात्रिके अन्दर कायोत्सर्ग करे और पांच वातोंका पालन करे "१ स्नान न करे, २ रात्रि भोजन त्यागे, ३ धोतीकी लाग खुली रक्खे, ४ दिनको ब्रह्मचर्य पाले, ५ रात्रिको ब्रह्मचर्यका परिमाण करे" ६ ब्रह्मचर्य प्रतिमा-छ मासकी-निरतिचार पूर्ण ब्रह्मचर्य पाले (७) सचित्त प्रतिमा-जघन्य (कमतीसे कमती) एक दिनकी और उत्कृष्ट (ज्यादे से ज्यादा) सात मासकी-सचित्त वस्तु नही भोगे (८) आरंभ प्रतिमा-जघन्य एक दिनकी उत्कृष्ट आठ मासकी-आप खुद आरभ करे नही (९) प्रेष्य प्रतिमा-जघन्य एक दिनकी उत्कृष्ट नव मासकी-दूसरेसे भी आरभ करावे नही (१०) उद्दिष्टवय प्रतिमा-जघन्य एक दिनकी उत्कृष्ट दश मासकी-इनके वास्त आरंभ करके कोई वस्तु देवे तो लेवे नही. खुरमुण्डन करावे-शिखा रक्खे कोई उनसे कुच्छ बात एक वरत पुच्छे या वारवार पुच्छे, तव जानते होवे तवतो हा कहे और नहीं जानते होवे तो ना कहे (११) श्रमण भूत प्रतिमा-उत्कृष्ट इग्यारा मासकी खुरमुण्डन करे या लोच करे साधु जितना ही उपकरण पात्र रजोहरण रक्खे, स्वज्ञातिकी गौचरी करे और कहे कि मैं श्रावक हूं साधु माफक उपदेश देवे. सर्व प्रतिमामें साढे पाच वर्ष लगे.

में बोले–भिक्षुकी वारह प्रतिमा नीचे लिखी हुई तेरह कलमें हरएक प्रतिमाधारी पाले. (१) पहेली प्रतिमा एक मासकी–जिसमें–

(१) शरीरपर ममता रक्खे नही शरीरकी शुश्रुपा करे नही–देव मनुष्य तिर्यंच सम्बन्धी उपसर्ग सम परिणामसे सहन करे

(२) एक दाति आहार और एक दाति पाणी–प्रासुक तथा ऐपणिक लेवे (दाति=धार=एक साथ, धार खण्डित हुवे विना जितना पात्रेमें पडे इतनेको दाति कहते है)

(३) प्रतिमाधारी साधु गौचरीके वास्ते दिनके तीन विभाग करे और तीन भागमेंसे चाहे जिस एक विभागमें गौचरी करे

(४) प्रतिमाधारी साधु छ प्रकारसे गौचरी करे (१) पेटीके आकारे (२) अर्ध पेटीके आकारे (३) बैलके मूत्रके आकारे (४) पतग उडे उस तरहँ (५) शंखावर्तन (६) जावता करे तो आवतां नही करे और आवतां करे तो जावतां नही करे

(५) गामके लोगोंको माछुम पड जावे कि यह प्रतिमाधारी मुनि है तो वहा एक रातही रहे और ऐसा माछुम नही पडे तो दो रात्रि रहे उपरान्त जितनी रात रहे उतना प्रायश्चितका भागी बने

(६) प्रतिमाधारी साधु चार कारणसे बोलते है १ याचना करनेको, २ मार्ग पुच्छनेको, ३ आज्ञा पानेको, ४ प्रश्नके उत्तर देनेको

(७) प्रतिमाधारी साधु तीन स्थानमें निवास करे-१ बागबगीचा, २ श्मशान-छत्री, ३ वृक्षका तला इनकी याचना करे

(८) प्रतिमाधारी साधुको तीन प्रकारकी शय्या—१ पृथ्वी, २ शिला, ३ काष्ट.

(९) प्रतिमाधारी साधु जिस स्थानमें है वहा स्त्री प्रमुख आवे तो भयके मारे वाहर निकले नही कोई जबरन्‌ हाथ पकड कर काढे तो ईर्यासमिति सहित बाहर हो जावे तथा वहा आग लगे तोभी भयसे बाहर आवे नही कोई बाहर काढे तो ईर्यासमिति पूर्वक बाहर निकल जावे.

(९) प्रतिमाधारी साधुके पगमें कांटा लग जावे और आखमें कांटा (धुल तृण प्रमुख) पड जावे तो आप उसे अपने हाथोंसे काढे नही

(१०) प्रतिमाधारी साधु सूर्योदयसे सूर्यके अस्त होने तक विहार करे बादमें एक पग भी चले नही.

(११) प्रतिमाधारी साधुको सचित्त पृथ्वीपर बैठना सोना कल्पे नही तथा सचित्त रज लगे हुवे पेरोसे (पगसे) गृहस्थके यहा गौचरी जाना कल्पे नही

(१२) प्रतिमाधारी साधु प्रासुक जलसे भी हाथ पग मुह प्रमुख धोवे नही. अशुचीका लेप दूर करनेको धोना कलपता है

(१३) प्रतिमाधारी साधुके मार्गमें हाथी घोडा अथवा जंगली जानवर सामने आये होवे तो भी मुनि भयसे रास्ता छोडे नही–जानवरकी दया खातर अलग हो जाते है तथा रास्ते चलते तडकेसे छायामें और छांयासे तडकेमें आवे नही शीत उष्णताको सम परिणामसे सहन करे.

(२) दूसरी प्रतिमा एक मासकी जिसमें दो दाति अन्न और दो दाति पानीका लेना कल्पता है.

(३) तीसरी प्रतिमा एक मासकी जिसमें तीन दाति अन्न और तीन दाति पानी लेना कल्पे इस तरह चौथी, पांचमी, छट्ठी, सातमी प्रतिमा भी एक२ मासकी उनमें चार दाति–पांच दाति–छ दाति–सात दाति आहार पानी लेना कल्पे.

(८) आठमी प्रतिमा सात दिनकी–चौविहार एकान्तर तप करे–ग्रामके बाहर रहे–तीन आसन करे–चित्ता सुवे, करवट (एक बाजुपर) सुवे, पलांठी (पालखी) लगाकर सुवे परिसहसे डरे नही

(९) नवमी प्रतिमा सात दिनकी उपर प्रमाणे.

इतना विशेष कि तीन आसनमेंका एक आसन करे-दण्ड आसन, लकुट आसन, उत्कट आसन

(१०) दशमी प्रतिमा सात दिनकी उपर प्रमाणे. इतना विशेष कि तीनमेंसे एक आसन करे-गोदुह आसन, वीरासन, अम्बकुब्ज आसन

(११) इग्यारमी प्रतिमा एक दिनकी-चौविहार बेला करे, गाम बाहर पग संकोच कर-हाथ पसार कर कायोत्सर्ग करे

(१२) बारमी प्रतिमा एक दिनकी-चौविहार तेला करे, गाम बाहर शरीर त्यागके-नेत्र खुले रखख कर-पग सकोच. हाथ पसार-अमूक वस्तुपर दृष्टि लगा कर ध्यान करे-देव मनुष्य तिर्यंच सम्बन्धी उपसर्ग सहे. इस प्रतिमाके आराधनसे अवधि-मनःपर्यय-केवलज्ञान इन तीनमेंका एक ज्ञान होता है और आसनसे चलजावे तो पागल बन जावे, दीर्घ कालका रोग पावे-केवली प्ररूपित धर्मसे भ्रष्ट बने.

इन कुल बारह प्रतिमाओंका काल आठ मासका है.

में बोले-तेरह क्रिया स्थान (१) अर्थ दण्ड-खुदके लिये हिंसादि करे (२) अनर्थ दण्ड-निरर्थक वा कुत्सित

अर्थके वास्ते हिंसादि करे (३) हिंसा दण्ड—उसने मुझे माराथा—मारताहै वा मारेगा इस भावसे उसे मारना, (४) अकस्मात् दण्ड—मारना किसे था और बिचमें मर-जावे दूसरा (५) दृष्टि विपर्यास दृष्टि—दुश्मन जानकर मित्रको मारडालना (६) मृषावाद दण्ड—असत्य भाषण करना (७) अदत्तादान दण्ड चोरी करना (८) अ-ध्यत्थ दण्ड—मनमें दुष्ट कल्पना करना (९) मानदण्ड—गर्व करना (१०) मित्र दण्ड—मातापिता मित्र वर्गको अल्प अपराध परभी भारी दण्ड देना (११) माया दण्ड—कपट करना (१२) लोभ दण्ड—लोभ करना (१३) इर्यापथिक दण्ड—रास्ते चालतां जीव हिंसा होवे.

चौदवें बोले—जीवके चौवदा भेद (१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अप-र्याप्त (२) सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त (३) बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त (४) बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त (५) बेइन्द्रिय अपर्याप्त (६) बेइन्द्रिय पर्याप्त (७) त्रिइन्द्रिय अपर्याप्त (८) त्रिइन्द्रिय पर्याप्त (९) चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त (१०) चतुरिन्द्रिय पर्याप्त (११) असञ्ज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त (१२) असञ्ज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त (१३) सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त (१४) सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त

पन्दरमें बोले—पन्दरा परमाधर्मीदेव (१) आम्र (२) आम्ररस (३) शाम (४) सबल (५) रुद्र (६) वैरुद्र (७) काल

(८) महाकाल (९) असिपत्र (१०) धनुष (११) कुंभ (१२) वालुक (१३) वैतरणी (१४) खरस्वर (१५) महाघोष

सोलहमें बोले–सूत्रकृतांगके मथम श्रुत स्कन्धके सोलह अध्ययन–नाम (१) स्वसमय परसमय (२) वैदादिक (३) उपसर्ग प्रज्ञा (४) स्त्री प्रज्ञा (५) नरक विभक्ति (६) वीर स्तुति (७) कुशील परिभाषा (८) वीर्याध्ययन (९) धर्मध्यान (१०) समाधि (११) मोक्षमार्ग (१२) समवसरण (१३) अथातथ्य (१४) ग्रंथी (१५) यमतिथि (१६) गाथा.

सत्तरहमें बोले–सत्तरह मकारका सयम (१) पृथ्वीकाय संयम (२) अप्काय सयम (३) तेजस्काय संयम (४) वायु काय सयम (५) वनस्पतिकाय संयम (६) बेइन्द्रिय सयम (७) तेइन्द्रिय सयम (८) चउरिन्द्रिय सयम (९) पचेन्द्रिय संयम (१०) अजीवकाय संयम (११) प्रेक्षा सयम (१२) उत्प्रेक्षा सयम (१३) अपहृत्य (पठाना) सयम (१४) प्रमार्जना संयम (१५) मनःसंयम (१६) वचन संयम (१७) शरीर सयम.

अठारहमें बोले–अठारह मकारका ब्रह्मचर्य (१)मनकरके–वचन करके–काया करके औदारिक शरीर सम्बन्धी भोग सेवे नही, सेवावे नही और जो सेवन करते है उन्हे

अनुमोदे (प्रशंसे) नही (३×३=९ हुवे) तैसेही नव
भेद वैक्रिय शरीर सम्बन्धी त्रिकरण त्रिजोगके है

उन्नीसमें बोले-उन्नीस (१९) ज्ञाता सूत्रके अध्ययन है (१)
उत्क्षिप्त मेघकुमारका (२) धन्नासार्थवाह और विजय
चोरका (३) मोरके अण्डोंका (४) काचवा (कूर्म)क
(५) शैलक राजर्षिका (६) तुंबडेका (७) धन्नासार्थ
वाह और चार वहूओका (८) मल्लीभगवतीका (९
जिनपाल और जिनरक्षितका (१०) चन्द्रकी कला
(११) दावानलका (१२) जिनशत्रु राजा और सुबुद्धि
प्रधानका (१३) नन्दमणिकारका (१४) तेतली पु
प्रधान और सुनारकी पुत्री पोटिल्लाका (१५) नंद
फलका (१६) अमरकाका (१७) समुद्र अश्वका (१८
सुसीमादारिकाका (१९) पुंडरीक कुंडरीकका

बीसमे बोले-बीस, असमाधिके स्थानक (१) उतावलमे चा
(२) पुंज्या विना चाले (३) अयोग्य रीतिसे पुंजे (४
पाट पाटला ज्यादा रक्खे (५) बडोंके- गुरुजनोंके सा
बोले (६) वृद्ध-स्थविर-गुरुका उपघात करे (
प्रायः करे) (७) साता-रस-विभूपानिमित्त एकेन्द्रि
जीव हणे (८) पलपलमे क्रोध करे (९) हमेशा क्रोध
जलता रहे (१०) दूसरेके अवगुण खोले-चुगली
निंदा करे (११) निश्चयकारी भाषा बोले (१२) न

क्लेश खड़ा करे (१३) उपशमे (मीटे) हुवे क्लेशको पीछा चेताने (१४) अकाले स्वाध्याय करे (१५) सचित्त पृथ्वीसे भरे हुवे हाथोंसे गोचरी करे (१६) एक पहर रात्रि वीतने परभी जोररसे बोले (१७) गच्छमें भेद पाडे (१८) क्लेश फैलाकर गच्छमे परस्पर दुःख उपजावे (१९) दिन उगनेसे अस्त होने तक हरदम आहार लिया ही करे (२०) अनेपणिक अप्रासुक आहार लेवे

इक्कीसमें बोले—इक्कीस प्रकारके सबल (भारी) दोप (१) हस्तकर्म करे (२) मैथुन सेवे (३) रात्रिभोजन करे (४) आधाकर्मी भोगवे (५) राजपिण्ड भोगवे (६) पाच बोल सेवे—खरीद कियाहुवा, उधार लियाहुवा जबरन् खोसा (लिया) हुवा, खास मालिककी रजा बिना लियाहुवा, स्थानपर सामा लायाहुवा, आहार वगैरह देवे और साधु उसे लेवे (साधुको देनेवास्तेही खरीदा होवे, स्वाभाविक तो सब खरीदाजाता है) (७) वारवार त्याग करे और भांगे (८) एक मासमें तीन वख्त कचा जलका स्पर्श करे—नदी उतरे (९) छःह महीनामें गण—सप्रदाय पलटे—पलटना नहीं चाहिये (१०) एक मासमें तीन वख्त माया—कपट करे (११) जिसके मकानमें रहेहो उसीके यहासे आहार करे—शय्यातर पिण्ड भोगवे (१२) इरादा पूर्वक हिंसा करे

(१३) इरादा पूर्वक झूठ बोले (१४) इरादा पूर्वक चोरी करे (१५) इरादा पूर्वक सचित्त पृथ्वीपर शयन आसन करे (१६) इरादा पूर्वक सचित्त मिश्र पृथ्वी पर शय्पा वगैरह करे (१७) सचित्त शिला तथा जिसमें छोटेर जन्तु रहे वैसे काष्ठ प्रमुख वस्तुपर अपना शयन आसन लगावे (१८) इरादा पूर्वक दश जातकी सचित्त वस्तु खावे-मूल, कद, स्कंध, त्वचा, शाखा, प्रवाला, पत्र, पुष्प, फल, बीज (१९) एक सालमें दश वखत सचित्त जलका स्पर्श करे-नदी उतरे (२०) एक सालमें दश माया-कपट सेवे (२१) सचित्त जलसे भिगे हुवे हाथसे आहारादि गृहस्थ देवे उसे इरादा पूर्वक लेकर भोगवे

बावीसमें बोले—बावीस प्रकारके परीषह (१) क्षुधा (२) तृषा (३) शीत (४) उष्ण (५) डांस, मच्छर (६) अचेल (वस्त्र रहित) (७) अरति (८) स्त्री (९) चलनेका (१०) स्थिर आसन लगाकर एक जगह बैठे रहनेका (११) शय्या-उपाश्रयका (१२) आक्रोश (१३) वध-प्राणनाश (१४) याचना (१५) अलाभ-मांगी हुई वस्तुका नही मिलना (१६) रोग (१७) तृणस्पर्श (१८) जलमैल-पसीना तथा मेल (१९) सत्कार पुरस्कार (२०) प्रज्ञा (२१) अज्ञान (२२) अदर्शन-श्रद्धा रहित बननेका.

तेवीसमें बोले-सूत्रकृतांगके २३ अध्ययन-प्रथम श्रुतस्कंधके १६ अध्ययन सोलहमें बोलवत्, दूसरे श्रुतस्कधके सात अध्ययन (१) पुण्डरीक कमल (२) क्रियास्थान (३) आहार प्रतिज्ञा (४) प्रत्याख्यान प्रज्ञा (५) अनगारश्रुत (६) आर्द्रकुमार (७) उदक (पेढाल पुत्र).

चौवीसमें बोले-चौवीस प्रकारके देवता, (१०) भवनपति, (८) व्यन्तर, (५) ज्योतिषी, (१) वैमानिक, कुल २४ हुवे.

पचीसमें बोले-पच महाव्रतकी पचीस भावना पहले महाव्रतकी पांच (१) इर्यासमितिभावना (२) मनःसमितिभावना (३) वचनसमितिभावना (४) ऐषणासमितिभावना (५) आदानभण्ड मात्र निक्षेपनासमितिभावना दूसरे महाव्रतकी पाचभावना (१) विना विचार किये बोलना नहीं (२) क्रोधसे बोलना नही (३) लोभसे बोलना नही (४) भयसे बोलना नही (५) हास्यसे बोलना नही. तीसरे महाव्रतकी पाच भावना (१) निर्दोष स्थानक मांगके लेना (२) तृण वगैरह मागके लेना (३) स्थानक वगैरह सुधारना नहीं (४) स्वधर्मीका अदत्त लेना नहीं और आहारका सविभाग करना (५) तपस्वी ग्लान आदिको वैयावच्च करना. चौथे महाव्रतकी पांच भावना (१) स्त्री, पशु, नपुसक सहित स्थानकमें ठहरना नहीं (२) स्त्रीके साथ वा स्त्री सम्बन्धी कथा

वार्तो करना नहीं (३) स्त्रीके अंगउपांग रागदृष्टिसे देखना नहीं (४) पहलेके कामभोग याद करना नहीं (५) सरस तथा वलवान आहार करना नही पांचमें महाव्रतकी पांच भावना-(१) भले शब्दपर राग, बुंरे शब्दपर द्वेष करना नहीं, तैसेही (२) रूपपर (३)गन्ध पर (४) रसपर और (५)स्पर्शपर रागद्वेष नही करना.

छवीसमें बोले-छवीस अध्ययन-दश दशाश्रुतस्कंधके, छ वृहत्कल्पके और दश व्यवहारसूत्रके (इनमें साधुका विधिवाद है)

सत्तावीसमें बोले-सतावीस साधुके गुण-पांच महाव्रत, पांच इन्द्रियका निग्रह करना चार कषायका विजय करना (५+५+४=१४) (१५) भावसत्य (१६) करण-सत्य (१७) जोग सत्य (१८) क्षमा (१९) वैराग्य (२०) मनः समाधारणता (२१) वचन समाधारणता (२२) काय समाधारणता (२३) ज्ञान (२४) दर्शन (२५) चारित्र (२६) वेदना सहिष्णुता (२७) मरण सहिष्णुता

अठावीसमें बोले-अठावीस आचार कल्प (१) एक मासका प्रायश्चित (२) दुसरा एक मास और पांच दिनका (३) तीसरा एक मास और दश दिनका. इस तरह पांच२ दिन वढाते हुवे पांच महीने तक कहना इस

प्रकार पचीस उपघातिक है (२६) अनुघातिक आ-रोपण (२७) कृत्स्न-सपूर्ण (२८) अकृत्स्न-अपूर्ण.

गुनतीसमें बोले-२९ पाप सूत्र. (१) भूमिकम्पशास्त्र (२) उत्पातशास्त्र (३) स्वप्नशास्त्र (४) अतरीक्ष-आकाशशास्त्र (५) अगस्फुरणशास्त्र (६) स्वरशास्त्र (७) व्यंजन-तल-मसादि चिह्नशास्त्र (८) लक्षणशास्त्र. ये आठ सूत्र रूप, आठ वृत्तिरूप, आठ वार्तिकरूप, कुल चोवीस हुवे. (२५) विकथा अनुयोग (२६) विद्या अनुयोग (२७) मत्र अनुयोग (२८) योग अनुयोग (२९) अन्य तीर्थिक प्रवृत्त अनुयोग

तीसमें बोले-महामोहनीय कर्मबन्धनेके तीस स्थानक (१) त्रस जीवको जलमें डुबाकर मारेतो (२) त्रसजीवको श्वास रुधके मारेतो (३) त्रसजीवोंको वाडेमें वद करके मारेतो (४) तलवारादिसे (शस्त्रसे) मस्तकादि अगोपाग काटेतो (५) मस्तकऊपर गीला चमडा बान्ध कर मारेतो (६) ठग होकर गलेमें फासा डालकर मारे-विश्वासघात करे (७) कपट करके अपना अना-चार-दुष्ट आचार छिपावे-सूत्रार्थ छिपावेतो (८) आप कुकर्म करे और दूसरे निरपराधी मनुष्यपर आरोप लगावे तथा दूसरेकी यशकीर्ति घटानेको झूठा कलक लगावेतो (९) लोकोंमें प्रत्यक्ष दिखने

वास्ते-क्लेश बढानेके वास्ते सभाके बीचमें मिश्र भाषा बोलेतो (१०)राजाका भंडारी-राजाकी लक्ष्मी हरण करना चाहे-राजा राणीसे कुशील सेवन करना चाहे-राजाके प्रेमीजनोंके मनको पलटना चाहे तथा राजाको राज्याधिकारसे बाहर करना चाहेतो (११) विषयलम्पटी बनकर-परणाहुवा होकर भी कुवारा होनेका कहेतो (१२) ब्रह्मचारी नही होते हुवेभी ब्रह्मचारी कहलावेतो (१३) नौकर मालीककी लक्ष्मी लूटे तथा लुटावेतो (१४) जिस पुरुषने अपनेको धनवान् इज्जतवान् अधिकारी बनाया-उस उपकारीकी ईर्ष्या परिणामसे बुराई करे-हलका बनानेकी चेष्टा करे-उपकारका बदला अपकारसे देवेतो (१५) भरणपोषण करनेवाले राजादिको तथा ज्ञानदाता गुरुको हणेतो (१६) १ राजा २ नगरशेठ तथा ३ मुखीया-बहुल यशवाले इन तीन जनोंको हणेतो (१७) बहुतसे मनुष्योंका आधारभूत जो मनुष्य है उसे हणेतो (१८) संयम लेनेको तैयार हुवा है उसका दिल हटावेतो तथा सयम लिये हुएको धर्मसे भ्रष्ट करेतो (१९) तीर्थंकरके अवर्णवाद बोलेतो (२०) तीर्थंकर प्ररूपित न्याय मार्गका द्वेषी बनकर-(उसमार्गकी) निन्दा करे तथा उस मार्गसे मन दूर हटावे (२१) आचार्य उपाध्याय-

सूत्र विनयके शिखानेवाले पुरुषोंकी निन्दा करे—उप-
हास करेतो (२२) आचार्य उपाध्यायके मनको आ-
राधे नही तथा अहंकारभावसे भक्ति नही करेतो (२३)
अल्प शास्त्रज्ञानका जाणकार होते हुवेभी खुदकी तारीफ
करे तथा स्वाध्यायका वाद करेतो (२४) तपस्वी
नही होते हुवेभी तपस्वी कहलावेतो (२५) शक्ति
होते हुवेभी गुर्वादि तथा स्थविर—ग्लान मुनिका विनय
वैयावच्च करे नही और कहेकि उन्होंने मेरी वैयावच्च
नही की थी ऐसा अनुकम्पा रहित होवेतो (२६) चार
तीर्थमें भेद पडे एसी कथा—क्लेशकारी वार्ता करेतो
(२७) अपनी तारीफके वास्ते तथा दूसरेके साथ
मित्रता करनेका—अधर्मयोगवशीकरणादि प्रयोग करेतो
(२८) मनुष्य तथा देव सम्बन्धी भोग अतृप्तपनेसे—
अत्यन्त आशक्त परिणामसे सेवेतो (२९) महाऋद्धि-
वान्—महायशकेधणी देवता है उनके बलवीर्यका
अवगुण-अपवाद बोलेतो (३०) अज्ञानीजीव लोगोंसे
पूजाका गरजी—चारजातिके देवताको नही देखता है
तोभी कहेकि में उन्हें देखता हूँ.

इकतीसमें बोले—इकतीस गुण सिद्ध महाराजके—आठ कर्मकी
इकतीस प्रकृति नष्ट होनेसे ये गुण प्रगट होते है
वास्ते उन इकतीस प्रकृतिको बताते है. ज्ञानावरणीय

कर्मकी पाच-(१) मतिज्ञानावरणीय (२) श्रुतज्ञानावरणीय (३) अवधिज्ञानावरणीय (४) मनःपर्ययज्ञानावरणीय (५) केवलज्ञानावरणीय. दर्शनावरणीय कर्मकी नव-(१) निद्रा (२) प्रचला (३) निद्रानिद्रा (४) प्रचलाप्रचला (५) थीणद्धि-स्त्यानगृद्धि (६) चक्षुदर्शनावरणीय (७) अचक्षुदर्शनावरणीय (८) अवधिदर्शनावरणीय (९) केवलदर्शनावरणीय. वेदनीय कर्मकी दो प्रकृति-(१) सातावेदनीय (२) असातावेदनीय. मोहनीय कर्मकी दो प्रकृति-(१) दर्शनमोहनीय (२) चारित्रमोहनीय. आयुःकर्मकी चार प्रकृति-(१) नरक आयुष् (२) तिर्यग् आयुष् (३) मनुष्य आयुष् (४) देव आयुष्. नामकर्मकी दो प्रकृति-(१) शुभ नाम (२) अशुभ नाम. गोत्रकर्मकी दो प्रकृति (१) उच्च गोत्र (२) नीच गोत्र अन्तराय कर्मकी पाच प्रकृति-(१) दानान्तराय (२) लाभान्तन्तराय (३) भोगान्तराय (४) उपभोगान्तराय (५) वीर्यान्तराय.

…ीसमें बोले-बत्तीस प्रकारका योग संग्रह-(१) लगेहुवे पापोंका प्रायश्चित्त लेनेका संग्रह करना (२) दुसरेके लियेहुवे प्रायश्चित्तको और किसीको नही कहनेका संग्रह करना (३) विपत्ति आनेपर भी धर्ममें द्रढ रह-

नेका सग्रह करना (४) निरपेक्ष तप करनेका सग्रह करना (५) सूत्रार्थ ग्रहण करनेका सग्रह करना (६) शुश्रुषा टालनेका सग्रह करना (७) अज्ञात कुलकी गोचरी करनेका सग्रह करना (८) निर्लोभी होनेका सग्रह करना (९) बावीस परीषह सहनेका सग्रह करना (१०) साफ दिल-सरल रहनेका सग्रह करना सत्य, सयम रखनेका सग्रह करना (१२) सम्यक्त्व निर्मल रखनेका सग्रह करना (१३) समाधि सहित रहनेका सग्रह करना (१४) पच आचार पालनेका सग्रह करना (१५) विनय करनेका सग्रह करना (१६) धैर्य रखनेका सग्रह करना (१७) वैराग्य रखनेका सग्रह करना (१८) शरीरको स्थिर रखनेका सग्रह करना (१९) विधिपूर्वक अच्छे अनुष्ठानका संग्रह करना (२०) आस्रव रोकनेका सग्रह करना (२१) आत्माके दोष टालनेका सग्रह करना (२२) सब विषयोंसे विमुख रहनेका सग्रह करना (२३) प्रत्याख्यान (पच्चक्खाण) करनेका सग्रह करना (२४) द्रव्यसे उपाधि, भावसे गर्वादिके त्यागका सग्रह करना (२५) अप्रमादी बननेका सग्रह करना (२६) काले २ क्रिया करनेका सग्रह करना (२७) धर्म ध्यानका सग्रह करना (२८) सवर योगका

करना (२९) मरण, आतंक रोग उपजने पर मनको क्षुभित नही बनानेका संग्रह करना (३०) स्वजनादिको त्यागनेका संग्रह करना (३१) लिये हुवे प्रायश्चितको करनेका संग्रह करना (३२)आराधिक पण्डित मरण होवे वैसी आराधना करनेका संग्रह करना यानि अप्रशस्त जोगोंका निरुधन करना

तेतीसमें बोले–तेतीस प्रकारकी आसातना. (१) गुरु या वडोंके सामने शिष्य अविनयसे चालेतो (२) गुरु आदिके बराबर चालेतो (३) गुर्वादिके पीछेभी अविनयसे चालेतो (४–५–६) गुर्वादिके आगे, पीछे या बरावर अविनयसे उभा रहेतो (७–८–९) गुर्वादिके आगे पीछे या बरावर अविनयसे बैठेतो (१०) शिष्य बडे लोगोंके साथ बाहर–जगल फिरागत जावे और वहासे पहले शौचकर्मसे निवृत्त होकर आगे चला आवेतो (११) शिष्य गुरुके साथ बाहर गया हो और पीछा लोटनेपर इर्यापथिक पहले प्रतिक्रमेतो (१२) कोई पुरुष उपाश्रयमें आवे तब पहले बडे गुरु आदिको बोलना उचित है तथापि पहले शिष्य बोले और गुरु पीछे बोलेतो (१३) रात्रिके समय जब गुरु कहे–अहो आर्य! कौन निन्द्में है औरकौन जागते है? तब आप जागता होते हुवे भी उत्तर देवे नही तो

(१४) जो आहारादि लाया है उस बाबत पहले अन्य मुनिसे कहे और बादमें गुरुसे कहेतो (१५) आहारादि पहले अन्य मुनिको बतावे और बादमें गुरुको बतावेतो (१६) आहारादि पहले अन्य मुनिको आमन्त्रे-थामे और पीछे गुरुको थामेतो (१७) आहारादि गुरुजनोंको पूछे विनाही अन्य मुनियोंको जिनपर कि उसका प्रेमहै-थोडा२ देदेवेतो (१८) बडोंके साथ भोजन करते समय सरस-मनोज्ञ आहार झट२ करेतो (१९) गुर्वादिके पुकारने पर भी मौन रहेतो (२०) गुर्वादिके बुलानेपर अपने आसनपर बैठा२ कहे-मैं यहा हू परन्तु आसन छोड उनके पास जावे नही इस डरसे कि कहीं कुछ काम बतावेंगे (२१) गुरुके बुलाने पर जोरसे तथा अविनयसे कहे कि क्या कहते हो ? (२२) गुर्वादि कहे हे शिष्य ! यह काम (वैयावच्चादि) तेरे लाभकारी है इसे कर, तब पीछा कहे अगर लाभकारी है तो आपही क्यों नही करलेते हो (२३) शिष्य, बडोंके साथ कठोर-कर्कश भाषा वापरे (२४) शिष्य, गुरुजनके साथ वैसेही शब्द वापरे (काममें लावे) जैसे गुरुजन शिष्यके साथ काम लाते है (२५) गुरुजन व्याख्यान-धर्मोपदेश देते हो तव सभाके विचमें कहे कि आप जो कहते हो वैसा

बयान कहां है ? (२६) गुरुजनके व्याख्यानमें कहे कि आपतो भूलते हो. यह कहना सत्य नहीं है (२७) गुरुजनके व्याख्यानसे राजी न रहते नाराजी दिखावे (इस विचारसे कि इमसे ज्यादे अच्छातो मैं जानता हू) (२८) गुरुजन व्याख्यान देतेहों तब सभामें भेद डालनेको-विसर्जन करने जैसा शब्द बोले-महाराज गौचरीका या अमुक कामका समय हो गया है (२९) गुरुजन व्याख्यान देते है तब श्रोताजनके मनको व्याख्यानसे नाराज करनेकी चेष्टा करे (३०) गुरुजनका व्याख्यान पुरा बन्द नही हुवा हो-समास पुरा हुवा न हो उससे पहलेही आप व्याख्यान शुरु कर देवे तो (३१) गुर्वादिकी शय्या-आसन वगैरहको पगसे ठोकरावे तो (३२) बडोंकी शय्यापर आप उभा रहे, वैठे, सुवे तो (३३) गुरुके शयन-आसनसे अपना शयन उचा करे वा बराबर भी करे और उसपर सुवे वैठे तो आसातना लागे.

इति शुभम्.



॥ श्रीवीतरागायनम ॥

संक्षिप्त धर्मपरीक्षा.

सुशिष्य विनयपूर्वक गुरुमहाराजसे प्रश्न करता है और गुरुमहाराज योग्य उत्तर देते है.

शिष्य–हे भगवन् ! ससारमें जितने जीव हैं सबको धर्म शब्द अति प्रिय क्यों लगता है ?

गुरु–हे शिष्य ! इसमें आश्चर्य करनेका कोई कारण नही है तुझे आश्चर्य क्यों होता है ?

शिष्य–हे महाभाग ! मुझे आश्चर्य इस बातपर होता है कि सब जीव धर्मके यथार्थ स्वरूपको जानते नहीं, तोभी उन्हें अवश्य धर्म शब्द बहुतही प्रिय प्रतीत होता है

गुरु–हे चिरजीव ! धर्म जीवका निज स्वरूप है–धर्मही जीवका स्वभंडार है इस वास्ते धर्म शब्द सबका प्रिय बनताहै. दृष्टान्त समझिये कि जब नाग (सर्प) का मन्त्र बोला जाता है तब वह उसको सुनकर बहुत राजी होता है और इतना प्रसन्न चित्त होजाता है कि उसका छोडा (वमन किया) हुआ विप–जहर पीछा चूस लेता है और इसका कारण यह है कि उस नाग मन्त्रमें उसके कुलका वर्णन किया जाता है और वह नाग निजके कुल–वशका वर्णन सुनकर आनंदमें लीन बन जाता है,

इसी प्रकार धर्मभी-जीव मात्रका निज स्वभाव होनेसे जीव जबर धर्म शब्द सुनता है उसको वडा प्रिय लगताहै.

शिष्य-हे स्वामिन् ससारमें प्राय सब लोग ऐसा कहते है कि धर्म देहसे-शरीरसे निपजता है (पैदा होता है-वनसक्ता है) और आपने धर्मको जीवका स्वरूप निरूपण किया है-वताया है इस लिये इस विषयमें विशेष प्रकाश डालनेको अधिक विवेचन करनेको कृपा करे

गुरु-हे आयुष्मन ! चेतना जीवका लक्षण है. बस वही उसका धर्म है. चेतनामें अनंत गुण समाये है-रहते है उनमें तीन गुण मुख्य हे (१) सम्यग्ज्ञान (२)सम्यग्दर्शन (३) सम्यक्चारित्र और यह चेतना धर्म सदा जीवके पास रहता है निगोद (महा कनिष्ट) अवस्थामें भी चेतनाधर्म जीवसे निराला नही हुवा. वहां परभी चेतना हमेशा बनी रही इतना जरुर हुवाकि यह चेतनाधर्म कायम होते हुवेभी जीव इसे जान-पहिचान सका नही-भूल रहा. जैसोक-किसी वालककी वाल्यावस्थामे उसके मातापिताने वालकके गलेमें चिन्तामणिरत्न (चिन्ताको चूरनेवाला-सब मनोरथको पूरनेवाला रत्न) वान्ध दिया और वालकमें समझ आनेके पहीलेही वे मातापिता मरगये.लडका वडा तो हुवा परन्तु अशुभ कर्म प्रगट होनेसे वह निर्धनदारिद्री हो गया और उस जवान (वालक)को यह खबर

नहीं कि दरिद्रताका नाश करनेवाला चिन्तामणि उसीके पास है-उसीके गलेमें है. बादमें किसी सज्जन मनुष्यने उसको कहा कि हे भाई! तेरे पास चिन्तामणि है. दरिद्री क्यो बन रहा है? उस मणिको काममे लाव, तेरा सब दारिद्र्य क्षण मानमे नष्ट हो जावेगा परन्तु उस युवकको इस बात पर विश्वास नहीं आया-उस सज्जन पुरुषका कहना नहीं माना, कारण कि उसके पूर्व अशुभ कर्मोंका जोर था. अर्थात् अन्तराय कर्मका उदय बहुत बलवान था, उसे दुःख उठाना (सहना) बाकीथा, उससे बारबार चेताने परभी उस युवा (लडके) को श्रद्धा न आई और दरिद्री बना रहा, इसी प्रकार जिस जीवको बहुत ससारका उदय है-ससारमें परिभ्रमण करना बाकी है उसको सद्गुरु द्वारा अनेक वख्त समझाया जाने परभी, चेतनाधर्म पासही होते हुवेभी, विश्वास नही होता चेतनाधर्म जानता नहीं-मानता नहीं अर्थात् निज धर्मको भूल रहा है औरभी इसी बातको समझानेके वास्ते दूसरा दृष्टान्त दीया जाता है. जैसे-किसी मनुष्यके घरके भोयरेमें धन गडा हुवा है परन्तु घरके (वर्तमान) मालिकको इस बातका ज्ञान नहीं. किसी जानकार मनुष्यने उपकार बुद्धिसे, उस मालिकको कहाकि हे भाई! तेरे घरमें बहुत दौलत गडी हुई-जमाकी हुई है. इस मनुष्यके अन्तराय कर्म कमजोर था. दरिद्रावस्था मिटने वालीथी, इससे उस जानकार

सज्जनके वचनपर घैरके मालिकको विश्वास आगया और प्रयत्न द्वारा उस वेनाल—वेनाम द्रव्यको पाकर सुखी हुआ इसी तरह सर्वज्ञ भाषित चेतनाधर्म इस जीवके पासही है. सद्गुरुका सयोग मीलने पर—सद्गुरुके मुहसे यह वात सुनकर उस भव्य—लघुकर्मी जीवको विश्वास आ जाता है और प्रयत्न द्वारा निज चेतना धर्म प्राप्त करके परम सुखी हो जाता है.

शिष्य—हे भगवन्! जीवकी निज वस्तु उसके पासही है तोफिर कौनसी वस्तु प्राप्त करना बाकी रहा? अथवा उसे यह जीव कैसे भूल गया है वा खो वैठा है?

गुरु—हे भव्य! यह जीव अनादि कालसे रागद्वेष वश हो कर अपने चेतना धर्मको भूला हुवा है और वह चेतनाधर्मभी परवस्तु के निमित्तसे नहीजैसा हो रहा है जैसे कि एक द्रह—जलाशय पाणीसे पूर्ण भरा है उस जलमे तीन मुख्य गुण है—निर्मलता—मधुरता—शीतलता परन्तु जब वह जलाशय सेवालसे छा गया—ढक गया, तब वे गुण वैसे के वैसे न रहे. वे गुण लुप्तसे हो गये. अब पहले जैसी शीतलता न रही, मधुरता न रही और निर्मलता तो बिलकुल ही अदृश्य हो गई. तैसेही जीवके चेतना धर्मको समझना औरभी यह समझा देना ठीक है कि सेवाल बाहरके कुच्छ निमित्त पाकर जलसे ही पैदा होती है और उसी जलकी